Size- 33·5 x 12·1 cm

॥ अथ पद्मपुराणोक्तं कार्तिकमासमाहात्म्यं भाषार्थबोधिनीटीकासमेतम् ॥

...मलाल अग्रवालने बम्बई 'श्रीवेङ्कटेश्वर' छापाखानामें छपाया ॥

पुस्तक मिलनेका ठिकाना–

श्यामलाल अग्रवाल, श्यामकाशी छापाखाना– मथुरा.	खेमराज श्रीकृष्णदास, "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम् प्रेस– मुम्बई.

॥ श्रीगणेशाय नमः ॥ अथ भाषार्थबोधिनी टीका लिख्यत ॥ श्लोकः ॥ ध्यात्वा श्रीगुरुपादपद्ममनिशं नत्वा गिरां देवतां माहात्म्यं खलु कार्तिकस्य निखिलं देशीयया भाषया ॥ भक्तानन्दकरं कथाऽमृतरसास्वादास्पदं शृण्वतां श्रीमत्केशवशर्मणाद्यविवृतं श्रीकृष्ण-भक्तिप्रदम् ॥ १ ॥ नैमिष्यारण्य क्षेत्रमें सूतजी अट्ठासी हजार शौनकादि ऋषियोंसों कहैं हैं कि, जब नारदजी भगवान्का दर्शन करिके चले गये तब सत्यभामा प्रफुल्लितमुख हो लक्ष्मीके पति श्रीवासुदेव भगवान्सों सम्बोधन देके बोलत भई ॥ १ ॥

श्रीगणेशाय नमः ॥ सूत उवाच ॥ श्रियःपतिमथामंत्र्यगतेदेवर्षिसत्तमे ॥ हर्षोत्फुल्लाननासत्यावासुदेवमथाब्रवीत् ॥ १ ॥ सत्योवाच ॥ धन्यास्मिकृतकृत्यास्मिसफलंजीवितंमम ॥ मज्जन्मनोनिदानेचधन्यौतौपितरौमम ॥ २ ॥ यौमांत्रैलोक्यसुभगांजनयामासतुर्ध्रुवम् ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणांवल्लभाऽहंयतस्तव ॥ ३ ॥ यस्मान्मयादिपुरुषःकल्पवृक्षसमन्वितः ॥ यथोक्तविधिनासम्यङ्नारदायसमर्पितः ॥ ४ ॥ यद्वार्त्तामपि जानंतिभूमौसंस्थानजंतवः ॥ सोऽयंकल्पमद्रुमोगेहेममतिष्ठतिसांप्रतम् ॥ ५ ॥

सत्यभामा बोली कि, धन्य हूँ मैं मेरो जन्म सफल है मेरे जन्मके देनेवाले मातापिताहू धन्य हैं जिन्होंने तीनों लोकोंमें सुन्दर मुझको उत्पन्न किया जो मैं सोलह हजार स्त्रियोंमें आपकी प्यारी हूँ ॥ २ ॥ ३ ॥ जासे मोकरिके आदिपुरुष कल्पवृक्षसहित यथोक्तविधिसे नारदमुनिके अर्थ समर्पण किये गये ॥ ४ ॥ जाकी वार्ताको भूमिमें स्थित जीव नहीं जाने है सो यह कल्पवृक्ष मेरे घरमें अब वर्तमान

है ॥ ५ ॥ त्रिलोकीके नाथ श्रीपति जो तुम हो तिनकी मैं अतिप्यारी हूं सो हे मधुसूदन ! याते मैं आपसे कुछ प्रश्न करनेकी इच्छा करती हूं ॥ ६ ॥ जो आप मेरे प्रिय करनहारे हो तो विस्तारसों कार्तिकमाहात्म्य कहो ताको सुनिके फिरि मैंहूँ अपनो हित करू ॥ ७ ॥ और हे देव ! प्रत्येक कल्पमें आपसे मेरो वियोग न होय ॥ ८ ॥ सूतजी बोले कि ऐसे प्यारीके वचन सुनि श्रीकृष्णजी मुसुकुराय सत्य-

त्रैलोक्याधिपतेश्चाहं श्रीपतेरतिवल्लभा ॥ अतोऽहंप्रष्टुमिच्छामिकिंचित्त्वांमधुसूदन ॥ ६ ॥ यदित्वंम त्प्रियकरःकथयस्वात्रविस्तरम् ॥ श्रुत्वातच्चपुनश्चाहंकरोमिहितमात्मनः ॥ ७ ॥ यथाकल्पंत्वयादेववि युक्तास्यांनकर्हिचित् ॥ ८ ॥ सूतउवाच ॥ इतिप्रियावचः श्रुत्वास्मेरास्यः सबलानुजः ॥ सत्याकरंकरे धृत्वाऽगमत्कल्पतरोस्तलम् ॥ निषिध्यानुचरलोकंसविलासः प्रियान्वितः ॥ ९ ॥ प्रहस्यसत्यामामन्त्र्य प्रोवाचजगतांपतिः ॥ तत्प्रीतिपरितोषोत्थलसत्पुलकितांगकः ॥ १० ॥

भामाको हाथ अपनो हाथसों पकरिकें कल्पवृक्षके नीचे जातभय और सेवक लोगनको निषेध करके विलासयुक्त प्रिया समेत बैठे ॥ ९ ॥ ता पीछे जगत्पति श्रीकृष्णजी प्यारीकी प्रीतिसे उत्पन्न हुये आनन्दसे पुलकित हो प्रियाको सम्बोधन दे मुसुकुरायके बोलतभये ॥ १० ॥

श्रीकृष्णजी बोले कि हे प्यारी ! मोकों तासे अधिक और कोई स्त्री प्यारी नहीं है सोलह हजार स्त्रियोंमें तूही प्राणके समान प्यारी है ॥ ११ ॥ तेरे लिये देवताओं समेत इन्द्रसेभी विरोध कीन्हो और तैंने जो याचन कीन्हो सो महा अद्भुत है हे प्यारी ! मोतें श्रवण कर ॥ १२ ॥ सूतजी बोले कि, एक समय भगवान् कृष्ण सत्यभामाका प्रिय करनेकी इच्छा कर गरुडपर चढे हुये इन्द्रके

॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ नमेत्वत्तःप्रियतमा काचिदन्यानितंबिनी ॥ षोडशस्त्रीसहस्राणांप्रियाप्राणसमाह्यसि ॥ ११ ॥ त्वदर्थंदेवराजोऽपिविरुद्धोदैवतैस्सह ॥ त्वयायत्प्रार्थितंकांते शृणुतच्चमहाद्भुतम् ॥ १२ ॥ सूत उवाच॥ एकदाभगवान्कृष्णस्सत्यायाःप्रियकाम्यया ॥ वैनतेयंसमारूढइन्द्रलोकंतदाऽगमत्॥ १३॥ कल्पवृक्षंयाचितवान्सोऽवदन्नददाम्यहम् ॥ वैनतेयस्तदाक्रुद्धस्तदर्थंयुयुधेतदा ॥ १४ ॥ गोलोकेगरुडोगोभिर्युद्धंचैवचकारसः ॥ गरुडस्यतुतुंडेनपुच्छकर्णास्तदाऽपतन् ॥ १५ ॥

लोकको जाते भये ॥ १३ ॥ वहां जायके कल्पवृक्षको मांगते भये तब इन्द्रने कही कि, मैं नहीं देऊंगो तब गरुडजी क्रोधित होवा कल्पवृक्षके लिये युद्ध करतेभये ॥ १४ ॥ और फिरि गरुडजी गोलोकमें गौअनसों युद्ध करते भये तब गरुडजीकी चोंचकी मारसों उनकी पूछ और कान कटिके गिरे ॥ १५ ॥

और रुधिरहू भूमिमें गिरत भयो इन तीनोंसों तीनि वस्तु उत्पन्न भई अर्थात् कानसूं तमाल पूछसूं गोभी और रुधिरसूं मेंहदी भई ॥ १६ ॥ तातें मोक्षकी इच्छावारे पुरुष इनकूं दूरहीसे तज दे हे प्यारी ! तातें इन तीनोंको मनुष्य कबहूँ न सेवन करै ॥ १७ ॥ पीछे गायोंने भी गरुडजीको सगिनसों मारो हे प्यारी ! तब गरुडजीके तीनि पंख धरतीमें गिरे ॥ १८ ॥ उनमें पहिलेसूं

रुधिरञ्चपपातोर्व्यांत्रीणिवस्तून्यतोऽभवन् ॥ कर्णेभ्यश्चतमालंचपुच्छाद्गोभीबभूवह ॥ १६ ॥ रुधिरान्मेहदी जातामोक्षार्थीदूरतस्त्यजेत् ॥ तस्मादेतत्त्रयंचैवनहिसेव्यंनरैः प्रिये ॥ १७ ॥ गावस्तागरुडंशृङ्गैः प्रजह्रुः कुपितास्तदा ॥ गरुत्मतस्त्रयः पक्षाः पृथिव्यामपतन्प्रिये ॥ १८ ॥ पक्षात्प्राथमिकाज्जातोनीलकंठः शुभात्मकः ॥ द्वितीयाच्चमयूरोवैचक्रवाकस्तृतीयकः ॥ १९ ॥ दर्शनाद्वैत्रयाणांतुशुभफलमवाप्नुयात् ॥ तस्मादिदमुपाख्यानंवर्णितंचमयाप्रिये ॥ २० ॥

नीलकंठ उत्पन्न भयो दूसरेसूं मोर तीसरेसूं चकवा चकवी ॥ १९ ॥ इन तीनोंके दर्शनसे शुभ फल मिलै है हे प्यारी ! याते मैंने या उपाख्यानको वर्णन कीनो है ॥ २० ॥

जो फल गरुडजीके दर्शनमें मिलै है वह इस तीनोंके दर्शनमात्रसूं प्राप्त होय है और ता पछि मेरो धाम मिलै है ॥ २१ ॥ हे प्यारी ! जो न देनेयोग्य न करने योग्य और न कहने योग्य सो सब मैं उत्तम बातें करोंगो और तुमसे कहोंगो ॥ २२ ॥ जो तुम्हारे मनमें होय सो सब पूँछो सत्यभामा बोली कि, मैंने पूर्वजन्ममें दान व्रत अथवा तप क्या कीन्हों है ? ॥ २३ ॥ जाते मैं मनुष्यनमें जन्म

सुपर्णदर्शनाच्चैवयत्फलंलभतेनरः ॥ तत्फलंप्राप्नुयात्तेषांदर्शनाद्वैममालयम् ॥ २१ ॥ अदेयमपिवाकार्यमकथ्यमपियत्पुनः ॥ तत्करोमिकथंप्रश्नंकथयामिनमत्प्रिये ॥ २२ ॥ तत्पृच्छसर्वंकथयेयत्तेमनासिवर्तते ॥ सत्योवाच ॥ दानंव्रतंतपोवापिकिंनुपूर्वंमयाकृतम् ॥ २३ ॥ येनाहंमर्त्यजामर्त्यंभवानीताऽभवंकिल ॥ तवांगार्द्धहरानित्यंगरुडासनगामिनी ॥ २४ ॥ इन्द्रादिदेवतावासमगमंयात्वयासह ॥ अतस्त्वांप्रष्टुमिच्छामिकिंकृतंतुमयाशुभम् ॥ २५ ॥

लेके या लोकमें आई और आपकी अर्धांगी हो गरुडपर चार्ढके चलनहारी भई ॥ २४ ॥ और आपके साथ इन्द्र आदि देवताओंके लोकनमें गई याते मैं आपसे पूँछती हू कि, मैंने पूर्वमें कहा सुकृत कियो है ॥ २५ ॥

और अगले जन्ममें मेरो कसा स्वभाव हो और कौनकी पुत्री हों सो सब कहो श्रीभगवान् बोले । क, हे प्यारी ! जो तुमने पूर्व जन्ममें कियो है ताहि मन लगाके सुनो ॥ २६ ॥ जो तुमने पुण्य व्रत और कर्म किये हैं और जाकी तुम कन्या हो सब मैं तुमसे कहूँ हूँ ॥ २७ ॥ पहिले कृतयुगके अंतमें मायापुरी अर्थात् देववनमें वेदवेदांगका पढनेवाला अत्रिगोत्रमें उत्पन्न ब्राह्मणोंमें उत्तम

भवांतरेचाकिंशीलाकावाहंकस्यकन्यका ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ शृणुष्वैकमनाः कांतेयत्कृते पूर्वजन्मनि ॥ २६ ॥ पुण्यव्रतंकृतवतीतत्सर्वंकथयामिते ॥ यत्कर्मतुकृतंपूर्वंयस्यत्वंकन्यकाप्रिये ॥ २७ ॥ आसीत्कृतयुगस्यांतेमायापुर्य्यांद्विजोत्तमः ॥ आत्रेयोदेवशर्मेतिवेदवदांगपारगः ॥ २८ ॥ आतिथेयोऽग्निशुश्रूषीसौरव्रतपरायणः ॥ सूर्यमाराधयन्नित्यंसाक्षात्सूर्यइवापरः ॥ २९ ॥ तस्यातिवयसश्चासीन्नाम्नागुणवतीसुता ॥ अपुत्रःसस्वशिष्यायचन्द्रनाम्नेददौसुताम् ॥ ३० ॥

देवशर्मानाम ब्राह्मण होत भयो ॥ २८ ॥ अभ्यागतोंका सत्कार तथा अग्निहोत्र करनहारो आर सूर्यके व्रतमें तत्पर सदा सूर्यकी सेवा करता हुआ साक्षात् दूसरे सूर्यके समान हो ॥ २९ ॥ वाक वृद्ध अवस्थामें गुणवती नाम कन्या उत्पन्न भई फिर उस पुत्रहीनने पुत्रको विवाह अपने चन्द्रनाम शिष्यके साथ कर दियो ॥ ३० ॥

वाहीको पुत्रके समान मानत भयो और वहू ब्राह्मणकूं पिताके समान जानतयो वे दोनों कभी कुश और समिध लेनेके निमित्त वनको जाते भये ॥ ३१ ॥ और हिमालय पर्वतके वनमें जहां तहां विचरने लगे तब उन दोनोंने आवतो हुओ ॥ ३२ ॥ एक भयावनो राक्षस देखो भयसूं सब अंग व्याकुल होगये और भागनेको भी सामर्थ्य न रही तब यमराजके समान रूपवाले वा राक्षस करि वे मारे

तमेवपुत्रवन्मेनेसचतंपितृवद्दशी ॥ तौकदाचिद्वनंयातौकुशेध्माहरणार्थिनौ ॥ ३१ ॥ हिमाद्रिपादोपवनेचेरतुस्तावितस्ततः ॥ तौतस्मिन्राक्षसंघोरमायांतंसंप्रपश्यतः ॥ ३२ ॥ भयविह्वलसर्वांगावसमर्थौपलायितुम् ॥ निहतौरक्षसातेनकृतांतसमरूपिणा ॥ ३३ ॥ तौतत्क्षेत्रप्रभावेणधर्मशीलतयापुनः ॥ वैकुंठभवनंनीतौमद्गणैर्मत्समीपगैः॥३४॥ यावज्जीवंतुयत्ताभ्यांसूर्य्यपूजादिकंकृतम् ॥ तेनाहंकर्मणाताभ्यांसुप्रीतोह्यभवं किल॥३५॥शैवाःसौराश्चगाणेशावैष्णवाःशक्तिपूजकाः ॥ मामेवप्राप्नुवंतीहवर्षांभः सागरंयथा ॥३६॥

गये ॥ ३३ ॥ ये दोनों वा क्षेत्रके प्रतापसूं और धर्मात्मा होनेसूं मेरे समीपवासी मेरे गणोंकरि वैकुण्ठलोकमें प्राप्त किये गये ॥ ३४ ॥ उन दोनोंने जीतेजी सूर्यकी पूजा आदि करी ता कर्मसूं मैं उन दोनोंपर निश्चय अति प्रसन्न भयो ॥ ३५ ॥ शिव सूय गणेश विष्णु शक्ति अर्यात् देवी इन सब देवताओंके उपासक मोकोही ऐसे प्राप्त होते हैं जैसे वर्षाका जल समुद्रमें पहुँचै है ॥ ३६ ॥

एक मैं क्रिया तथा नामसे पांच प्रकारका अर्थात् शिव सूर्य गणेश विष्णु शक्तिरूपसे होताहूँ जैसे देवदत्त एक पुत्र भ्राता आदि नामोंसे अनेक प्रकारका होता है ॥ ३७ ॥ ता पीछे वे दोनों मेरे भवन अर्थात् वैकुण्ठमें वास करनहारे और विमानमें चलनहारे और सूर्य्यके समान कान्तिवाले मेरे समान रूप हो मेरे निकट स्थित हो दिव्य स्त्री और चन्दनके भोगोंके भोगनवाले भए ॥ ३८ ॥ इति श्रीम-

एकोऽहंपंचधाजातः क्रिययानामभिः किल ॥ देवदत्तोयथाकश्चित्पुत्रभ्रात्रादिनामभिः ॥ ३७ ॥ ततस्तु तौमद्भवनाभिवासिनौविमानयानौरविवर्चसावुभौ ॥ मत्तुल्यरूपौममसन्निधानगौदिव्यांगनाचन्दनभोग भोगिनौ ॥ ३८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्येकृष्णसत्यासंवादे प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥ श्रीकृ ष्णउवाच ॥ ततोगुणवतीश्रुत्वारक्षसानिहतावुभौ ॥ पितृभर्तृजदुःखार्ताकरुणंपर्यदेवयत् ॥ १ ॥

त्पंडितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिकृतायां भाषार्थबोधिन्यां कार्त्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां प्रथमोऽध्यायः ॥ १ ॥
श्रीकृष्णजी बोले तापीछे गुणवती दोनोंको राक्षसकरि मारे गये सुनिके पिता तथा पतिसे उत्पन्न भयो जो दुःख ताते पीडित हो शोकसे रोदन करतीभई ॥ १ ॥

गुणवती बोली कि, हाय स्वामी हाय पिता मोको छोडके मेरे विना कहां गये अनाथ बाला मैं तुम्हारे विना अब क्या करूं ॥ २ ॥
घरमें बैठीभई और कहूँ काममें चतुर नहीं और पतिकरिके दूषित ऐसी मोकूं स्नेहपूर्वक भोजन वस्त्र आदिसे कौन पालन करैगो ॥ ३ ॥
भाग्य सुख आशा और जीवन ये सब जाके नष्ट भये हैं ऐसी मैं कौनकी शरण जाऊं जो मेरे दुःखको दूरि करै ॥ ४ ॥ कहां जाऊं कहां

गुणवत्युवाच ॥ हानाथहापितस्त्यक्त्वागच्छथः क्वमयाविना ॥ बालाहंकिंकरोम्यद्यह्यनाथाभवतोर्विना ॥ २ ॥ कोनुमामास्थितांगेहेभोजनाच्छादनादिभिः ॥ अकिंचित्कुशलांस्नेहात्पालयेत्पतिदूषिताम् ॥३॥ हतभाग्याहतसुखाहताशाहतजीविता ॥ शरणंकंव्रजाम्यद्ययोमेदुःखंप्रमार्जयेत् ॥ ४ ॥ क्वगच्छामिक्व तिष्ठामिकिंकरोमियथाघृणम् ॥ विधात्राहाहताह्म्यद्यकथंजीवामिबालिशा ॥ ५ ॥ श्रीकृष्णउवाच एवं बहुविलप्याथकुररीवभृशातुरा ॥ पपातभूमौविकलांरंभावातहतायथा ॥ ६ ॥

ठहरूं और क्या करूं ! घृणापूर्वक हाय विधाता करि मारी भई बाला मैं कैसे जीऊं ? ॥ ५ ॥ श्रीकृष्ण बोले, बहुत घबराई भई वह ऐसे कुररीके समान बहुत विलाप करिके पवन करि ताडित केलेके समान व्याकुल हो पृथ्वीमें गिरत भई ॥ ६ ॥

वह फिर बहुत देरमें श्वास ले शोकसे अत्यन्त रोदन करि शोकरूपी समुद्रमें डूबी भई दुःखसे पीडित होत भई ॥ ७ ॥ वह गुणवती घरकी सब सामग्री बचके उन दोनोंका परलोकसंबन्धी शुभकर्म शक्तिके अनुसार आलस्यरहित हो करत भई ॥ ८ ॥ और अपने जीते जी शांत हो विष्णुभक्तिमें लगीभई सत्य बोलनहारी शौचयुक्त जितेंद्रिय हो वाही पुरमें वास करती भई ॥ ९ ॥ उस करके

चिरादाश्वस्य साभूमौविलप्यकरुणंबहु ॥ निमग्नाशोकजलधौदुःखार्तासमवर्तत ॥ ७ ॥ सागृहोपस्करान्सर्वान्विक्रीयशुभकर्मततू ॥ तयोश्चक्रेयथाशक्तिपारलौक्यमतंद्रिता ॥ ८ ॥ तस्मिन्नेवपुरे चक्रेवासंप्रभृतिजीविनी ॥ विष्णुभक्तिरताशान्तासत्यशौचाजितेंद्रिया ॥ ९ ॥ व्रतद्वयंतयासम्यगाजन्ममरणात्कृतम् ॥ एकादशीव्रतंसम्यक्सेवनंकार्त्तिकस्य च ॥ १० ॥ एतद्व्रतद्वयंकांतेममातीवप्रियंकरम् ॥ भुक्तिमुक्तिकरंपुण्यंपुत्रसम्पत्तिदायकम् ॥ ११ ॥

जन्मसे लगाके मरण पर्यंत दो व्रत भली भांति किये गये एक तौ एकादशीको व्रत और दूसरो कार्तिक मासको सेवन ॥ १० ॥ श्रीकृष्ण कहैं हैं कि, हे प्यारी ! ये दोनों व्रत मोंको बहुतही प्यारे और भुक्ति अर्थात् भोग और मोक्षके करनहारे और पुण्य तथा पुत्र और सम्पत्तिके देनेहारे हैं ॥ ११ ॥

जो कार्तिकके महीनेमें तुलाराशिके सूर्य्य होनेपर प्रातःकाल स्नान करेंगे वे बडे पापी होनेपरभी मोक्षको प्राप्त होयँगे ॥ १२ ॥
जो मनुष्य कार्त्तिकके महीनेमें स्नान जागरण दीपदान और तुलसीके वनका पालन करेहैं वे मनुष्य विष्णुके स्वरूप हैं ॥ १३ ॥
विष्णुके मंदिरका झारना और स्वस्तिक (सथिया) आदिका अर्पण और विष्णुकी पूजा करै हैं वे जीतेही मुक्त हैं ॥ १४ ॥

कार्तिकेमासियेनित्यंतुलासंस्थेदिवाकरे ॥ प्रातःस्नास्यंतितेमुक्तामहापातकिनोऽपिच ॥ १२ ॥ स्नानंजागरणंदीपंतुलसीवनपालनम् ॥ कार्तिकेमासिकुर्वंतितेनराविष्णुमूर्तयः ॥ १३ ॥ संमार्जनंगृहेविष्णोः स्वस्तिकादिनिवेदनम् ॥ विष्णोः पूजां चयेकुर्युर्जीवन्मुक्तास्तुतेनराः ॥ १४ ॥ इत्थंदिनत्रयमपिकार्तिकेये प्रकुर्वते ॥ देवानामपितेवंद्याः किंयैराजन्मतः कृतम् ॥ १५ ॥ इत्थंगुणवतीसम्यक्प्रत्यब्दंव्रतिनीह्यभूत् ॥ नित्यंविष्णोश्चपूजायांभक्त्यातत्परमानसा ॥ १६ ॥ कदाचिज्जरसासाऽथक्रुशांगीज्वरपीडिता ॥ स्नातुं गंगांगताकांतेकथंचिच्छनकैस्तदा ॥ १७ ॥

ऐसे तीन दिनहू जे कार्तिकमें करैं हैं वे देवताओंकोभी नमस्कार करने योग्य हैं और जिन्होंने जन्मभर किया उनका तो फिर क्या कहना है ॥ १५ ॥ ऐसे गुणवती प्रत्येक वर्षमें व्रत करती भई और नित्य विष्णुकी पूजामें भक्तिसे तत्परमन होत भई ॥ १६ ॥ हे प्यारी ! किसी समय बुढापेसे दुर्बल वह गुणवती ज्वररोगसे पीडित हो कैसेहू हौलेहौले गंगास्नानको जात भई ॥ १७ ॥

जलके भीतर धसतेही कांपने लगी और शीतसे पीडित भई ताही समय वा व्याकुलने आकाशसे उतरतो हुओ विमान देखो ॥ १८ ॥ शंख चक्र गदा पद्म इन आयुधोंसे उपलक्षित विष्णुका रूपधारण करनेहारे ऐसे गण गरुडकी है मूर्ति जामें ऐसी ध्वजाका है चिह्न जामें ऐसे विमानमें चढाय अप्सराओंके समूह करी सेवा करि गई उस गुणवतीको चमर ढोरतेभये वैकुण्ठको लेगये ॥ १९ ॥ २० ॥ ता

यावज्जलांतरगताकंपिताशीतपीडिता ॥ तावत्साविह्वलापश्यद्विमानंयांतमंबरात् ॥ १८ ॥ शंखचक्रगदा पद्मरायुधैरुपलक्षिताः ॥ विष्णुरूपधरास्सम्यग्वैनतेयध्वजांकिते ॥ १९ ॥ आरोहयन्विमानेतामप्सरो गणसेविताम् ॥ चामरैर्वीज्यमानांतांवैकुण्ठमनयन्गणाः ॥ २० ॥ अथसातद्विमानस्थाज्वलदग्निशिखो पमा ॥ कार्त्तिकव्रतपुण्येनमत्सांनिध्यंगताभवत् ॥ २१ ॥ अथब्रह्मादिदेवानांयदाप्रार्थनयाभुवम् ॥ आग तोऽहंगणाः सर्वेयातास्तेऽपि मयासह ॥ २२ ॥ एतेहियादवास्सर्वेमद्गणाएवभामिनि ॥ पितातेदेवश र्माऽभूत्सत्राजिदाभिधोह्यथ ॥ २३ ॥

पीछे जलतीभई अग्निकी ज्वालाके समान विमानमें बैठी भई वह गुणवती कार्त्तिकव्रतके पुण्यसों मेरे समीप आवत भई ॥ २१ ॥ या पीछे ब्रह्मा आदि देवताओंकी प्रार्थनासूं जब मैं पृथिवीमें आयो तब वे सब गणहू मेरे साथ आये ॥ २२ ॥ हे प्यारी ! वे सब यादव मेरे गणही हैं और तुम्हारे पिता देवशर्मा सत्राजित नाम यादव है ॥ २३ ॥

और चन्द्रशर्मा जो पूर्वको तुम्हारो पति हो वह अक्रूर भयो है और तुम कार्त्तिकके स्नानके पुण्यसूं मेरी प्रीतिकी बहुत बढावनहारी वही गुणवती हो ॥ २४ ॥ और मेरे मन्दिरके द्वारपर पहिले जो तुमने तुलसीकी बगीची लगाई थी हे प्यारी कल्याणी ! ताते यह कल्पवृक्ष तुम्हारे आंगनमें स्थित है ॥ २५ ॥ और जो कार्त्तिकके महीनेमें पहले तुमने दीपदान करो हो ताते तुम्हारी देहमें

यश्चन्द्रशर्मासोऽक्रूरस्त्वंसागुणवतीशुभे ॥ कार्तिकस्नानपुण्येन बहुमेप्रीतिदायिनी ॥ २४ ॥ मद्द्वारियत्त्वयापूर्वंतुलसीवाटिकाकृता ॥ तस्मादयंकल्पवृक्षस्तवांगणगतःशुभे ॥ २५ ॥ कार्तिकेदीपदानंचत्वयावैयत्कृतंपुरा ॥ त्वद्देहगेहसंस्थेयंतस्माल्लक्ष्मीःस्थिराऽभवत् ॥ २६ ॥ यच्चव्रतादिकंसर्वंविष्णवेभर्तृरूपिणे ॥ निवेदितवतीतस्मान्ममभार्यात्वमागता ॥ २७ ॥ आजन्ममरणात्पूर्वंयत्कृतंकार्तिकव्रतम् ॥ कदाचिदपितेनत्वंमद्वियोगनयास्यसि ॥ २८ ॥ एवंयेकार्तिकेमासेनराव्रतपरायणाः ॥ मत्सान्निध्यंगतास्तेऽपिप्रीतिदात्वंयथामम ॥ २९ ॥

और घरमें स्थित लक्ष्मी स्थिर होके वास करै है ॥ २६ ॥ और जो तुम व्रत आदि सब स्वामीरूप विष्णुको अर्पण करती भई ताते तुम मेरे स्त्रीभावको प्राप्त भई ॥ २७ ॥ जन्मसो लगाके मरणलौं जो तुमने कार्त्तिकको व्रत कीन्हों ताते मेरे विछोहको कबहूं नहीं प्राप्त होउगी ॥ २८ ॥ ऐसे जो मनुष्य कार्त्तिकके महीनेमें व्रत करनेमें तत्पर होयँगे वे मेरे समीप जाके तेरे समान प्रीति

देनेवाले होंगे ॥ २९ ॥ और यज्ञ दान व्रत तथा तप करनेहारे मनुष्य कार्त्तिकव्रतकी एक कला अर्थात् षोडशवें भागको भी नहीं प्राप्त होतेहैं ॥ ३० ॥ सूतजी बोले, भुवनाधिपति जो श्रीकृष्ण हैं तिनसूं इस प्रकार सुनिके पूर्व जन्ममें भयो जो पुण्य है ताके वैभवसों हर्षित भई सत्यभामा विश्वके स्वामी और तीनों लोकके कारणरूप श्रीकृष्णजीकूं प्रणाम करि वचन बोली ॥ ३१ ॥

यज्ञदानव्रततपःकारिणोमानवाश्चये ॥ कार्तिकव्रतपुण्यस्यनाप्नुवंतिकलामपि ॥ ३० ॥ सूतउवाच ॥ इत्थंनिशम्यभुवनाधिपतेस्तदानींप्राग्जन्मपुण्यभववैभवजातहर्षा ॥ विश्वेश्वरंत्रिभुवनैकनिदानभूतंकृष्णं प्रणम्यवचनंनिजगादसत्या ॥ ३१ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्ये श्रीकृष्णसत्यासंवादे द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ सत्यभामोवाच ॥ सर्वेऽपिकालावयवास्तवकालस्वरूपिणः ॥ समानास्तुकथंनाथ मासानां कार्त्तिकोवरः ॥ १ ॥

इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायां कार्त्तिकमाहात्म्यटीकायांभाषार्थबोधिनीसमाख्यायां द्वितीयोऽध्यायः ॥ २ ॥ सत्यभामा बोली कालरूप जो आप हैं तिनके सम्पूर्ण कालके अवयव अर्थात् भाग समान हैं तो हे नाथ ! कार्त्तिकको महीना सब महीनोंसे कैसे श्रेष्ठ भयो ? ॥ १ ॥

हे महाराज ! देवतानके स्वामी ! सब तिथियोंमें एकादशी और महीनोंमें कार्तिक आपको कैसे प्रिय भयो ताको कारण कहिये ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण बोले, हे प्यारी ! तैंने भलो प्रश्न कियो एकाग्रचित्त होके वेनके पुत्र पृथु और महर्षि नारदका संवाद सुन ॥ ३ ॥ ऐसेही पहले पृथुराजकरि पूछेगये सर्वज्ञ नारद मुनिने कार्तिकमासकी अधिकताको कारण वर्णन कियो ॥ ४ ॥ नारद बोले पहिले

एकादशीतिथीनांचमासानांकार्तिकः प्रियः ॥ कथंतदेवदेवेशकारणं तत्रकथ्यताम् ॥ २ ॥ श्रीकृष्ण उवाच ॥ साधुपृष्टंत्वयाकांतेशृणुष्वैकाग्रमानसा ॥ पृथोर्वैन्यस्यसंवादंमहर्षेर्नारदस्यच ॥ ३ ॥ एवमेव-पुरापृष्टोनारदः पृथुनाप्रिये ॥ उवाचकार्तिकाधिक्येकारणंसर्वविन्मुनिः ॥ ४ ॥ नारउवाच ॥ शंखना-माऽभवत्पूर्वमसुरःसागरात्मजः ॥ त्रिलोकीमथनेशक्तोमहाबलपराक्रमः ॥ ५ ॥ जित्वादेवांस्तिरस्कृत्य स्वर्लोकात्समहासुरः ॥ इंद्रादिलोकपालानामधिकारांस्तथाऽहरत् ॥ ६ ॥ तद्भयात्कंपितादेवाः सुवर्णाद्रि गुहांगताः ॥ न्यवसन्बहुवर्षाणिसावरोधाः सबांधवाः ॥ ७ ॥

शंख नाम समुद्रका पुत्र असुर महाबली और तीनों लोकके मथनमें समर्थ होतभया ॥ ५ ॥ वह महासुर स्वर्गसे तिरस्कार करि सबों-को जीति इंद्रादिक लोकपालोंके अधिकारको आपही हरि लेतभयो ॥ ६॥ वाके भयसों काँपतेहुए देवता सुमेरुपर्वतकी गुफामें जाके स्त्रियों और भाई बंधुओं समेत बहुत वर्षोंतक वास करतेभये ॥ ७ ॥

जब देवता सुमेरु पर्वतकी गुफारूपी गढमें स्थित हो आसन बांधके बैठे तब दैत्य विचार करत भयो ॥ ८ ॥ छीनिलियै गये हैं अधिकार जिनके ऐसे देवता यद्यपि मोकरिके जीते गये तौ हू बल करिके युक्त दिखाई देत हैं यामें मोकूं कहा करनो चाहिये ॥ ९ ॥ अब मैंने जानो कि देवता वेदमंत्रनको बलकरिके युक्त हैं ताते मैं उनके वेदमंत्रनको हरिलेउंगो ताते वो सब बलहीन हो जाँय ॥ १० ॥

सुवर्णाद्रिगुहादुर्गसंस्थितास्त्रिदशायदा ॥ बद्धासनाबभूवुस्तेतदादैत्योव्यचिंतयत् ॥ ८ ॥ हृताधिकारास्त्रिदशामयायद्यपिनिर्जिताः ॥ लक्ष्यंतेबलयुक्तास्तेकरणीयंमयाऽत्रकिम् ॥ ९ ॥ अद्यज्ञातंमयादेवावेदमंत्रबलान्विताः ॥ तान्हरिष्येततः सर्वेबलहीनाभवंतिवै ॥ १० ॥ नारदउवाच ॥ इतिमत्वाततोदैत्योविष्णुमालक्ष्यनिद्रितम् ॥ सत्यलोकाज्जहाराशुवेदानादिस्वयंभुवः ॥ ११ ॥ नीतास्तुतेनतेवेदास्तद्भयात्तुनिराक्रमम् ॥ तोयानिविविशुर्यज्ञमंत्राबीजसमन्विताः ॥ १२ ॥ तान्मार्गमाणःशंखोऽपिसमुद्रांतर्गतोभ्रमत् ॥ नदर्दशतदादैत्यः क्वचिदेकत्रसंस्थितान् ॥ १३ ॥

नारद बोले, तब दैत्य ऐसे मानिके विष्णुको सोते हुए देखि आदि जो स्वयंभू ब्रह्मा है तिनके लोकसूं वेदनकूं शीघ्र हर लेत भयो ॥ ११ ॥ वा दैत्य करके लिये गये वेद उसके भयसे निकले और यज्ञके मंत्र और बीजमंत्रोंसहित जलमें प्रवेश करतभये ॥ १२ ॥ उनको ढुंढतो हुओ शंखनाम दैत्यहू समुद्रके भीतर जाके भ्रमण करत भयो तब दैत्यने कहूं एक स्थानमें स्थित वेद न देखे ॥ १३ ॥

या पीछे ब्रह्मा सब देवतानसहित पूजाकी सामग्री ले वैकुंठभवनमें प्राप्त हो विष्णुकी शरणमें जात भये ॥ १४ ॥ वहां सब देवता उनके जगानेके लिये गाने बजाने आदि काम करतभये और वारंवार गंध धूप दीप आदि देतभये ॥ १५ ॥ या पीछे उनकी भक्तिसूं प्रसन्न कियेगये भगवान् जागतभये और वहां देवता हजार सूर्यके समान है कांति जिनकी ऐसे विष्णुको देखतेभये ॥१६॥ तब देवता षोडश

अथब्रह्मासुरैःसार्द्धंविष्णुंशरणमन्वगात् ॥ पूजोपहारमादायवैकुंठभवनंगतः ॥ १४ ॥ तत्रतस्यप्रबोधाय गीतवाद्यादिकाः क्रियाः ॥ चक्रुर्देवास्तदागंधधूपदीपान्मुहुर्मुहुः ॥ १५ ॥ अथप्रबुद्धोभगवांस्तद्भक्तिपरितोषितः ॥ ददृशुस्तेसुरास्तत्रसहस्रार्कसमद्युतिम् ॥ १६ ॥ उपचारैः षोडशभिःसंपूज्यत्रिदशास्तदा ॥ दंडवत्पतिताभूमौतानुवाचाथमाधवः ॥ १७ ॥ विष्णुरुवाच ॥ वरदोऽहंसुरगणा गीतवाद्यादिमंगलैः ॥ मनोभिलषितान्कामान्सर्वानेवददामिवः ॥ १८ ॥ इषस्यशुक्लैकादश्यांयावदुद्बोधिनीभवेत् ॥ निशातुर्ययामशेषेगीतवाद्यादिमंगलम् ॥ १९ ॥

उपचार अर्थात् धूप दीप नैवेद्य आदिसे पूजन करि पृथिवीमें दण्डवत् प्रणाम करत भये ॥१७॥ विष्णु बोले, हे देवताओ ! वर देनहारो मैं तुम्हारे गाने बजाने आदि मंगलोंसे प्रसन्न हो तुम्हारे मनोवांछित सबही कामोंको देताहूं ॥ १८ ॥ क्वारकी शुक्ल पक्षकी एकादशीसे ले जबताई देवउठनी एकादशी आवै तबताई पहरभर रात्रि रहेसे प्रातःकालतक जे मनुष्य गाना बजाना आदि मंगल करैं हैं ॥ १९॥

नित्य तुम्हारे समान करै हैं वे प्रीतिके उपजावनवाले हैं और सदा मेरी समीपताको प्राप्त होयहैं ॥ २० ॥ पाद्य अर्घ्य आचमनीय आदि जो तुम करिकै लायो वाके गुणोंको अंत नहीं है और वही तुम्हारे सुखको कारण होयगो ॥ २१ ॥ शंखासुर करके आहरण किये गये सब वेद जलमें स्थित हैं उन्हे मैं शंखासुरको मारिके लातो हौं ॥ २२ ॥ अबसे लगाके प्रतिवर्ष मंत्र बीज

कुर्वंतिनित्यमनुजायेभवद्भिर्यथाकृतम् ॥ तेमत्प्रीतिकरानित्यंमत्सांनिध्यंव्रजंतिहि ॥ २० ॥ पाद्यार्घ्याचमनीयादियद्भवद्भिरुपाहृतम् ॥ तदनंतगुणंयस्माज्जातंवःसुखकारणम् ॥ २१ ॥ वेदाः शंखाहृताः सर्वेतिष्ठंत्युदकसस्थिताः ॥ तानानयाम्यहंदेवाहत्वासागरनंदनम् ॥ २२ ॥ अद्यप्रभृतिवेदास्तुमंत्रबीजसमन्विताः ॥ प्रत्यब्दंकार्तिकेमासिविश्रमंत्यप्सुसर्वदा ॥२३॥ मत्स्यरूपोऽहमपिचभवामिजलमध्यगः ॥ भवंतोऽपिमयासार्द्धमायांतुससुनीश्वराः ॥ २४ ॥ लोकेऽस्मिन्येप्रकुर्वंतिप्रातःस्नानंनरोत्तमाः तेसर्वयज्ञावभृथैःसुस्नाताः स्युर्नसंशयः ॥ २५ ॥

समेत सब वेद कार्तिकके महीने भारि सदा जलमें विश्राम लेत हैं ॥ २३ ॥ जलके मध्यमें जानेवालो मैं भी मछलीका रूप धारण करौं हौं तुमही सब मुनीश्वरोंसमेत मेरे साथ आगमन करो ॥ २४ ॥ या लोकमें जे श्रेष्ठ मनुष्य प्रातःकाल स्नान करे हैं वे सब यज्ञांत स्नानके फलको निःसंदेह प्राप्त होयगे ॥ २५ ॥

जे मनुष्य कार्त्तिकके महीनेमें भली भांति सदा व्रत करैं हैं हे इन्द्र! वे देहांत समय तुम करिके मेरे लोकमें पहुँचाने योग्य हैं ॥ २६ ॥
हे यम! तुमकरिके उनकी विघ्नोंसे भलीभांति सदा रक्षा करनी चाहिये और हे वरुण ! तुम करिके उनको पुत्र पौत्र आदि
संतति देनी चाहिये ॥ २७ ॥ धनाध्यक्ष अर्थात् कुबेर! तुम करिके मेरी आज्ञासे उनके सदा धनकी वृद्धि करनी चाहिये जाते मेरे

येकार्त्तिकव्रतंसम्यक्कुर्वंतिमनुजाःसदा ॥ तेदेहांतेत्वयाशक्रप्राप्यामद्भवनंसदा॥२६॥विघ्नेभ्योरक्षणंतेषां
सम्यक्कार्यंत्वयायम ॥ देयात्वयाचवरुणपुत्रपौत्रादिसंततिः ॥ २७ ॥ धनवृद्धिर्धनाध्यक्षत्वयाकार्याममा
ज्ञया ॥ ममरूपधरःसाक्षाज्जीवन्मुक्तोभवेद्यतः ॥ २८ ॥ आजन्ममरणाद्येनकृतमेतद्व्रतोत्तमम् ॥ यथोक्त
विधिनासम्यक्समान्योभवतामपि ॥ २९ ॥ एकादश्यांयतश्चाहंभवद्भिः प्रतिबोधितः अतश्चैषातिथि
र्मान्यासतीवप्रीतिदामम ॥ ३० ॥

रूपको धारण करनहारे साक्षात् जीवन्मुक्त होय हैं ॥ २८ ॥ जा करिके जन्मसे लगाई मरणताईं कहीभई विधिके अनुसार भली भांति
यह उत्तम व्रत कियोगयो है वह तुम्हारे हूं मान्य है ॥ २९ ॥ जाते तुमकरिके मैं एकादशीके दिन जगायो गयो याते मोको अतिप्रीति
देनहारी यह तिथि बहुतही मानने योग्य है ॥ ३० ॥

जैसे भली भांतिसे करेभये ये दोनों व्रत मेरी समीपताको प्राप्त करै हैं तैसे आर नहीं हे देवताओ.! अन्य तीर्थ तप यज्ञ स्वर्गलोकके देनहारे हैं वैकुंठके नहीं ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारद बोले, ऐसे कहिके मछलीके समान रूप धारण करनहारे भगवान्

व्रतद्वयंसम्यगिदंनरैःकृतंसान्निध्यकृन्मेनतथान्यदस्ति ॥ नान्यानितीर्थानितपांसियज्ञाः स्वर्लोकदास्ते नयथासुरोत्तमाः ॥ ३१ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्येतृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाभगवान्विष्णुःशफरतुल्यरूपधृक् ॥ ययौतदांजलौविंध्यवासिनः कश्यपस्यसः ॥१॥ सतंकमंडलौक्षिप्रंकृपयाक्षितवान्मुनिः ॥ तावत्सनममौतत्रततःकूपेऽप्यवेशयत् ॥२॥ तथापिनममौतावत्कासारे प्रापयत्सतम् ॥ एवं ससागरेमत्स्यः क्षिप्तोऽसावभ्यवर्द्धत ॥ ३ ॥

विष्णु उस समय विंध्याचलके वासी कश्यप मुनिके अंजलीमें आवत भये ॥ १ ॥ उन मुनीश्वरने उस मछलीको कृपाकरिके कमंडलुमें डारली जब वह कमंडलुमें न समाई तब वाको कुआंमें डारत भये ॥ २ ॥ जब वह कुआंमें भी न समाई तब तालाबमें पहुँचावत भय ऐसे समुद्रमें डारो भयो वह मत्स्य वृद्धिको प्राप्त हात भयो ॥ ३ ॥

ता पीछे मत्स्यरूप धारण करनेहारे विष्णुने वा शखासुरको वध कियो और वाको अपने हाथमें धारण करिके बदरीवनको जातभये ॥ ४ ॥ और वहां सब ऋषियोंको बुलाके प्रभु यह आज्ञा देते भये विष्णु बोले जलके भीतर वेद बिखरिगयेहैं उनको तुम ढूंढो ॥ ५ ॥ और बहुत शीघ्रतायुक्त हो रहस्यसमेत वेदनको जलके मध्यसों लाओ तवताईं मैं देवताओंके समूहसमेत प्रयागम ठहरों हों ॥ ६ ॥

ततोऽवधीत्सतंशंखंविष्णुर्मत्स्यस्वरूपधृक् ॥ अथतंस्वकरेधृत्वाबदरीवनमभ्यगात् ॥ ४ ॥ तत्राहूयऋषी न्सर्वानिदमाज्ञापयद्विभुः ॥ श्रीविष्णुरुवाच ॥ जलांतरेविशीर्णास्तुवेदास्तान्परिमार्गथ ॥ ५ ॥ आनयध्वं त्वरायुक्ताःसरहस्याञ्जलांतरात् ॥ तावत्प्रयागेतिष्ठामिदेवतागणसंयुतः ॥ ६ ॥ नारदउवाच ॥ ततस्तैः सर्वमुनिभिस्तपोबलसमन्वितैः ॥ उद्धृताश्चसबीजास्तेवेदायज्ञसमन्विताः ॥ ७ ॥ तेषुयावन्मितंयेनलब्धं तावद्धितस्यतत् ॥ ससएवऋषिर्जातस्तदाप्रभृतिपार्थिव ॥ ८ ॥ अथसर्वेऽपिसंगम्यप्रयागंमुनयोययुः ॥ विष्णवेसविधात्रेतेलब्धान्वेदान्न्यवेदयन् ॥ ९ ॥

नारद बोले, ता पीछे बलसूं युक्त सब मुनीश्वरोंकरि बीज और यज्ञमंत्रोंसहित सब वेद निकालेगये ॥ ७ ॥ उनमेंसे जितना जिसने पाया उतना उसके नामसे प्रसिद्ध हुआ. हे राजा ! तबसे लगाके उस भागका वही ऋषि भया ॥ ८ ॥ इस पीछे सब मुनीश्वर मिलिके प्रयागको गये और पाये भये वेदनको विधाता सहित जो भगवान् हैं तिनके अर्थ निवेदन करत भये ॥ ९ ॥

संपूर्ण वेदनको पाके ब्रह्मा आनंदयुक्त हो ऋषिगणों समेत अश्वमेध यज्ञ करत भये ॥ १० ॥ यज्ञके अंतमें देवता गंधर्व यक्ष सर्प और गुह्यक ये सब भूमिमें दडवत् प्रणाम करि शीघ्रही प्रार्थना करत भये ॥ ११ ॥ देवता बोले, हे देवनके देव ! जगत्के स्वामी प्रभु हमारी प्रार्थनाको सुनिये हमारो यह आनंदको समय है तासों आप वर देनेवाले होउ ॥ १२॥ इन ब्रह्माने नष्ट भये वेदनको या स्थान-

लब्ध्वावेदान्समग्रांस्तुब्रह्माहर्षसमान्वितः ॥ अयजद्वाजिमेधेनदेवर्षिगणसंयुतः ॥ १०॥ यज्ञांतेदेवगन्धर्वयक्षपन्नगगुह्यकाः ॥ निपत्यदंडवद्भूमौविज्ञप्तिंचक्रुरंजसा ॥ ११ ॥ देवाऊचुः ॥ देवदेवजगन्नाथविज्ञप्तिंशृणुनःप्रभो॥हर्षकालोऽयमस्माकंतस्मात्त्वंवरदोभव ॥ १२ ॥ स्थानेस्मिन्गृहिणोवेदान्नष्टान्प्रापपुनस्त्वयम् ॥ यज्ञभागान्वयंप्राप्तास्त्वत्प्रसादाद्रमापते ॥ १३ ॥ स्थानमेतदतिश्रेष्ठंपृथिव्यांपुण्यवर्द्धनम् ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदंचास्तुप्रसादाद्भवतस्सदा ॥ १४ ॥ कालोऽप्ययंमहापुण्योब्रह्मघ्नादिविशुद्धिकृत् ॥ दत्ताक्षयकरश्चास्तुवरमेवंददस्वनः ॥ १५ ॥

में फिरि पायो और हे भगवन् ! हमने आपके प्रसादते यज्ञके भाग पाये ॥ १३ ॥ ताते हे महाराज ! आपके प्रसादसे यह स्थान अर्थात् प्रयाग पृथ्वीमें अतिश्रेष्ठ पुण्यको बढानेवालो और भुक्ति मुक्तिको देनेवालो हो ॥१४ ॥ और यह कालहू महापवित्र ब्रह्महत्या आदिको शुद्ध करनेवालो और दियेको अक्षय करनेवालो होय यह वर हमको दीजिये ॥ १५ ॥

विष्णु बोले, हे देवताओ ! जो तुमने कहो यह मोको भी सम्मत है तथास्तु अर्थात् मैंने तुमको वांछित वर दियो ब्रह्मक्षेत्रनाम
से प्रसिद्ध यह स्थान सबको सुलभ होयगो ॥ १६ ॥ सूर्यवंशमें उत्पन्न राजा भगीरथ यहां गंगा लावेंगे वह गङ्गा यहां सूर्यकी कन्या
जो कालिन्दी अर्थात् यमुनाजी तिससे संयोगको प्राप्त होयगी ॥ १७ ॥ ब्रह्मादि तुम सब मेरे साथ वास करो यह तीर्थ तीर्थराज

श्रीविष्णुरुवाच ॥ ममाप्येतन्मतंदेवायद्भवद्भिरुदाहृतम् ॥ तथास्तुसुलभंत्वेतद्ब्रह्मक्षेत्रमितिप्रथम् ॥ १६ ॥
सूर्यवंशोद्भवोराजागंगामत्रानयिष्यति ॥ सासूर्यकन्ययाचात्रकालिंद्यायोगमेष्यति ॥ १७ ॥ यूयंचसर्वे
ब्रह्माद्यानिवसंतुमयासह ॥ तीर्थराजेतिविख्यातंतीर्थमेतद्भविष्यति ॥ १८ ॥ दानंतपोव्रतंहोमोजपपूजा
दिकाःक्रियाः ॥ अनंतफलदाःसंतुमत्सान्निध्यकराः सदा ॥ १९ ॥ ब्रह्महत्यादिपापानिबहुजन्मकृतान्य
पि ॥ दर्शनादस्यतीर्थस्यविनाशंयांतुतत्क्षणात् ॥ २० ॥ देहत्यागंचयेधीराःकुर्वंतिममसन्निधौ ॥ मत्तनुप्रवि
शंत्यन्तेनपुनर्जन्मिनोनराः ॥ २१ ॥

या नामसों प्रसिद्ध होयगो ॥ १८ ॥ और या क्षेत्रमें कियो हुओ दान तप व्रत होम जप पूजा आदि क्रिया अनन्तफलकी देनहारी
और मेरी समीपताकी करनहारी होयगी ॥ १९ ॥ और अनेक जन्मोंके करेभये ब्रह्महत्या आदि पाप या तीर्थक दर्शनसे तत्काल नाश-
को प्राप्त होंयगे ॥ २० ॥ जे धीर पुरुष मेरी सन्निधि अर्थात् मेरे समीप देह छोडेंगे तो फिर ना जन्म लेनेवाले वे मनुष्य मेरे शरीरमें

प्रवेश करेंगे अर्थात् मुक्ति पावेंगे ॥ २१ ॥ जे यहां आपके पितरोंके निमित्त श्राद्ध करेंगे तिनके सब पितृगण मेरी सरूपताको प्राप्त होंयगे ॥ २२ ॥ यह कालहू मनुष्यांक महापुण्यके फलको देनहारो होयगो और मकरके सूर्य आनेपर स्नान करनहारे पुरुषनके पापनको नाश करेगो ॥ २३ ॥ माघमासमें मकरके सूर्य आनेपर प्रातःकाल स्नान करनहारे मनुष्यनके दर्शनहीसो पाप ऐसे दूर

पितॄनुद्दिश्ययेश्राद्धंकुर्वंत्यत्रसमागताः ॥ तेषांपितृगणाःसर्वेयांतिमत्समरूपताम् ॥ २२ ॥ कालोप्प्ये षमहापुण्यफलदस्तुसदानॄणाम् ॥ सूर्येमकरगेप्राप्तेस्नायिनांपापनाशनम् ॥ २३ ॥ मकरस्थेरवौमाघेप्रात स्नानंप्रकुर्वताम् ॥ दर्शनादेवपापानि यांतिसूर्याद्यथातमः ॥२४॥ सलोकत्वंसमीपत्वंसारूप्यंचत्रयंक्रमात् ॥ नृणांददाम्यहंस्नानैर्माघेमकरगेरवौ ॥ २५॥ यूयंमुनीश्वरास्सर्वेशृणुध्वंवचनंमम ॥ बदरीवनमध्येऽहंसदा तिष्ठामिसर्वगः ॥२६॥ अन्यत्रयच्छतैर्वर्षैस्तपसाप्राप्यतेफलम् ॥ तत्रतद्दिवसैकेनभवद्भिःप्राप्यतेसदा ॥२७॥

होजायँगे जैसे सूर्यसे अंधकार दूर होजायहै ॥ २४ ॥ माघम मकरके सूर्य आनेपर स्नान करनहारे मनुष्यनको मैं सालोक्य सामीप्य और सारूप्य ये तनि प्रकारकी मुक्ति क्रमसे देतो हूँ ॥ २५ ॥ हे मुनीश्वरो ! तुम सब मेरा वचन सुनो सर्वव्यापी मैं बदरीवनके मध्य सदा रहतो हूँ ॥ २६ ॥ और स्थानमें सौ वर्ष तप करनेसे जो फल प्राप्त होताहै वह तुम्हें वहां एक दिनमें सदा प्राप्त होयगो ॥ २७ ॥

जे श्रेष्ठ मनुष्य उस स्थानका दर्शन करतेहैं वे जीवन्मुक्त हैं और सदा उनमें पाप नहीं रहैहै ॥ २८ ॥ सूत बोले, देवनके देव श्रीभगवान् ऐसे देवतानसों कहिके ब्रह्मासमेत वहीं अंतर्धान होतभये और इंद्रादिक सब देवताभी अंशोंसे वहां स्थित होके अंतर्धान होगये ॥ ॥ २९ ॥ जो उत्तम शुद्धचित्त हो या कथाको सुनैगो या सुनावैगो वह तीर्थराज अर्थात् प्रयाग और बद्रीवनमें जाके जो फल मिलै

स्थानस्यदर्शनंतस्ययेकुर्वंतिनरोत्तमाः ॥ जीवन्मुक्ताः सदातेषुपापंनैवावतिष्ठते ॥ २८ ॥ सूतउवाच ॥ एवंदेवान्देवदेवस्तदुक्त्वातत्रैवांतर्द्धानमागात्सवेधाः ॥ देवास्सर्वेऽप्यंशकैस्तत्रातिष्ठन्तोंर्द्धानंप्रापुरिंद्राद यस्ते ॥ २९ ॥ इमांकथांयःशृणुयान्नरोत्तमो यःश्रावयेद्वापिविशुद्धचेताः ॥ सतीर्थराजंबदरीवनंयद्गत्वा फलं यत्समवाप्नुयाच्च ॥ ३० ॥ इति श्रीपद्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्येचतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ पृथुरुवाच ॥ महत्फलं त्वयाप्रोक्तंमुनेकार्तिकमाघयोः ॥ तयोः स्नानविधिंसम्यङ्नियमानपिनोवद ॥ १ ॥ उद्याप नविधिं चैवयथावद्वक्तुमर्हसि ॥ २ ॥

है उसे पावैगो ॥ ३० ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयपण्डितकेशवप्रसादविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनी-समाख्यायां चतुर्थोऽध्यायः ॥ ४ ॥ पृथु बोले, हे मुनीश्वर महाराज ! तुमने कार्तिक और माघको बहुत बडो फल कहो अब उन दोनोंके स्नानकी विधि और नियमोंको हमसे भली भांतिसे कहो ॥ १ ॥ और उद्यापन विधिको यथावत् कहनेके योग्य हो ॥ २ ॥

नारद बोले हे राजा! तुम विष्णुके अंशसे उत्पन्न हो तुमको कुछ अज्ञात नहीं है तोहू पै कहतो जो मैं हूँ ताते भली भाँति नियमोंको सुनो ॥३॥ आश्विन महीनेकी जो शुक्ल पक्षकी एकादशी होय है वा एकादशीसों कार्तिकव्रतको आरंभ आलस्यरहित होके करै ॥४॥ चतुर्थांश अर्थात् प्रहररात्रि रहेसे प्रति सदा उठे और प्रथम ग्रामसे उत्तर दिशाको जलका पात्र लेके जाय ॥५॥ दिनमें संध्याके समय

नारदउवाच ॥ त्वंविष्णोरंशसम्भूतोनाज्ञातंविद्यतेतव ॥ तथापि वदनः सम्यङ्नियमानपिवैशृणु ॥ ३ ॥ आश्विनस्यतुमासस्ययाशुक्लैकादशीभवेत् ॥ कार्तिकस्यव्रतारंभंवस्यांकुर्यादतंद्रितः ॥ ४ ॥ रात्र्यांतुर्यांशशेषायामुत्तिष्ठेत्सर्वदाव्रती ॥ प्रागुदीचींव्रजेद्ग्रामाद्बहिःसोदकभाजनः ॥ ५ ॥ दिवासंध्यासुकर्णस्थब्रह्मसूत्रउदङ्मुखः ॥ अन्तर्द्धायतृणैर्भूमिंशिरःप्रावृत्यवाससा ॥ ६ ॥ वक्त्रंनियम्ययत्नेनष्ठीवनोच्छ्वासवर्जितः ॥ कुर्यान्मूत्रपुरीषेचरात्रौचेद्दक्षिणामुखः ॥ ७ ॥ गृहीतशिश्नश्चोत्थायमृद्भिरभ्युक्षितैर्जलैः ॥ गंधलेपक्षयकरंशौचंकुर्यादतंद्रितः ॥ ८ ॥

कानपर यज्ञोपवीत स्थापित करि उत्तरको मुख करिके भूमिमें तृण बिछावै और शिरको वस्त्रसे ढांकिले ॥६॥ मुखको यत्नसे बंध करिके थूकने और श्वास लेनेसे रहित हो मूत्र तथा मलका त्याग करै जो रात्रिमें करे तो दक्षिण दिशाकी ओर मुख करै ॥७॥ शिश्न इंद्रीको हाथमें ग्रहण किये हुये उठके मिट्टी लगाके धोवै बास और लेपके दूर करनहारे शौचको आलस्यरहित होके करै ॥८॥

लिंगमें एकवार मृत्तिका लगावै और तीन बार गुदामें फिर दोनोंमें दो बार लगावै पांच बार गुदामें और दशदश बार एक २ हाथमें फिरि दोनों मिलाके सात बार मृत्तिका लगावै ॥ ९ ॥ यह गृहस्थको शौच है और इससे दूनों ब्रह्मचारीको कहो है वानप्रस्थको तिगुनो और संन्यासियोंको चौगुनो कहो है ॥ १० ॥ जो शौच दिनमें कहोहै वाको आधो रातिमें कहो है वाको आधो रोगीको कहोहै

एकालिंगेगुदेतिस्रउभयोर्मृद्द्वयंस्मृतम् ॥ पंचापानेदशैकस्मिन्नुभयोस्सप्तमृत्तिकाः ॥९॥ एतच्छौचंगृहस्थस्यद्विगुणंब्रह्मचारिणः ॥ वानप्रस्थस्यत्रिगुणंयतीनां च चतुर्गुणम् ॥ यद्दिवाविहितंशौचंतदर्द्धंनिशिकीर्तितम् ॥ १० ॥ तदर्द्धमातुरेप्रोक्तमातुरस्यार्द्धमध्वनि ॥ शौचकर्मविहीनस्यसकलानिष्फलाःक्रियाः॥ ११॥ मुखशुद्धिविहीनस्यनमंत्राःफलदाः स्मृताः ॥ दंतजिह्वाविशुद्धिंचततःकुर्यात्प्रयत्नतः ॥१२॥ आयुर्बलंयशोवर्चःप्रजाःपशुवसूनिच ॥ ब्रह्मप्रज्ञांचमेधांचत्वन्नोदेहिवनस्पते ॥ १३ ॥

और रोगीको आधो मार्गमें कहो है शौचकर्मसे रहित मनुष्यकी क्रिया निष्फल होतीहै ॥ ११ ॥ और मुखशुद्धिसे रहित मनुष्यको मंत्र फलदायक नहीं होतेहैं ता पीछे दांतनकी और जीभकी शुद्धिहू यत्नसों करै ॥ १२ ॥ दंतधावनके निमित्त वृक्षकी प्रार्थना आयु, बल, यश, तेज, संतति, द्रव्य, वेदपठन, बुद्धि हे वनस्पति ! तू हमको दे ॥ १३ ॥

या मंत्रको पढके बारह अंगुल प्रमाण गुलरी आदि दूधके वृक्षकी दँतूनी लेकर दाँत शुद्ध करै और क्षयाह तथा व्रतके दिन न करै॥ १४॥ और पडवा अमावस नवमी छठि रविवारको तथा चंद्र और सूर्यके ग्रहणमें दंतधावन न करै ॥ १५ ॥ कांटोंका वृक्ष कपास सम्हालु पीपल बड अरंड तथा दुर्गंधयुक्त वृक्ष ये सब दंतधावनमें वर्जित हैं अर्थात् इनकी दँतून न करै ॥ १६ ॥ ता पीछे प्रसन्न मन हो पुष्प

इतिमंत्रसमुच्चार्यद्वादशांगुलमानतः ॥ समिधाक्षीरवृक्षस्यक्षयाहोपोषणंविना ॥ १४ ॥ प्रतिपद्दर्शनवमीषष्ठीचार्कदिनेतथा ॥ चंद्रसूर्योपरागेचनकुर्याद्दंतधावनम् ॥१५॥ कंटकीवृक्षकार्पासीनिर्गुंडीब्रह्मवृक्षकान्॥ वटैरंडविगंधाद्यान्वर्जयेद्दंतधावने ॥ १६॥ ततोविष्णोःशिवस्यापिगृहंगच्छेत्प्रसन्नधीः ॥ पुष्पंगंधान्सतांबूलान्गृहीत्वाभक्तितत्परः ॥ १७ ॥ तत्रदेवस्यपाद्यादीनुपचारान्पृथक्पृथक् ॥ कृत्वास्तुत्वापुनर्नत्वा कुर्याद्गीतादिमंगलम् ॥ १८॥ तालवेणुमृदंगादिध्वनियुक्तान्सनर्तकान् ॥ पुष्पैर्गंधैस्सतांबूलैर्गायकानपिचार्चयेत् ॥ १९ ॥

गंध तांबूल लेके भक्तियुक्त हो विष्णु अथवा शिवके मंदिरमें गमन करै ॥ १७॥ वहां देवके पाद्यार्घ्य आदि उपचारोंको पृथक् २ करिकै और फिरि स्तुति तथा नमस्कार करिकै गीतआदि मंगल करै ॥ १८॥ ताल वेणु मृदंग आदिकी ध्वनिसे युक्त नाचनेवालों समेत गवैयोंको फूल चंदन पान आदिसे सत्कार करै ॥ १९॥

देवालयमें गानमें तत्पर होनेसे वे विष्णुका स्वरूप है सत्ययुग आदिमें तप यज्ञदान जयद्धरु जे भगवान् हैं तीन्हें प्रसन्न करते हैं ॥ ॥ २० ॥ कलियुगमें नहीं अब कलियुगमें केवल गानहीकी प्रशंसा है हे राजा ! मैंने भगवान्से पूछो कि, हे देवेश ! तुम कहां वास करो हो ? तब उन्होंने उत्तर दियो ॥२१॥ हे नारद ! न तौ मैं वैकुण्ठमें बसता हूँ और न योगियोंके हृदयमें मेरे भक्त जहां गान करें

देवालयेगानपरायतस्तेविष्णुमूर्तयः ॥तपांसियज्ञदानानिकृतादिषुजगद्धरोः ॥२०॥ तुष्टिदानिकलौयस्मा द्गत्तयागानंप्रशस्यते॥कत्वंवसासिदेवेशमयापृष्टस्तुपार्थिव॥२१॥ नाहंवसामिवैकुण्ठेयोगिनांहृदये न च ॥ मद्भक्तायत्रगायंति तत्रतिष्ठामिनारद॥२२॥तेषांपूजादिकंगंधपुष्पाद्यैःक्रियतेनरैः ॥ तेनप्रीतिंपरांयामि नतथामत्प्रपूजनात् ॥२३॥ मत्पुराणकथांश्रुत्वामद्भक्तानांचगायनम् ॥ निंदंतियेनरामूढास्ते मे द्वेष्या भवंतिहि ॥ २४॥

हैं वहां मैं स्थित रहताहूँ ॥ २२ ॥ उन मेरे भक्तोंकी गन्ध पुष्पआदिसे जो पूजा मनुष्योंकरि की जाय है वातें जैसो मैं प्रसन्न होउहो तसा अपने पूजनतें नहीं ॥२३॥ मेरे पुराणकी कथाको और मेरे भक्तोंका गाना सुनिके जो मूढ मनुष्य निंदा करे हैं वे निश्चय करि मेरे द्वेषके योग्य होय हैं ॥ सिरस धतूरा कुरैया सेमल अकौआ अमलतास इनके फूलोंसे तथा अक्षतोंसे विष्णु नहीं पूजने

योग्य हैं अर्थात् इन सबोंको विष्णुकी मूर्तिपर न चढावै ॥ २४ ॥ २५ ॥ गुडहर कुंद सिरस जूही चमेली और केतकीके फूलोंसे शिवकी पूजा न करें ॥ २६ ॥ लक्ष्मीकी वांछा रखनेवाला मनुष्य तुलसीदलसों गणेशकी पूजा न करै और दूबसे दुर्गाकी पूजा न करै तैसेही अगस्त्यके फूलनसों सूर्यकी पूजा न करै ॥ २७ ॥ पूजामें जिन देवताओंके लिये जो सदा उत्तम हैं उनसे या प्रकार पूजा विधि

शिरीषोन्मत्तगिरिजामल्लिकाशाल्मलीभवैः ॥ अर्कजैः कर्णिकारैश्चविष्णुर्नार्च्यस्तथाक्षतैः ॥ २५ ॥ जपाकुंदशिरीषैश्चयूथिकामालतीभवैः ॥ केतकीभवपुष्पैश्चनैवार्च्यःशंकरस्तथा ॥ २६ ॥ गणेशंतुलसीपत्रैर्नदुर्गां चैवदूर्वया ॥ मुनिपुष्पैस्तथासूर्यंलक्ष्मीकामोनचार्चयेत् ॥ २७ ॥ येभ्योयानिप्रशस्तानि पूजायांसर्वदेवतु ॥ एवंपूजाविधिंकृत्वादेवदेवंक्षमापयेत ॥ २८ ॥ मंत्रहीनंक्रियाहीनंभक्तिहीनंसुरेश्वर ॥ यत्पूजितंमयादेवपरिपूर्णंतदस्तुमे ॥ २९ ॥

करके देवदेव जो भगवान् हैं तिनसूं क्षमा करावै ॥ २८ ॥ हे सुरेश्वर ! अर्थात् देवताओंके स्वामी जो मैंने मन्त्रहीन क्रियाहीन और भक्तिहीन पूजन कीन्हो हे देव सो मेरो पूर्ण होय ॥ २९ ॥

ता पीछे प्रदक्षिण करिके दंडवत् प्रणाम करि फिरि भगवान्‌सों क्षमापन कराय गाना आदि समाप्त करै ॥ ३० ॥ जे मनुष्य कार्तिककी रात्रिमें विष्णुको तथा शिवको भली भाँति पूजन करेंगे वे मनुष्य अपने पुरुषों समेत पापरहित हो वैकुण्ठ भवनको जायँगे ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपण्डितकेशवप्रसादविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमा-

ततः प्रदक्षिणंकृत्वादंडवत्प्रणिपत्यच ॥ पुनःक्षमाप्यदेवेशंगायनाद्यंसमापयेत् ॥ ३० ॥ विष्णोःशिवस्यापिचपूजनंयेकुर्वंतिसम्यङ्ङ्निशिकार्तिकस्य ॥ निर्धूतपापाःसहपूर्वजैस्तेप्रयांतिविष्णोर्भवनंमनुष्याः ॥ ॥ ३१ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्येपंचमोऽध्यायः ॥५॥ नारदउवाच ॥ नाडीद्वयावशिष्टायां रात्र्यां गच्छेज्जलाशयम् ॥तिलदर्भाक्षतैःपुष्पैःगंधाद्यैः सहितःशुचिः ॥ १ ॥ मानुषेदेवखातेचनद्यामथच संगमे ॥ क्रमाद्दशगुणंस्नानंतीर्थेतद्द्विगुणंस्मृतम् ॥ २ ॥

प्त्यायां पंचमोऽध्यायः ॥ ५ ॥ नारद बोले, दो घडी राति रहे तिल कुश अक्षत फूल चंदन आदि लेके शुद्ध हो जलाशय अर्थात् नदी तडाग आदिक समीप स्नानके लिये जाय ॥ १ ॥ मनुष्यरचित और देवरचित नदीमें अथवा संगममें स्नानका क्रमसे दशगुण फल है और तीर्थमें उससे दुगुना फल कहा है ॥ २ ॥

विष्णुका स्मरण करिकै फिर स्नानका संकल्प करै फिरि तीर्थ आदिकोंके और देवताओंके अर्थ क्रमसे अर्घ्यआदिका दान करै ॥ ॥ ३ ॥ अर्घ्यमंत्र । कमलनाभ जो भगवान् हैं तिनको नमस्कार है और जलशायी जो भगवान् हैं तिनको नमस्कार है हे हृषीकेश ! तुमको नमस्कार है मेरे अर्घ्यको ग्रहण करो तुमको नमस्कार है ॥ ४ ॥ वैकुण्ठमें प्रयागमें तैसेही बदरिकाश्रममें जहां विष्णु गये

विष्णुंस्मृत्वाततःकुर्यात्संकल्पंस्नानस्यतु ॥ तीर्थादिदेवताभ्यश्चक्रमादर्घ्यादिदापयेत् ॥३॥ अर्घ्यमंत्रः ॥
नमःकमलनाभाय नमस्तेजलशायिने ॥ नमस्तेऽस्तुहृषीकेशगृहाणार्घ्यंनमोऽस्तुते ॥ ४ ॥ वैकुण्ठेचप्र
यागे च तथाबदरिकाश्रमे ॥ यतोविष्णुर्विचक्रमेत्रेधाचनिदधेपदम् ॥ ५ ॥ अतोदेवाअवंतुनोयतोविष्णु
र्विचक्रमे ॥ तैरेवसहितस्सम्यङ्मुनिवेदमखान्वितैः ॥ ६ ॥ कार्त्तिकेऽहं करिष्यामिप्रातःस्नानंजनार्दन ॥
प्रीत्यर्थंतवदेवेशदामोदरयथाविधि ॥ ७ ॥

और तीन प्रकारसे पद स्थापित कियो ॥ ५ ॥ इससे मुनि वेद और यज्ञ इन सबोंकरके सहित जहां विष्णुने तीनि प्रकारसे स्थान कियो वहां देवता मेरी रक्षा करै ॥ ६ ॥ हे जनार्दन ! हे देवदेवेश ! हे दामोदर ! मैं तुम्हारी प्रसन्नताके लिये कार्तिकमें विधिपूर्वक प्रातःकाल स्नान करौंगो ॥ ७ ॥

देवेश जो भगवान् हैं तिनको ध्यान और नमस्कार करि या जलमें स्नान करनेको उद्यत हौं हे दामोदर ! तुम्हारे प्रसादसें मेरो पाप नाश होय ॥ ८ अर्घ्यमंत्र ॥ हे हरि ! कार्तिक महीनेमें विधिपूर्वक नहायोहुओ जो मैं व्रती हौं ता करिकै दिये भये अर्घ्य को राधा सहित ग्रहण कीजिये ॥ ९ ॥ हे दनुजेन्द्रनिषूदन अर्थात् हिरण्यकशिपुके वध करनहारे ! पापके नाश करनेवाले कार्तिक-

ध्यात्वानत्वाचदेवेशंजलेऽस्मिन्स्नातुमुद्यतः ॥ तवप्रसादात्पापंमेदामोदरविनश्यतु ॥ ८ ॥ अर्घ्यमंत्रः ॥ व्रतिनः कार्तिकेमासिस्नातस्यविधिवन्मम ॥ गृहाणार्घ्यंमयादत्तंराधयासहितोहरे ॥ ९ ॥ नित्येनैमित्तिकेकृष्णकार्तिकेपापनाशने ॥ गृहाणार्घ्यंमयादत्तंदनुजेन्द्रनिषूदन ॥ १० ॥ स्मृत्वाभागीरथींविष्णुंशिवं सूर्यंजलेविशेत् ॥ नाभिमात्रेजलेतिष्ठन्व्रतीस्नायाद्यथाविधि ॥ ११ ॥ तिलामलकचूर्णेनगृहीस्नानंसमाचरेत् ॥ विधवास्त्रीयतीनान्तुतुलसीमूलमृत्स्नया ॥ १२ ॥

के महीनेमें नित्य तथा नैमित्तिक कर्ममें मुझकरिके दिये अर्घ्यको ग्रहण कीजिये ॥ १० ॥ व्रती पुरुष गंगा विष्णु शिव तथा सूर्यका स्मरण करिके जलमें प्रवेश करै फिरि नाभिपर्यंत जलमें स्थित हो विधिपूर्वक स्नान करै ॥ ११ ॥ गृहस्थ तिल और आमलोंका चूर्ण लगाके स्नान करै और विधवा स्त्री तथा संन्यासियोंको तुलसीकी जडकी मिट्टी लगाके स्नान करनो कह्योहै ॥ १२ ॥

सप्तमी अमावस नवमी दूज दशमी और तेरसि इन तिथियोंमें आमले और तिल लगाके स्नान न करै ॥ १३ ॥ पहिले मलका स्नान करै तिस पछि मंत्रोंसे स्नान करै स्त्री आर शूद्रोंको वेदोक्तमन्त्रोंसे स्नान नहीं कहाहै वे पुराणके मंत्रनसों करैं ॥ १४ ॥ स्नानके मंत्र ॥ जो भक्तोंको आनंद देनहारे भगवान् देवताओंके कार्यके निमित्त रूप धारण करतभय सब पापोंके नाश करनहारे वे

सप्तमीदर्शेनवमीद्वितीयादशमीषुच ॥ त्रयोदश्यांनचस्नायाद्धात्रीफलतिलैःसह ॥ १३ ॥ आदौकुर्या न्मलस्नानंमंत्रस्नानंततःपरम् ॥ स्त्रीशूद्राणांनवेदोक्तैर्मंत्रैस्तेषांपुराणजैः ॥ १४ ॥ स्नानमंत्रः ॥ त्रिधाभूद्देवकार्यार्थं यःपुराभक्तभावनः ॥ सविष्णुःसर्वपापघ्नःपुनातुकृपयात्रमाम् ॥ १५ ॥ विष्णोराज्ञाम नुप्राप्यकार्तिकव्रतकारकान् ॥ रक्षंतिदेवास्तेसर्वेमांपुनंतुसवासवाः ॥ १६ ॥ वेदमंत्राःसबीजाश्चसरहस्या मखान्विताः ॥ कश्यपाद्याश्चमुनयोमांपुनंतुसदेवताः ॥ १७ ॥ गंगाद्यास्सरितःसर्वास्तीर्थानि जलदा नदाः ॥ ससप्तसागराः सर्वेमांपुनतुजलाशयाः ॥ १८ ॥

भगवान् कृपा करिके मोको पवित्र करै ॥ १५ ॥ विष्णुकी आज्ञा पाके कार्तिकव्रत करनहारेनकी सब देवता रक्षा करै हैं वे सब देवता इंद्रसहित मेरी रक्षा करै ॥ १६ ॥ बीज रहस्य और यज्ञसहित वेद मंत्र और देवताओंसमेत कश्यपआदिमुनि मुझे पवित्र करैं ॥ १७ ॥ गंगा आदिक सब नदी और तीर्थ और जलके देनहारे नद सातों समुद्रोंसमेत ये सब जलाशय मोकूं पवित्र करैं ॥ १८ ॥

अदिति आदि पतिव्रता यक्ष सिद्ध सर्प और तीनों लोककी औषधी और पर्वत मेरी रक्षा करैं ॥ १९ ॥ व्रती मनुष्य इन मंत्रनसों स्नान करिके हाथमें पवित्र धारण करि देव ऋषि मनुष्य पितृ इन सबको विधिपूर्वक तर्पण करै ॥ २० ॥ कार्तिकमासमें पितरोंके तर्पणमें जितने तिल होय हैं उतनेही वर्षतक पितर स्वर्गमें वास करें ॥ २१ ॥ ता पीछे व्रती मनुष्य जलसे बाहर निकलके

पतिव्रतास्त्वदित्याद्यायक्षास्सिद्धाःसपन्नगाः ॥ ओषध्यःपर्वताश्चापिमांपुनतुत्रिलोकजाः ॥ १९ ॥ एभिर्मंत्रैर्व्रतीस्नात्वाहस्तन्यस्तपवित्रकः ॥ देवर्षीन्मानवान्पितृंस्तर्पयेच्चयथाविधि ॥ २० ॥ यावंतः कार्तिकेमासिवर्तन्तेपितृतर्पणे ॥ तिलास्तत्संख्यकाब्दानिपितरःस्वर्गवासिनः ॥ २१ ॥ ततोजलाद्विनिष्क्रम्यशुचिवस्त्रावृतो व्रती ॥ प्रातःकालोदितंकर्मसमाप्यार्चेद्धरिंपुनः ॥ २२ ॥ तीर्थानि देवान्संस्मृत्य पुनरर्घ्यंप्रदापयेत् ॥ गंधपुष्पफलैर्युक्तंभक्त्याततपरमानसः ॥२३ ॥ अर्घ्यमंत्रः ॥ व्रतिनःकार्त्तिकेमासिस्नातस्यविधिवन्मम ॥ गृहाणार्घ्यं मयादत्तंराधयासहितोहरे ॥ २४ ॥

शुद्ध वस्त्र धारण करि प्रातः कालमें कहे हुये कर्मोंको समाप्त करि फिरि हरिको पूजन करे ॥ २२ ॥ तीर्थोंको और देवताओंको स्मरण करि भक्तिमें तत्पर मन हो चन्दन फूलोंकरि युक्त अर्घ्यदान करे ॥ २३ ॥ व्रती और कार्तिकमासमें विधिपूर्वक नहायो हुओ जो मैं हूँ ताकरिकै दिये हुये अर्घ्यको हे हरि! राधा सहित तुम ग्रहण कीजिये ॥ २४ ॥

तिसके पछि चन्दन फूल तथा पानोंसे वेदपाठी ब्राह्मणोंकी भक्तिसे पूजा करै और वारंवार नमस्कार करै ॥ २५ ॥ ब्राह्मणोंके दाहिने चरणमें तीर्थ वास करैहैं और वेद उनके मुखमें स्थित हैं और सब अंगोंमें देवता रहे हैं या कारण उनकी पूजा करनेसों मैं पूजित होऊंहूँ ॥ २६ ॥ पृथिवीमें ब्राह्मण अव्यक्तरूप विष्णुके स्वरूप हैं या कारणसे कल्याण चाहनेवाले पुरुष करिके वे अपमान

ततश्चब्राह्मणान्भक्त्यापूजयेद्वेदपारगान् ॥ गंधैःपुष्पैःसतांबूलैःप्रणमेच्चपुनःपुनः ॥२५॥ तीर्थानिदक्षिणे पादेवेदास्तन्मुखमाश्रिताः सर्वांगेष्वाश्रितादेवाः पूजितोऽस्मितदर्चया ॥ २६ ॥ अव्यक्तरूपिणोविष्णोः स्वरूपं ब्राह्मणाभुवि ॥ नावमांन्यानोविरोध्याः कदापिशुभमिच्छता ॥ २७ ॥ ततोहरिप्रियांदेवींतुलसी मर्चयेद्व्रती ॥ प्रदक्षिणांनमस्कारान्कुर्यादेकाग्रमानसः ॥ २८ ॥ देवैस्त्वंनिर्मितापूर्वमर्चितासिमुनीश्वरैः॥ नमोनमस्तेतुलसि पापंहर हरिप्रिये ॥ २९ ॥

करने योग्य नहीं हैं और न कदापि विरोध करने योग्य हैं॥२८॥ देवताओंकारि करिके तू पहिले निर्मित की गई और मुनीश्वरोंकरिके पूजी गई है हे तुलसी ! तोको वारंवार नमस्कार है हे हरिकी प्यारी ! मेरे पापनको दूरि करो ॥ २९ ॥

तापीछे स्थिर मन हो पुराणसंबंधिनी हरिकी कथाको सुनि भक्तियुक्त व्रती मनुष्य फिरि उन ब्राह्मणनको पूजन करै ॥ ३० ॥ ऐसे पहिले कहा हुई सब विधिको जो भक्तिमान् मनुष्य भलीभाँति करै है वह विष्णुकी सलोकताको प्राप्त होय है ॥ ३१ ॥ रोगनको दूर करनेहारो और पापनको नाशक उत्तम बुद्धिको देनहारो और पुत्र धन आदिको साधक तथा मुक्तिको कारणरूप ऐसे हरिके प्यारे

ततो हरिकथां श्रुत्वा पौराणीं स्थिरमानसः ॥ पुनस्तान्ब्राह्मणांश्चैव पूजयेद्भक्तिमान्व्रती ॥ ३० ॥ एवं सर्वविधिं सम्यक्पूर्वोक्तं भक्तिमान्नरः ॥ करोति यः स लभते नारायणसलोकताम् ॥ ३१ ॥ रोगापहं पातकनाशकृत् परं सुबुद्धिदं पुत्रधनादिसाधकम् ॥ मुक्तेर्निदानं नहि कार्तिकव्रताद्विष्णुप्रियादन्यदिहास्ति शोभनम् ॥ ३२ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ नारद उवाच ॥ कार्तिकव्रतिनां पुंसां नियमा ये प्रकीर्तिताः ॥ तान्शृणुष्व महाराज कथ्यमानान्समासतः ॥ १ ॥

जो कार्तिक व्रत है ताको छोडके और दूसरो नहीं है ॥ ३२ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्म्माद्विवेदिविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां षष्ठोऽध्यायः ॥ ६ ॥ नारद बोले हे महाराज ! कार्तिकको व्रत करनहारे पुरुषनके जे नियम कहे हैं उनको संक्षेपसों सुनो ॥ १ ॥

सब प्रकारके भोग्य वस्तु मांस सहत राइ और उन्मादक वस्तु इन सबनको कार्तिकव्रत करनहारे पुरुष न खाय ॥ २ ॥ परायो अन्न दूसरेसे द्रोह करना तैसेही तीर्थ विना परदेशको जाना इन सबनको कार्तिकव्रत करनेवालो सदा छोडदे ॥ ३ ॥ देवता वेद ब्राह्मण गुरु गोव्रती स्त्री राजा इन सबनकी तथा बडेनकी निन्दाको कार्तिकव्रत करनवाले मनुष्य छाडदे ॥४ ॥ द्विदल कहिये चणा मटर आदि

सर्वामिषाणिमांसंचक्षौद्रंसौवीरकंतथा ॥ राजिकोन्मादकंचापिनैवद्यात्कार्त्तिकव्रती ॥ २ ॥ परान्नचपरद्रोहंपरदेशागमंतथा ॥ तीर्थंविनासदैवेहवर्जयेत्कार्तिकव्रती ॥ ३ ॥ देववेदद्विजातीनांगुरुगोव्रतिनां तथा ॥ स्त्रीराजमहतांनिन्दांवर्जयेत्कार्त्तिकव्रती ॥४॥ द्विदलंचतिलंतैलंपक्कान्नंमूल्यदूषितम् ॥ भावदुष्टंशब्ददुष्टंवर्जयेत्कार्त्तिकव्रती ॥ ५ ॥ प्राण्यंगमामिषंचूर्णफलंजंबीरमामिषम् ॥ धान्येमसूरिका प्रोक्ता अन्नं पर्युषितंतथा ॥ ६ ॥

तिलका तेल मोल लियाहुआ पक्वान्न भावसे दूषित तथा शब्दसे दूषित इन सबोंको कार्तिकव्रत करनेवालो वर्जित करै ॥५॥ प्राणी-के अंगका मांस चूना जंभीरीका फल और अन्नोंमें मसूर मांसके समान कहे हैं तसही बुसा हुआ अन्न इन सबको कार्तिकव्रतवालो न खाय ॥ ६ ॥

बकरी गौ भैंसके दूधसे भिन्न दूध आदि, ब्राह्मणके बेचे हुए सब रस तसेही भूमिमें उत्पन्न नोन इन सबोंको कार्तिकका व्रती छोडदे क्योंकि ये भी मांसके तुल्य हैं ॥ ७ ॥ तांबेके पात्रमें धरो हुओ पंचगव्य और छोटी तलैयामें भरोहुओ जल और अपने लिये सिद्ध कियो हुओ अन्न पंडितों करि मांसके समान कहो गयो है ॥ ८ ॥ ब्रह्मचर्य रहना भूमिमें सोना पत्रावलीमें भोजन चौथे

अजागोमहिषीक्षीरादन्यद्दुग्धाद्यमामिषम् ॥ द्विजक्रीतारसाः सर्वे लवणंभूमिजंतथा ॥ ७ ॥ ताम्रस्थितं पंचगव्यंजलंपल्वलसंस्थितम् ॥ आत्मार्थंपाचितंचान्नमा मिषत्तत्स्मृतं बुधैः ॥ ८ ॥ ब्रह्मचर्यमधश्शय्या पत्रावल्यांचभोजनम् ॥ चतुर्थयामेभुंजानःकुर्यादेवंसदाव्रती ॥ ९ ॥ नरकस्यचतुर्दश्यांतैलाभ्यंगंचका रयेत् ॥ अन्यत्रकार्तिकस्नायीतैलाभ्यंगंविवर्जयेत् ॥ १० ॥ अलाबुंचापिवृंताकं कूष्मांडंबृहतीफलम् ॥ व लिंगंचकपित्थंचवर्जयेद्वैष्णवोव्रती ॥ ११ ॥ रजस्वलांत्यजेन्म्लेच्छपतितव्रतकैस्तथा ॥ द्विजद्विड्वेद बाह्यैश्चनवदेत्कार्तिकव्रती ॥ १२ ॥

प्रहर भोजन इस प्रकार कार्तिकव्रती सदा करे ॥ ९ ॥ कार्तिकस्नान करनेवाला नरकचतुर्दशीको तेल लगावे और दिनोंमें तेल लगाना वर्जित करे ॥ १० ॥ लौकी बैंगन धुला कुम्हडा बृहतीफल कलीन्दा कैथका फल इनको कार्तिकव्रत करनेवाला वर्जित करे ॥ ११ ॥ रजस्वला स्त्रीका त्याग करे और म्लेच्छ पतित करनेवाले तथा ब्राह्मणनके द्वेषी और वेदसे बाहर चलने-

वाले इन सबोंसे कार्तिकव्रत करनेवाला बात न करै ॥ १२ ॥ इन पूर्व श्लोकनमें कहेहुये और कागोंकरि देखे हुये अन्नको तथा सूतकके अन्नको और दो बार पकाये हुये अन्नको और जलेहुएको कार्तिक व्रत करनेवाला न खाय ॥ १३ ॥ व्रत करनेवाला सब व्रतोंमेंभी सदा वर्जित करै और अपनी शक्तिसे विष्णुकी प्रसन्नताके लिये कृच्छ्रादिक व्रतोंकोभी करै ॥ १४ ॥ क्रमसे कुम्हडा

एभिर्दृष्टंचकाकैश्चसूतकान्नंचयद्भवेत् ॥ द्विःपाचितंचदग्धान्नंनैवाद्यात्कार्तिकव्रती ॥ १३ ॥ एतानिवर्जयेन्नित्यंव्रतीसर्वव्रतेष्वपि ॥ कृच्छ्रादींश्चप्रकुर्वीतस्वशक्त्याविष्णुतुष्टये ॥ १४ ॥ क्रमात्कूष्मांडबृहतीतरुणीमूलकंतथा ॥ श्रीफलंचकलिंगंचफलंधात्रीभवंतथा ॥१५॥ नारिकेलमलाबुंचपटोलंबदरीफलम् ॥ चर्मवृंताकलवलीशाकंतुलसिजंतथा ॥ १६ ॥ शाकान्येतानिवर्ज्यानिक्रमात्प्रतिपदादिषु ॥ धात्रीफलंरवौतद्वद्वर्जयेत्सर्वदाव्रती ॥ १७ ॥ एभ्योऽन्यद्वर्जयेत्किंचिद्विष्णुव्रतपरायणः ॥ तत्पुनर्ब्राह्मणेदत्त्वाभक्षयेत्सर्वदाव्रती ॥ १८ ॥

बृहतीफल तरुणीशाक मूली बेल कलींदा तैसेही आमला नारियल लौकी परवल बेर मूरी बैंगन लवलीशाक तथा तुलसी शाक ये शाक क्रमसे प्रातिपदा आदि तिथियोंमें वर्जित हैं तैसेही रविवारको आमलेके व्रती सदा त्याग करै ॥ १५ ॥ १६ ॥ १७ ॥ इन वस्तुओंके सिवाय और वस्तुओंका जो व्रती त्याग करै तो उन्हें ब्राह्मणके लिये देके फिरि सदा भोग लगावै ॥ १८ ॥

व्रत करनेवालो मनुष्य माघमेंहू ऐसेही नियम करै और उससेभी प्रबोधिनी एकादशीमें कहेभये हरिके जागरणको करै ॥ १९ ॥ कही भई विधिके अनुसार कार्त्तिकको व्रत करनेवालो मनुष्यको देखि यमदूत ऐसे भागिजायहै जैसे सिंहसे पीडित हाथी भागि जाय है ॥ ॥ २० ॥ विष्णुको व्रत करनेवालो एक श्रेष्ठ है और सौ यज्ञनसों यजन करनेवालो श्रेष्ठ नहीं है काहेसे कि, यज्ञनको करनेवालो

एवमेवहिमाघेचकुर्य्याच्च नियमान्व्रती ॥ हरेश्चजागरंतत्रप्रबोधोक्तंचकारयेत् ॥ १९ ॥ यथोक्तकारिणंदृष्ट्वाकार्त्तिकव्रतिनंनरम् ॥ यमदूताःपलायंतेगजाःसिंहार्दिताइव ॥ २० ॥ वरंविष्णुव्रतीह्येकोनयज्ञशतयाजकः ॥ यज्ञकृत्प्राप्नुयात्स्वर्गं वैकुंठंकार्त्तिकव्रती ॥ २१ ॥ भुक्तिमुक्तिप्रदानीहयानिक्षेत्राणिभूतले ॥ वसंति तानितद्देहेकार्त्तिकव्रतकारिणः ॥ २२ ॥ कार्त्तिकव्रतिनःपुंसोविष्णुवाक्यप्रणोदिताः ॥ रक्षांकुर्वंति शक्राद्या राजानंकिंकरायथा ॥ २३ ॥

स्वर्गको जाय है और कार्त्तिकव्रत करनहारो वैकुंठको जायहै ॥ २१ ॥ इस पृथ्वीमें भुक्ति और मुक्तिको देनेहारे जितने तीर्थ हैं वे सब कार्त्तिकव्रत करनहारे मनुष्यकी देहमें निवास करैं हैं ॥ २२ ॥ विष्णुके वाक्यसे प्रेरणा किये गये इन्द्रादिक देवता कार्त्तिकव्रत करनेवालेकी ऐसी रक्षा करते हैं जैसे सेवक अपने राजाकी रक्षा करते हैं ॥ २३ ॥

विष्णुव्रतको करनेवाला जहां पूजित हो स्थित रहताहै वहां यह भूत पिशाच आदि निश्चय कारि नहीं रहैं हैं ॥ २४ ॥ कहीहुई विधिके अनुसार कार्त्तिक व्रत करनेवाले मनुष्यके पुण्यको चतुर्मुख ब्रह्माभी कहनेको समर्थ नहीं है ॥ २५ ॥ जो मनुष्य विष्णुका प्यारा सम्पूर्ण पापोंका नाश करनहारा और अच्छे पुत्र पौत्र तथा धनधान्यकी वृद्धि करनहारा ऐसा जो कार्त्तिकका व्रत है ताही जो मनुष्य

विष्णुव्रतकरोनित्यंयत्रतिष्ठतिपूजितः ॥ ग्रहभूतपिशाचाद्यानैवतिष्ठंतितत्रवै ॥ २४ ॥ कार्त्तिकव्रतिनः पुण्यं यथोक्तव्रतकारिणः ॥ नसमर्थोभवेद्वक्तुंब्रह्मापिहिचतुर्मुखः ॥ २५ ॥ विष्णुव्रतंसकलकल्मनाशनंचसत्पुत्रपौत्रधनधान्यविवृद्धिकारि ॥ ऊर्जव्रतंसनियमंकुरुतेमनुष्यःकिंतस्यतीर्थपरिशीलनसेवयाच ॥ २६ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेकार्त्तिकमाहात्म्येसप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ नारदउवाच ॥ अथोर्ज्जव्रतिनः सम्यगुद्यापनविधिंनृप ॥ तंशृणुष्वमयाख्यातंसविधानंसमासतः ॥ १ ॥

नियमसूं करे है ताकूं तीर्थनकी यात्रा और सेवासूं कहा प्रयोजन है ॥ २६ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसाद-शर्मद्विवेदिविरचितायां कार्त्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां सप्तमोऽध्यायः ॥ ७ ॥ नारद बोले, हे राजा ! यापीछे अब मैं कार्त्तिकव्रत करनेहारेकूं उद्यापनकी विधि भली भांतिसूं कहूंहूं ताहि तुम विधानसहित संक्षेपसूं सुनो ॥ १ ॥

व्रत पूर्ण होनेको जो फल है ताके लिये और विष्णुभगवान्‌की प्रसन्नताके लिये कार्तिकशुक्ल चतुर्दशीके दिन व्रतको उद्यापन करै ॥ २ ॥ तुलसीके ऊपर तोरणयुक्त चारिद्वारनको फूल और चमरोंसे शोभित ऐसो सुन्दर मंडप बनावे ॥ ३ ॥ और उसके चारों द्वारनपर मृत्तिकाके बने भये पुण्यशील सुशील जय विजय इन चारों विष्णुके द्वारपालनकी पूजा करै ॥ ४ ॥ और तुलसीके मूलके

ऊर्ज्जशुक्लचतुर्दश्यांकुर्यादुद्यापनंव्रती ॥ व्रतपूर्तिफलार्थंचविष्णुप्रीत्यर्थमेवच ॥ २ ॥ तुलस्याउपरिष्टात्तुकुर्यान्मंडपिकांशुभाम्॥सतोरणांचतुर्द्वारांपुष्पचामरशोभिताम् ॥ ३ ॥ द्वारेषुद्वारपालांश्चपूजयेन्मृन्मयान्पृथक्॥ पुण्यशीलंसुशीलंचजयंविजयमेवच॥४॥तुलसीमूलदेशेचसर्वतोभद्रमुत्तमम्॥चतुर्भिर्वर्णकैः सम्यक्छोभाढ्यंसमलंकृतम् ॥ ५ ॥ तस्योपरिष्टात्कलशंपंचरत्नसमन्वितम्॥ महाफलेनसंयुक्तंशुभंतत्र निधायच ॥ ६ ॥ पूजयेत्तत्रदेवेशंशंखचक्रगदाधरम् ॥ कौशेयपीतवसनंयुक्तंजलधिकन्यया॥ ७ ॥

समीप चारों ओर रंगोंसे भली भाँति शोभायुक्त अच्छे प्रकार अलंकृत उत्तम सर्वतोभद्रचक्र बनावे ॥ ५ ॥ ताके ऊपर पंचरत्न करिके युक्त और श्रीफलसे शोभित शुभ कलश स्थापन करै ॥ ६ ॥ फिर वा कलशपर शंख गदाको धारण किये हुये और पीले रेशमी वस्त्रोंको पहिरेहुये लक्ष्मीसहित जो देवदेवेश भगवान् विष्णु हैं तिनकी पूजा करै ॥ ७ ॥

व्रती पुरुष मंडलमें इन्द्रादिलोकपालनकी पूजा करै द्वादशीको भगवान् जागे और त्रयोदशीको देवताओंकारि देखेगये और चतुर्दशीको पूजन कियेगये ताते या चतुर्दशी तिथिको शांत तथा सावधान मन हो भक्तिसे व्रत करै ॥ ८ ॥ ९ ॥ गुरुकी आज्ञा लेके देवदेवेश जो श्रीभगवान् हैं तिनकी सुवर्णकी प्रतिमा बनाके नाना प्रकारके भोजनकरियुक्त षोडश उपचारनसो पूजन करै ॥ १० ॥ रात्रिमें

इन्द्रादिलोकपालांश्चमंडलेपूजयेद्व्रती ॥ द्वादश्यांप्रतिबुद्धोऽसौत्रयोदश्यांपुनःसुरैः ॥ ८ ॥ दृष्टोऽर्चितश्चतुर्दश्यां तस्मात्पूज्यस्तिथावसौ ॥ तस्यामुपवसेद्भक्त्याशांतःप्रयतमानसः ॥ ९ ॥ पूजयेद्देवदेवेशंसौवर्णंगुर्वनुज्ञया ॥ उपचारैः षोडशभिर्नानाभक्ष्यसन्वितैः ॥ १० ॥ रात्रौजागरणं कुर्याद्गीतवाद्यादिमंगलैः ॥ ततःप्रभातेविमलेकुर्यान्नित्यक्रियांनरः ॥ ११ ॥ होमंकुर्यात्ततोविप्रान्संतर्प्यप्रयतात्मवान् ॥ शक्त्यातुदक्षिणांदद्याद्वित्तशाठ्यविवर्जितः ॥ १२ ॥

गीतवाद्य आदि मंगलनसे जागरण करै ता पीछे सुन्दर प्रभात होनेपर मनुष्य नित्यक्रिया अर्थात् स्नानध्यान संध्योपासन आदि करै ॥ ११ ॥ फिरि होम करै ता पीछे सावधान हो ब्राह्मणको भोजन करावै और धनकी शठता वर्जित अर्थात् लाभको त्याग करिकै अपनी शक्तिके अनुसार दक्षिणा दे ॥ १२ ॥

हे राजा ! या प्रकार पूजा करिके वैकुण्ठ चतुर्दशीको व्रत कियो वह मनुष्य या चतुर्दशीके व्रतमात्रहीसों वैकुण्ठको प्राप्त होय है ॥ ॥ १३ ॥ वैकुण्ठ चतुर्दशीको माहात्म्य सैकडोंवर्षन करिके देवता और विशेषकरि शेषनागहूँ कहनेको समर्थ नहीं है ॥ १४ ॥ जे मनुष्य भगवान्के जागरणमें भक्तिसे गान करें हैं वे सैकडों जन्मोंमें उत्पन्न हुए पापनके समूहकरि मुक्त होय हैं ॥ १५ ॥ नारायणके

एवंयेनकृताराजन्वैकुंठाख्याचतुर्दशी ॥ यस्यामुपोषणेनैववैकुंठंप्राप्नुयान्नरः ॥ १३ ॥ वैकुंठाख्यचतुर्दश्या माहात्म्यंनैवशक्यते ॥ वक्तुंवर्षशतैर्देवैः शेषेणापिविशेषतः ॥ १४ ॥ गानंकुर्वंतियेभक्त्याजागरेचक्रपाणिनः ॥ जन्मांतरशतोद्भूतैस्तेमुक्ताः पापसंचयैः ॥ १५ ॥ नारायणाजिरेविष्णोर्गीतंनृत्यंचकुर्वताम् ॥ गोसहस्रंचददतांयत्फलंसमुदाहृतम् ॥ १६ ॥ गीतनृत्यादिकंकुर्वन्दर्शयन्कौतुकानिच ॥ पुरतोवासुदेवस्यरात्रौयोजागरेद्धरेः ॥ १७ ॥ पठन्विष्णुचरित्राणियोरंजयतिवैष्णवान् ॥ तस्यपुण्यफलंविष्णुस्सालोक्यंचप्रदास्यति ॥ १८ ॥

आंगनमें ज विष्णुके निमित्त गान और नृत्य करैं हैं उनको पुण्य हजार गऊ देनेहारेके पुण्यके समान कहागयो है ॥ १६ ॥ वासुदेव भगवान्के आगे गीत और नृत्य आदिको करतो हुओ और कौतुकको दिखातो हुओ रात्रिमें जो जागरण करताहै और विष्णुके चरित्रोंको पाठ करतो हुओ वैष्णवनको प्रसन्न करतो है उनके पुण्यके फल सालोक्य मुक्ति देते हैं ॥ १७ ॥ १८ ॥

जो मुखसे बाजा बजाता है और स्वेच्छालाप अर्थात् वृथा बकवादको वर्जित करै है इन भावोंसे जो नर हरिको जागरण करै है दिन दिन वाको पुण्य कोटि तीर्थयात्राके समान कहो गयो है ॥ १९ ॥ ता पीछे पूर्णमासीको पत्नी सहित तीस उत्तम ब्राह्मणनको अथवा एकको अपनी शक्तिके अनुसार न्योतादे ॥ २० ॥ जाते विष्णु वर देके मत्स्यरूप भये ताते यामें दियो और होम कियोहुओ तथा

मुखेनकुरुतेवाद्यंस्वेच्छालापांश्चवर्जयेत् ॥ भावैरेतैर्नरोयस्तुकुरुतेहरिजागरम् ॥ दिनेदिनेतस्यपुण्यकोटि तीर्थसमस्मृतम् ॥ १९ ॥ ततस्तुपौर्णमास्यांवैसपत्नीकान्द्विजोत्तमान्॥ त्रिंशन्मितानथैकंवास्वशक्त्या चनिमंत्रयेत् ॥ २० ॥ वरान्दत्त्वायतोविष्णुर्मत्स्यरूपोभवत्ततः॥अस्यांदत्तंहुतंजप्तंतदक्षय्यफलंस्मृतम् ॥ २१ ॥ अतस्तान्भोजयेद्विप्रान्पायसान्नादिनाव्रती॥अतोदेवाइतिद्वाभ्यांजुहुयात्तिलपायसम् ॥ २२ ॥ प्रीत्यर्थंदेवदेवस्यदेवानांचपृथकपृथक् ॥ दक्षिणांचयथाशक्तिप्रदद्यात्प्रणमेच्चतान् ॥ २३ ॥

जप कियोहुओ अक्षय फल कहोगयो है ॥ २१ ॥ याहीते व्रती उन ब्राह्मणनको खीर आदि अन्नसे भोजन करावै और अतो देवो इत्यादि दो ऋचाओंसे तिल और खीरको होम करै ॥ २२ ॥ देवदेव जो विष्णु हैं तिनकी तथा देवताओंकी पृथक् पृथक् कर यथाशक्ति दक्षिणा दे और उनको प्रणाम करै ॥ २३ ॥

ता पीछे व्रतीपुरुष भगवान्की पूजा करिकै देवताओंकी तथा तुलसीकी पूजा करै ता पीछे वहां विधिपूर्वक कपिला गौका पूजन करै ॥ २४ ॥ फिरि व्रतके उपदेश करनेवाले गुरुको पत्नीसहित वस्त्र आभूषण आदिसे पूजिके उन ब्राह्मणसों क्षमापन करावे ॥ २५ ॥ प्रार्थनाको मंत्र ॥ तुम्हारे प्रसादते देवताओंके स्वामी भगवान् मेरे ऊपर सदा प्रसन्न होउ और इस व्रतसों सात जन्मके किये हुए

पुनर्देवंसमभ्यर्च्य देवांश्चतुलसींतथा ॥ ततोगांकापिलांतत्रपूजयेद्विधिनाव्रती ॥ २४ ॥ गुरुंव्रतोपदेष्टारंव स्त्रालंकरणादिभिः ॥ सपत्नीकंसमभ्यर्च्यतांश्चविप्रान्क्षमापयेत् ॥२५॥ प्रार्थनामंत्रः ॥ युष्मत्प्रसादाद्देवे शःप्रसन्नोऽस्तुसदामम ॥ व्रतादस्माच्चयत्पापं सप्तजन्मकृतंमया ॥ २६ ॥ तत्सर्वंनाशमायातुस्थिरामेचा स्तुसंततिः ॥ मनोरथाश्चसफलाःसंतुनित्यंममार्चया ॥ २७ ॥ देहांतेवैष्णवंस्थानंप्राप्नुयामतिदुर्लभम् ॥ ॥ २८ ॥ इतिक्षमाप्यतान्विप्रान्प्रसाद्यचविसर्जयेत् ॥ तामर्च्चांगुरवेदद्याद्गवांयुक्तांतदाव्रती ॥ २९ ॥

जो मेरे पाप हैं वे सब नाशको प्राप्त होय और मेरी संतति स्थिर होय और मेरी पूजासों तुम्हारे मनोरथ सदा सफल होय ॥ २६ ॥ ॥ २७ ॥ और देहान्तके समयमें अति दुर्लभ जो वैष्णव स्थान है ताहि प्राप्त होउ ॥ २८ ॥ ऐसे उस ब्राह्मणसे क्षमापन कराके और प्रसन्न करके उनका विसर्जन कर व्रती वा पूजाको गऊसमेत गुरुके अर्थ दान करै ॥ २९ ॥

तिस पीछे भक्तिमान् पुरुष मित्रवर्गोंसमेत आप भोजन करै कार्तिकमें अथवा माघमें इसी प्रकारकी विधि कही है ॥ ३० ॥ ऐसे जो मनुष्य कार्तिकका व्रत भली भाँति करै है वह पापरहित सब कामनाओंसे युक्त हो विष्णुके समीप प्राप्त होय है ॥ ३१ ॥ सम्पूर्ण व्रत और सम्पूर्ण तीर्थ और सब प्रकारके दानों करिकै जो फल प्राप्त होय है उससे कोटिगुण फल इस व्रतके भली भांति विधानसे

व्रतः सुहृद्गणयुतः स्वयंभुंजीतभक्तिमान् ॥ कार्तिकेवाथतपसिविधिरेवंविधः स्मृतः ॥ ३० ॥ एवंयः कुरुते सम्यक्कार्त्तिकस्यव्रतंनरः॥विपाप्मासर्वकामाढ्योविष्णुसान्निध्यगोभवेत् ॥ ३१ ॥ सर्वव्रतैः सर्वतीर्थैः सर्व दानैश्चयत्फलम् ॥ तत्कोटिगुणितंज्ञेयंसम्यगस्यविधानतः ॥ ३२ ॥ तेधन्यास्तेसदापूज्यास्तेषांचस फलोभवः ॥ विष्णुभक्तिरतायेस्युः कार्त्तिकव्रतकारिणः ॥३३॥ देहस्थितानिपापानिकंपंयांतिचतद्भयात् ॥ क्वयास्यामोभवत्येषयद्यूर्ज्जव्रतकृन्नरः ॥ ३४ ॥

प्राप्त होय है ॥ ३२ ॥ वे धन्य हैं और वे सदा पूज्य हैं और उनका जन्म सफल है जे विष्णुभक्तिमें रत होकें कार्तिक मासका व्रत करैहै ॥ ३३ ॥ देहमें स्थित पाप वा व्रतके भयसे कंपायमान होयहैं और कहते हैं कि, यह मनुष्य जो कार्तिकव्रत करनेवाला मनुष्य होयहै तौ अब हम कहां जांय ॥ ३४ ॥

या प्रकार कार्तिकव्रतके नियमोंको जो भक्तिसे श्रवण करे हैं और वैष्णवोंके आगे कहेहैं वे दोनों जो फल कार्तिकव्रत नियमसे मिलै
उन सब पापनके नाश करनहारे उस फलको प्राप्त होयहैं ॥ ३९ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदि-
कृतायां कार्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भाषार्थबोधिनिसमाख्यायामष्टमोऽध्यायः ॥ ८ ॥ पृथु बोले कि, हे महाराज ! जो तुमने कार्ति-

इत्यूर्जव्रतनियमाञ्छृणोतिभक्त्यायोवैतान्कथयतिवैष्णवाग्रतोपि ॥ तौसम्यग्व्रतनियमात्फलंभवेद्यत्त
त्सर्वंकलुषविनाशनंलभेते ॥ ३९ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्येऽष्टमोऽध्यायः ॥८॥ पृथुरुवाच ॥
यत्त्वयाकथितंब्रह्मन्व्रतमूर्जस्यविस्तरात् ॥ तत्रयातुलसीमूलेविष्णोः पूजात्वयोदिता ॥ १ ॥ तेनाहंप्रष्टुमि
च्छामिमाहात्म्यंतुलसीभवम् ॥ कथंसाऽतिप्रियाजातादेवदेवस्यशार्ङ्गिणः ॥ २ ॥ कथमेषासमुत्पन्नाक
स्मिन्स्थाने चनारद । तद्ब्रूहिमेसमासेनसर्वज्ञोऽसिमतोमम ॥ ३ ॥

कका व्रत विस्तार सहित कहा उसमें तुमने जो तुलसीके मूलमें विष्णुका पूजन वर्णन किया ॥ १ ॥ ताते मैं जो तुलसीका माहात्म्य
है ताहि पूंछा चाहूंहूं । वह तुलसी देवदेव जो भगवान् हैं तिनको अतिप्यारी कैसी भई ? ॥ २ ॥ हे नारद ! यह तुलसी कैसे उत्पन्न भई
और कौनसे स्थानमें भई तुम सर्वज्ञ हो ताते यह सब संक्षेपसे मोसों वर्णन करो ॥ ३ ॥

नारद बोले, पहिले सब देवतानकरिके युक्त और अप्सरानके गणकरिके सेवन कियेगये इन्द्र शिवजीके दर्शनके लिये कैलासपर्वतको जातभये ॥ ४ ॥ इन्द्रने शिवके स्थानमें जाके भयंकर हैं कर्म जाके और दाढों तथा आंखोंसे भयानक एक पुरुष देखो ॥ ५ ॥ वह इंद्र करिके पूछोगयो कि रे तू कौन है ? जगत्के ईश्वर शिवजी कहां गये ? हे राजा ! ऐसे वारंवार पूछोगयो वह जब कुछ न बोलो ॥ ६ ॥

नारदउवाच ॥ पुराशक्रःशिवंद्रष्टुमगात्कैलासपर्वतम् ॥ सर्वदेवैःपरिवृतोह्यप्सरोगणसेवितः ॥ ४ ॥ यावद्गतःशिवगृहंतावत्तत्रसदृष्टवान् ॥ पुरुषंभीमकर्माणंदंष्ट्रानयनभीषणम् ॥ ५ ॥ सपृष्टस्तेनकस्त्वंभोः क्वगतोजगदीश्वरः ॥ एवंपुनःपुनःपृष्टस्सयदानोचिवान्नृप ॥ ६ ॥ ततःक्रुद्धोवज्रपाणिस्तंनिर्भर्त्स्यवचोऽब्रवीत् ॥ इंद्रउवाच ॥ यन्मयापृच्छ्यमानोऽपिनोत्तरंदत्तवानसि ॥ ७ ॥ अतस्त्वांहन्मिवज्रेणकस्तेत्रातास्तिदुर्मते ॥ इत्युदीर्य ततोवज्रीवज्रेणाभ्यहनद्दृढम् ॥८॥ तेनास्यकंठेनीलत्वमगाद्वज्रंचभस्मताम् ॥ ततोरुद्रः प्रजज्वालतेजसाप्रदहन्निव ॥ ९ ॥

तब इंद्र क्रोधित हो वाको वचन बोले, इंद्र बोले जो मेरे पूछनेपरभी तैंने उत्तर नहीं दियो है ॥ ७ ॥ याते मैं तोकूं वज्रसे मारतोहौं हे दुर्बुद्धे ! तेरो रक्षक कौन है ? ऐसे कहिके इंद्रने वज्रसे वाको दृढ मारो ॥ ८ ॥ वज्रके लगनेसों वा पुरुषके कंठमें नीलता होगई और वह वज्र भस्मभावको प्राप्त भयो ता पीछे रुद्र तेजसे जलातेहुये ॥ ९ ॥

देखिकर बृहस्पतिजी शीघ्रही हाथ जोडके इन्द्रको भूमिमें दंडवत् प्रणाम कराय स्तुति करनेलगे ॥ १० ॥ बृहस्पति बोले कि देवताओंके अधिदेवता त्रिनेत्र तथा कपर्दी जो आप हैं तिनको नमस्कार है और त्रिपुरासुरके नाश कहनहारे शर्व तथा अंधकदैत्यके मारनेवाले जो आप हैं तिनको नमस्कार है ॥ ११ ॥ विरूप अतिरूप और बहुरूप जो आप हैं तिनको नमस्कार है दक्षके यज्ञके विध्वंस करनहारे और यज्ञके फल देनहारे जो आप हैं तिनको नमस्कार है ॥ १२ ॥ कालके नाश करनहारे और

दृष्ट्वाबृहस्पतिस्तूर्णंकृताञ्जलिपुटोऽभवत् इंद्रंचदंडवद्भूमौकृत्वास्तोतुंप्रचक्रमे ॥१०॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ नमोदेवाधिदेवायत्र्यंबकायकपर्दिने ॥ त्रिपुरघ्नायशर्वायनमोंधकनिषूदिने ॥ ११ ॥ विरूपायातिरूपायबहुरूपायशंभवे ॥ ज्ञानविध्वंसकर्त्रेवैयज्ञानांफलदायिने ॥ १२ ॥ कालांतकालकालायकालभोगिधरायच ॥ नमोब्रह्मशिरोहन्त्रेब्रह्मण्यायनमोनमः ॥ १३ ॥ नारदउवाच ॥ एवंस्तुतस्तदाशंभुर्धिषणेनजगादतम् ॥ संहरन्नयनज्वालांत्रिलोकीदहनक्षमाम् ॥ १४ ॥

कालस्वरूप काले साँपके धारण करनहारे और ब्रह्माका शिर छेदन करनहारे और ब्राह्मणोंके हितकारी जो आप हैं तिनको वारंवार नमस्कार है ॥ १३ ॥ नारद बोले, या समय बृहस्पतिकरि ऐसे स्तुति कियेगये शिवजी त्रिलोकीके जलानेको समर्थ ऐसी नेत्रकी अग्निको शांत करतभये उनसे बोले ॥ १४ ॥

हे ब्रह्मन् ! तुम्हारी या स्तुतिसे मैं प्रसन्न हौं वर मांगो और इंद्रका जीवदान करनेसे तुम जीव या नामसे प्रसिद्धिको प्राप्त होउ ॥ १५ ॥ बृहस्पति बोले, हे देव ! जो तुम प्रसन्न भये होउ तो शरणमें आयो जो इंद्र है ताकी रक्षा करौ और मस्तकके नेत्रसे उत्पन्न हुई यह अग्नि शांतिको प्राप्त होय ॥ १६ ॥ रुद्र बोले, मस्तकके नेत्रमें यह अग्नि फिरि कैसे प्रवेश करिसक्ती है ? याको मैं दूरि

वरंवरयभोब्रह्मन्प्रतिस्तुत्याऽनयातव ॥ इंद्रस्यजीवदानेनजीवेतित्वंप्रथांव्रज ॥ १५ ॥ बृहस्पतिरुवाच ॥ यदितुष्टोऽसिदेवत्वंपाहींद्रंशरणागतम् ॥ अग्निरेषशमंयातुभालनेत्रसमुद्भवः ॥ १६ ॥ रुद्रउवाच ॥ पुनः प्रवेशमायातिभालनेत्रेकथंशिखी ॥ एतत्क्षिपाम्यहंदूरेयथेंद्रंनैवपीडयेत् ॥ १७ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वातंकरेधृत्वाप्राक्षिपल्लवणार्णवे ॥ सोऽपतत्सिंधुगंगायाःसागरस्यचसंगमे ॥ १८ ॥ तावत्सबालरूपत्वमगात्तत्ररुरोदच ॥ रुदतस्तस्यशब्देनप्राकंपद्धरणी मुहुः ॥ १९ ॥

फेंको हौं जाते इन्द्रको पीडा न करै ॥ १७ ॥ नारद बोले, शिवजी ऐसे कहिके वा अग्निको हाथमें लेके खारी समुद्रमें फेंकदेत भये तब वह आग्नि गंगासागरके संगममें जाके गिरी ॥ १८ ॥ वह अग्नि वहां बालक होके रोने लगी तब रोतेहुये उस बालकके शब्दसों वारंवार धरती कांपने लगी ॥ १९ ॥

और उसने स्वर्गको आदिले सत्यलोकपर्यन्त सकल लोक बहिरे करदिये रोनेको शब्द सुनिके यह क्या है ऐसे विस्मित हो ब्रह्मा वहां आवत भये ॥ २० ॥ आतेही समुद्रकी गोदीमें वा बालकको देखते भये ता पीछे ब्रह्मा बोले कि, यह अद्भुत बालक कौनको है ? ॥२१॥ यह ब्रह्माका वचन सुनिके समुद्र वचन बोला और ब्रह्माको आवते देखि समुद्रहू हाथ जोरत भयो ॥२२॥ और शिरसों प्रणाम

स्वर्गादिसत्यलोकांतास्तत्स्वनाद्बधिराःकृताः ॥ श्रुत्वाब्रह्माययौतत्रकिमेतदितिविस्मितः ॥ २० ॥ तावत्समुद्रस्योत्संगेतंतुबालंददर्शह ॥ ततोब्रह्माऽब्रवीद्वाक्यंकस्यायंशिशुरद्भुतः ॥ २१ ॥ निशम्येतिवचोधातुर्वाक्यंसिंधुरथाब्रवीत् ॥ दृष्ट्वाब्रह्माणमायांतंसमुद्रोऽपिकृतांजलिः ॥ २२ ॥ प्रणम्यशिरसाबालंतस्योत्संगेन्यवेशयत् ॥ भोब्रह्मन्सिंधुगंगायांजातोऽयंममपुत्रकः ॥ २३ ॥ जातकर्मादिसंस्कारान्कुरुष्वास्यजगद्गुरो ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंवदतिपाथोधौसबालःसागरात्मजः ॥ २४ ॥ ब्रह्माणमग्रहीत्कूर्चेविधुन्वँस्तमुहुर्मुहुः ॥ धुन्वतस्तस्यकूर्चंतन्नेत्राभ्यामगमज्जलम् ॥ २५ ॥

करिके वह बालक उनकी गोदीमें बैठाय दियो और कहो कि गंगा सागरके संगममें उत्पन्न हुयो यह मेरो पुत्र ॥ २३ ॥ हे जगत्के गुरु ! याके जातकर्म आदि संस्कार कीजिये ॥ नारद बोले, समुद्र ऐसे कहिरहेथे कि समुद्रको पुत्र यह बालक ब्रह्माकी डाढी पकड लेतभयो और बारंबार हिलानेलगो तब उसकी डाढी पकडके हिलानेसों ब्रह्माके नेत्रनतें जल गिरो अर्थात् अश्रुपात हुओ ॥२४॥२५॥

बडी कठिनाईसे जब डाढी छुडा पाई तब ब्रह्मा समुद्रसों बोलत भये । ब्रह्मा बोले, जाते या करिके हमारे नेत्रनते यह जल निकालो गयो है ताते यह जलंधर या नामसों प्रसिद्ध होइगो ॥ २६ ॥ २७ ॥ अभी यह तरुण और सब शास्त्रोंके अर्थका पारगामी होयगो और रुद्रके विना सब जीवनको अवध्य होयगो अर्थात् रुद्रके विना याको कोई न मारसकैगो ॥ २८ ॥ और जहांसे यह उत्पन्न भयो

कथंचिन्मुक्तकूर्चोऽयंब्रह्माप्रोवाचसागरम् ॥ ब्रह्मोवाच ॥ नेत्राभ्यामुध्धृतंयस्मादनेनैतज्जलंमम ॥ २६ ॥ तस्माज्जलंधरइतिख्यातोनाम्नाभविष्यति ॥ २७ ॥ अधुनैवैषतरुणःसर्वशास्त्रार्थपारगः ॥ अवध्यः सर्वभूतानांविनारुद्रंभविष्यति ॥ २८ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाशुक्रमाहूयराज्येतंचाभ्यषेचयत् ॥ आमंत्र्य सरितांनाथंब्रह्मान्तर्द्धानमागमत् ॥ २९ ॥ अथतद्दर्शनोत्फुल्लनयनःसागरस्तदाकालनेमिसुतांवृंदांतद्भार्यार्थमयाचत ॥ ३० ॥

है वहीं फिर लीन होजायगो ॥ नारद बोले, ऐसे कहि शुक्राचार्यको बुलवाय उसे राज्यगद्दीपर बैठायो फिर समुद्रसे आज्ञा लेके ब्रह्मा अन्तर्धान होत भये ॥ २९ ॥ या पीछे उसके देखनेसे प्रसन्न नेत्र जाके ऐसे सागरने वाकी स्त्रीके लिये कालनेमिकी जो सुता वृन्दा थी ताकी याचना करी ॥ ३० ॥

ता पीछे कालनेमि आदि असुरोंने प्रसन्न होके वा पुत्रीको दान कियो बली वह जलधर अतिप्रीति करनेहारी और वशमें रहनेवा
ली वाको पाके शुक्राचार्यकी सहायतासों पृथ्वीको पालन अर्थात् राज्य करनलागो ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयश्रीमत्पं-
डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां नवमोऽध्यायः ॥ ९ ॥ नारद बोले पहिले

तेकालनेमिप्रमुखास्ततोऽसुरास्तस्मैसुतांतांप्रददुःप्रहर्षिताः ॥ सचापितांप्राप्यसुहृद्वरांवशांशशासगांशु
क्रसहायवान्बली ॥ ३१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेकार्त्तिकमाहात्म्ये नवमोऽध्यायः ॥९॥ नारदउवाच ॥
येदेवैर्निर्जिताः पूर्वं दैत्याः पातालसंस्थिताः ॥ तेऽपिभूमंडलेजातानिर्भयास्तमुपाश्रिताः ॥ १ ॥
कदाचिच्छिन्नशिरसंदृष्ट्वाराहुंसदैत्यराट् ॥ प्रपच्छभार्गवंतस्यशिरसश्छेदकारकम् ॥ २ ॥ सशशंससमु
द्रस्यमथनंदेवकारितम् ॥ रत्नापहरणंचैवदैत्यानांचपराभवम् ॥ ३ ॥

देवतानकरि जीते भये जे दैत्य पातालमें स्थिर हैं वेहू जलंधरके आश्रयसों पृथ्वीमंडलमें निर्भय होगये ॥ १ ॥ किसी समय राहुको
शिर कटो हुओ देखि वह दैत्यराज उसके शिर कटनेके कारणको शुक्राचार्यसे पूँछतभयो ॥ २ ॥ तब शुक्राचार्यने देवताओंकरि
करायेभये समुद्रके मथनको कहो और रत्नोंके हरलेनेको और दैत्योंके पराभवको वर्णन कियो ॥ ३ ॥

तब वह जलंधर अपने पिताका मथना सुनिके क्रोधसे लालनेत्र करि घस्मरनाम दूतको इन्द्रके समीप पहुँचावत भयो ॥ ४ ॥ दूत स्वर्गमें जायके सुधर्मानाम देवसभामें प्रवेश करतभयो अखवमौलि वह घस्मर देवेन्द्रसों अद्भुत वचन बोलत भयो ॥ ५ ॥ घस्मर बोलो, समुद्रको पुत्र जलंधर सब दैत्यनको स्वामी है उस करिके मैं दूत भेजो गयोहौं वाने जो कहो है सो सुनो ॥ ६ ॥ मेरो पिता सागर तुमने

सश्रुत्वाक्रोधरक्ताक्षः स्वपितुर्मथनंतदा ॥ दूतंसंप्रेषयामासघस्मरंशक्रसन्निधौ ॥ ४ ॥ दूतस्त्रिविष्टपंगत्वा सुधर्मांप्रविश्यत्वरा ॥ जगादाखर्वमौलिस्तुदेवेंद्रंवाक्यमद्भुतम् ॥ ५ ॥ घस्मरउवाच ॥ जलंधरोऽब्धि तनयःसर्वदैत्यजनेश्वरः ॥ दूतोऽहंप्रेषितस्तेनसयदाहशृणुष्वतत् ॥ ६ ॥ कस्मात्त्वयाममपितामथित स्सागरोद्रिणा ॥ नीतानिसर्वरत्नानितानिशीघ्रंप्रयच्छमे ॥ ७ ॥ इतिदूतवचःश्रुत्वाविस्मितस्त्रिदशा धिपः ॥ उवाच घस्मरंरौद्रंभयरोषसमन्वितः ॥ ८ ॥ इन्द्रउवाच ॥ शृणुदूतमयापूर्वंमथितः सागरो यथा ॥ अद्रयोमद्भयाद्भीताःस्वकुक्षिस्थाःकृतास्तथा ॥ ९ ॥

पर्वतसे क्यों मथो ? और जो तुमने रत्न हरण किये हैं उन्हें तुम शीघ्र मुझे देदो ॥ ७ ॥ इस प्रकार दूतका वचन सुनि विस्मित इन्द्र भयानक घस्मरसे भय और क्रोधयुक्त हो बोले ॥ ८ ॥ इंद्र बोले हे दूत ! जो हमलोगनकरि पहिले सागर मथो गयो सो सुनो मेरे भयसों भीत पर्वत वाने अपनी कुक्षिमें स्थापित कियो ॥ ९ ॥

पहिले और भी मेरे शत्रु दैत्य उस करिके रक्षा किये गये ताते वाके रत्नसमूह निश्चय मुझ करकेभी हरेगये॥ १०॥ पहिले सागरको पुत्र शंखहू देवतानसे द्वेष करतो भयो समुद्रके भीतर धसत भयो वह मैं छोटे भाई करि मारो गयो ॥ ११ ॥ ताते जाओ और सब मथनेका कारण जलंधरसे कहो ॥ नारद बोले, तब इन्द्रकरि विसर्जन कियोगयो दूत पृथ्वीमें आवत भयो ॥ १२ ॥ सो यह सब वचन

अन्येऽपिमद्विषस्तेनरक्षितादितिजाःपुरा ॥ तस्मात्तद्रत्नजातंतुमयाप्यपहृतंकिल ॥ १० ॥ शंखोऽप्येवंपुरादेवानद्विषत्सागरात्मजः ॥ ममानुजेननिहतः प्रविष्टः सागरोदरे ॥ ११ ॥ तद्गच्छकथयस्वास्यसर्वंकथनकारणम् ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंविसर्जितोदूतस्तदेंद्रेणागमद्भुवम् ॥ १२ ॥ तदिदंवचनंसर्वंदैत्यायाकथयत्तदा ॥ तन्निशम्यतदादैत्योरोषात्प्रस्फुरिताधरः ॥ १३ ॥ उद्योगमकरोत्तूर्णंसर्वदेवजिगीषया ॥ तदोद्योगेऽसुरेन्द्रस्यदिग्भ्यःपातालतस्तदा ॥ १४ ॥ दितिजाः प्रत्यपद्यंतकोटिशःकोटिशस्तदा ॥ अथशुंभनिशुंभाद्यैर्बलाधिपतिकोटिभिः ॥ १५ ॥

दैत्यसे कहत भयो तब दैत्य उसे सुनिके क्रोधसे कांपता है ओठ जाको ऐसो हो सब देवतानके जीतनेकी इच्छासे शीघ्र उद्योग करत भयो वा समय उस असुरेंद्र अर्थात् जलंधरके उद्योगमें दिशाओंसे और पातालसे करोडों दैत्य आगये और शुंभ निशुंभ आदि करोडों सेनाके अधिपति आवतेभये ॥ १३ ॥ १४ ॥ १५ ॥

वह दैत्य जलंधर स्वर्गमें जाके नंदनवनमें स्थित होत भयो तब पुरको घेरिके स्थित भयो बडी भारी दैत्यनकी सेनाको देखिके देवता कवच धारण करि युद्धके अर्थ अमरावतीसे निकसत भये तापीछे देवताओं और दैत्योंकी सेनाओंमें युद्ध होत भयो ॥ १६ ॥ १७ ॥ मूसल लुहांगी तीर गदा बरछी फरसा लेलेके वे दोनों सेना दौडीं और आपसमें मार होनेलगी ॥ १८ ॥ और दोनों सेना गिरे भये और

गत्वात्रिविष्टपंदत्योनंदनाधिष्ठितोऽभवत् ॥ निर्ययुश्चामरावत्यादेवायुद्धायदंशिताः ॥ १६ ॥ पुरमावृत्य तिष्ठंतंदृष्ट्वादैत्यबलंमहत् ॥ ततःसमभवद्युद्धंदेवदानवसेनयोः ॥ १७ ॥ मुशलैःपरिघैर्बाणैर्गदाशक्तिपरश्वधैः ॥ तेऽन्योन्यंसमधावेतांजघ्नतुश्चपरस्परम् ॥ १८ ॥ क्षणेनचाभवतांसैन्येरुधिरौघप्रवर्तिनी ॥ पतितैः पात्यमानैश्चगजाश्वरथपत्तिभिः ॥ १९ ॥ व्यराजतरणेभूमिः संध्याभ्रपटलैरिव ॥ ततोयुद्धेहतान्दैत्यान्भार्गव समजीवयत् ॥२०॥ विद्ययामृतजीविन्यामंत्रितस्तोयबिंदुभिः ॥ देवानपितथायुद्धेतत्राजीवयदंगिराः ॥२१॥

गिराये भये हाथी घोडे रथप्यादोंसे रुधिरके प्रवाहकी प्रवृत्ति करती भई क्षीणताको प्रातभई ॥ १९ ॥ और संध्याके मेघसमूहोंसे मानो रणमें भूमि शोभित होतभई ता पीछे युद्धमें मारेगये दैत्योंको शुक्राचार्य मृतसंजीविनी विद्याको पढके छिडकेभये जलके बुन्दनसों जिलावत भये तैसे बृहस्पतिजीभी तिस युद्धमें मरेहुए देवताओंको जिलातेभये ॥ २० ॥ २१ ॥

द्रोणाचलसे दिव्य औषधि लाकर युद्धमें मारेगये और फिरि उठे भए देवताओंको देखि ॥ २२ ॥ जलंधर क्रोधित हो शुक्राचार्यसों वचन बोलत भयो ॥ जलंधर बोला, मोकरिकै मारेगये देवता फिरि कैसे उठे हैं ? तुम्हारी यह जीविनी विद्या अन्यत्र नहीं है यह प्रसिद्ध है ॥ शुक्राचार्य बोले, द्रोणाचलसे दिव्य औषधि लाके ये अंगिराके पुत्र बृहस्पति जियावैं हैं ताते तू द्रोणाचलको

दिव्यौषधीःसमानीयद्रोणाद्रेःसपुनःपुनः ॥ दृष्ट्वादेवांस्तथायुद्धेपुनरेवसमुत्थितान् ॥ २२ ॥ जलंधरः क्रोधवशोभार्गवंवाक्यमब्रवीत् ॥ जलंधर उवाच ॥ मयादेवाहतायुद्धेउत्तिष्ठंतिकथंपुनः ॥ २३ ॥ तवेयंजीविनीविद्यानैवान्यत्रेतिविश्रुतम् ॥ शुक्रउवाच ॥ दिव्यौषधीःसमानीयद्रोणाद्रेरंगिराःसुरान् ॥ जीवयत्येषतच्छीघ्रंद्रोणाद्रिंत्वमपाहर ॥ २४ ॥ नारद उवाच ॥ इत्युक्तश्चासतुदैत्येंद्रोनीत्वाद्रोणाचलंतदा ॥ प्राक्षिपत्सागरेतूर्णंपुनरागान्महाहवम् ॥ २५ ॥

शीघ्र हरिलो ॥ २३ ॥ २४ ॥ तब नारद बोले, ऐसे कहो गयो वह दैत्येन्द्र द्रोणागिरिको लेकै शीघ्रही समुद्रमें फेंकदेत भयो और फिर महायुद्धमें आवत भयो ॥ २५ ॥

इस पीछे देवतानको मारे गये देखि बृहस्पति द्रोणाचलको गये देवतानकरि पूजित बृहस्पति वहां द्रोणाचलको न देखत भये ॥ २६ ॥ दैत्यकरि हरो गयो द्रोणाचलको जानि भयसे व्याकुल बृहस्पति आकर श्वाससे व्याकुल शरीर हो दूरहीसों बोलतभये ॥ २७ ॥ बृहस्पति बोले, भागो; रुद्रके अंशसों उत्पन्न यह दैत्य जीतने योग्य नहीं है। इन्द्रके कामको स्मरण करो अर्थात् इंद्रही उपद्रवसों

अथदेवान्हतान्दृष्ट्वाद्रोणाद्रिमगमद्गुरुः ॥ तावत्तत्रगिरींद्रंतुनददर्शसुरार्चितः ॥ २६ ॥ ज्ञात्वादैत्यहृतंद्रोणंधिषणोभयविह्वलः ॥ आगत्यदूरात्प्रोवाचश्वासाकुलितविग्रहः ॥ २७ ॥ गुरुरुवाच ॥ पलायध्वंमहादैत्योनायंजेतुंयतःक्षमः ॥ रुद्रांशसंभवोह्येषस्मरध्वंशक्रचेष्टितम्॥ २८ ॥ श्रुत्वातद्वचनंदेवाभयविह्वलितास्तदा ॥ दैत्येनवध्यमानास्ते पलायंतेदिशोदश ॥ २९ ॥ सदेवान्विद्रुतान्दृष्ट्वा दैत्यः सागरनंदनः ॥ शंखभेरीजयरवैःप्रविवेशामरावतीम् ॥ ३० ॥

उत्पन्न हुओ है ॥ २८ ॥ वा समय देवता वह बृहस्पतिको वचन सुनिके भयसे व्याकुल और दैत्यकरि वध्यमान हो दशों दिशानको भाग गये ॥ २९ ॥ सागरको पुत्र दैत्य देवतानको भगे गये देखि शंख भेरी और जयका शब्द करता हुआ अमरावतीमें प्रवेश करतो भयो ॥ ३० ॥

नगरीमें दैत्यके प्रवेश करनेपर इन्द्रादिक देवता दैत्यकरि तापित हो सुमेरु पर्वतकी गुफामें जाके वास करते भये ॥ ३१ ॥ वह दैत्य ऐसे देवतानको जीतिकै अमरावतीमें राज्य करत भयो ॥ ३२ ॥ ता पीछे वह असुर इन्द्रादिक सब देवतानके अधिकारमें शुंभादिक श्रेष्ठ दैत्यनको पृथक् २ स्थापित करि फिरि आप सुमेरु पर्वतकी गुफाको जात भयो ॥ ३३ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतन-

प्रविष्टेनगरींदैत्येदेवाःशक्रपुरोगमाः ॥ सुवर्णाद्रिगुहांप्राप्तान्यवसन्दैत्यतापिताः ॥ ३१ ॥ एवंदेवान्विनिर्जित्यतत्रराज्यंचकारसः ॥ ३२ ॥ ततस्तुसर्वेष्वसुरोऽधिकारेष्विंद्रादिकानांविनिवेशयत्तदा ॥ शुंभादिकान्दैत्यवरान्पृथक्पृथक्स्वयंसुवर्णाद्रिगुहामगात्पुनः ॥ ३३ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्यंदशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ नारदउवाच ॥ ॥ पुनर्दैत्यंसमायांतंदृष्ट्वादेवास्सवासवाः भयप्रकंपितास्सर्वेविष्णुंस्तोतुंप्रचक्रमुः ॥ १ ॥

यश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां दशमोऽध्यायः ॥ १० ॥ नारद बोले कि, इन्द्रादिक सब देवता फिरि दैत्यनको आवते हुए देखि भयसे कम्पित हो विष्णुकी स्तुति करनेका आरम्भ करत भये ॥ १ ॥

देवता बोले, मत्स्य कूर्म आदि नाना स्वरूपोंसे भक्तोंके कार्यके लिये उद्यत और दुःखके दूरि करनहारे जो आप हैं तिनको नमस्कार है विधाता आदि ब्रह्मा विष्णु शिव स्वरूप धारण करिकै जगत्की सृष्टी पालन तथा संहार करनहारे और गदा शंख, पद्म तथा खड्ग हाथोंमें धारन करनहारे जो आप हैं तिनको हम सबनका नमस्कार है ॥ २ ॥ लक्ष्मीके प्यारे असुरोंके मारनहारे गरुड पर चढके चलनेवाले पाताम्बर धारण करनेवाले यज्ञादिक क्रियाओंके पाक करनेवाले विकारयुक्त होनेवाले

देवाऊचुः ॥ नमोमत्स्यकूर्मादिनानास्वरूपैःसदाभक्तकार्योद्यतायार्तिहंत्रे ॥ विधात्रादिसर्गस्थितिध्वंसकर्त्रेगदाशंखपद्मासिहस्तायतेऽस्तु ॥ २ ॥ रमावल्लभायासुराणांनिहंत्रेभुजंगारियानायपीताम्बराय ॥ मखादिक्रियापाककर्त्रेविकर्त्रेशरण्यायतस्मैनताःस्मोनताःस्मः ॥ ३ ॥ नमोदैत्यसंतापिताऽमर्त्यदुःखाचलध्वंसदंभोलयेविष्णवेते ॥ भुजंगेशतल्पेशयानार्कचन्द्रद्विनेत्रायतस्मैनताःस्मोनताःस्मः ॥ ४ ॥

शरणागतकी रक्षा करनेवाले जो आप हैं तिनको वारंवार नमस्कार है ॥ ३ ॥ दैत्योंकरिके तापित जो मनुष्य हैं तिनके दुःखरूपी पहाडक ध्वसके लिये वज्ररूप शेषनामरूपी शय्यापर सोनेवाले और सूर्य चंद्रमारूप दो हैं नेत्र जिनके ऐसे आपको वारंवार नमस्कार है ॥ ४ ॥

नारद बोले जो मनुष्य इस संकटनाशन स्तोत्रको पढेगो वह हरिकी कृपासे कदापि कष्टोंकरि पीडित न होगो ॥ ५ ॥ या प्रकार देवतानने जब दैत्यनके शत्रु जो भगवान् हैं तिनकी स्तुति करि देवतानकी विपत्ति जानी गई ॥ ६ ॥ क्रोधित और खेदयुक्त है मन जिनको ऐसे दैत्योंको आर भगवान् झट उठिके शीघ्र गरुड पर चढ लक्ष्मीसों वचन बोलत भये ॥ ७ ॥ श्रीभगवान् बोले,

नारदउवाच ॥ संकष्टनाशनंस्तोत्रमेतद्यस्तुपठेन्नरः ॥ सकदाचिन्नसंकष्टैःपीड्यतेकृपयाहरेः ॥ ५ ॥ इति देवाःस्तुतिंयावत्कुर्वंतिदनुजद्विषः ॥ तावत्सुराणामापत्तिर्विज्ञाताविष्णुनातदा ॥६॥ सहसोत्थायदैत्यारिः सक्रोधःखिन्नमानसः ॥ आरूढोगरुडंवेगाल्लक्ष्मींवचनमब्रवीत् ॥ ७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ जलंधरेणतेभ्रा त्रादेवानांकदनंकृतम् ॥ तैराहूतोगमिष्यामिष्यामियुद्धायाद्यत्वरान्वितः ॥ ८ ॥ लक्ष्मीरुवाच ॥ अहंतेव ल्लभानाथभक्ताचयदिसर्वदा ॥ तत्कथंतेममभ्रातायुद्धेवध्यःकृपानिधे ॥ ९ ॥

तुम्हारे भाई जलंधरने देवताओंको दुःख दियो है इससे उन देवताओं करि बुलायो भयो मैं युद्धके लिये शीघ्र जाऊंगो ॥ ८ ॥ लक्ष्मी बोलीं, जो मैं तुम्हारी प्यारी और सदा भक्त हौं तो हे कृपानिधे ! मेरा भाई युद्धमें तुम करिके कैसे मारने योग्य होयगो ? ॥ ९ ॥

श्रीभगवान् बोले, रुद्रके अंशसे उत्पन्न होनेसे और ब्रह्माके वरदानसे और तुम्हारी प्रीतिसे यह जलंधर हमारे मारने योग्य नहीं है॥ १०॥ नारद बोले ऐसे कहि गरुडपर चढे भये शंख चक्र गदा और नंदक (तलवार) को धारण किये भये भगवान् जहां वे देवता स्तुति कर रहेथे वहां शीघ्र युद्धके लिये जात भये ॥ ११॥ इसके उपरांत अरुणके अनुज कहिये छोटे भाई जो गरुड तिनके प्रचंड पंखोंके पवनसे

श्रीभगवानुवाच ॥ रुद्रांशसंभवत्वाच्चब्रह्मणोवरदानतः ॥ प्रीत्याचतवनैवायंममवध्योजलंधरः ॥ १० ॥
नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वागरुडारूढःशंखचक्रगदासिभृत्॥विष्णुर्वेगाद्ययौयोद्धुंयत्रदेवाःस्तुवंतिते॥ ११॥
अथारुणानुजात्युग्रपक्षवातप्रपीडिताः ॥ वात्याविर्तजितादैत्याबभ्रमुःखेयथाघनाः ॥ १२ ॥ ततोजलंध
रोदृष्ट्वादैत्यान्वातप्रपीडितान् ॥ क्रोधादुत्पत्यगगनेततोविष्णुंसमभ्ययात् ॥ १३ ॥ ततस्समभवद्युद्धंवि
ष्णुदैत्येंद्रयोर्महत् ॥ आकाशंकुर्वतोर्बाणैस्तदानिरवकाशवत् ॥ १४ ॥

पीडित और बदलेसे उडाये गये दैत्य आकाशमें मेघोंके समान भ्रमनेलगे ॥ १२ ॥ तिस पीछे जलंधर दैत्यनको पवनसे पीडित देखि क्रोधसों आकाशमें उछलिकारि विष्णुके समीप गयो ॥ १३ ॥ ता पीछे बाणनसों आकाशको अवकाश रहित अर्थात् बाणपूरित करत भयो जो वे दोनों हैं तिनको बडो युद्ध होत भयो ॥ १४ ॥

विष्णुने बाणनके समूहसों दैत्यके छत्र धनुष और घोडे काटिदिये और वाकेहू हृदयम एक बाण मारो ॥ १५ ॥ ता पीछे वह दैत्य गदा हाथमें ले अति शीघ्र उछल गरुडके मस्तकमें मारके उनको पृथ्वीमें गिराय देतभयो ॥ १६ ॥ विष्णुने हँसके वाकी गदाको अपने खड्गसों काटदीन्ही तब वह विष्णुके हृदयमें एक प्रबल घूंसा मारत भयो ॥ १७ ॥ ता पीछे वे दोनों बली बाहुयुद्धसों

विष्णुर्दैत्यस्य बाणौघैर्ध्वजंछत्रंधनुर्हयान् ॥ चिच्छेदतंचहृदयेबाणेनैकेनचाहनत् ॥१५॥ ततोदैत्यःसमुत्पत्यगदापाणिस्त्वरान्वितः ॥ आहत्यगरुडं मूर्ध्निपातयामासभूतले ॥ १६ ॥ विष्णुर्गदांस्वखड्गेन चिच्छेदप्रहसन्निव ॥ तावत्सहृदयेविष्णुंजघानदृढमुष्टिना ॥ १७ ॥ ततस्तौबाहुयुद्धेनयुयुधातेमहाबलौ ॥ बाहुभिर्मुष्टिभिश्चैवजानुभिर्नादयन्महीम् ॥ १८ ॥ एवंतौहचिरंयुद्धंकृत्वाविष्णुःप्रतापवान् ॥ उवाचदैत्यराजानंमेघगंभीरनिःस्वनः ॥ १९ ॥ विष्णुरुवाच ॥ वरंवरयदैत्येन्द्रप्रीतोऽस्मितवविक्रमात् ॥ अदेयमपितेदद्मियतेमनसिवर्तते ॥ २० ॥

अर्थात् कुस्ती वा मल्लयुद्ध करनेलगे और बाहुओंसे घूसोंसे घोटुओंसे पृथ्वीको शब्दायमान करते भये युद्ध करते भये॥ १८॥ ऐसे वे दोनों सुन्दर युद्ध करते भये तब प्रतापवान् विष्णु मेघके समान गंभीर वाणीसे दैत्यराजसों बोलत भये ॥ १९ ॥ विष्णु बोले, हे दैत्येन्द्र ! तू वर मांग मैं तेरे पराक्रमसे प्रसन्न हौं. नहीं देने योग्यभी जो तेरे मनमें होय उसको मैं तुझे देताहूँ ॥ २० ॥

५

जलंधर बोला, हे भगिनीपाति ! जो आप प्रसन्न भये हो तौ मुझे एक वर दो वह यह है अब आप मेरी बहिनी अर्थात् लक्ष्मीजी और अपने गणों समेत मेरे घरमें वास करो ॥ २१ ॥ नारद बोले, तथास्तु ऐसे कहिके भगवान् सब देवगणों और लक्ष्मी सहित जलंधरके नगरको जातभये ॥२२॥ महाबाहु जलंधर तो देवताओंके अधिकारोंमें दैत्योंको स्थापित करि फिरि पृथ्वीमें आवत भयो॥२३॥

जलंधरउवाच ॥ यदिभावुकतुष्टोऽसिवरमेकंददस्वमे ॥ मद्भगिन्यासहाद्यत्वंमद्गृहेसगणोवस ॥ २१ ॥ नारद उवाच ॥ ॥ तथेत्युक्त्वासभगवान्सर्वदेवगणैःसह ॥ तदाजलंधरपुरमगमद्रमयासह ॥ २२ ॥ जलंधरस्तुदेवानामधिकारेषुदानवान् ॥ स्थापयित्वामहाबाहुःपुनरागान्महीतलम् ॥ २३ ॥ देवगंधर्वसिद्धेषुयत्किंचिद्रत्नसंज्ञितम् ॥ तदात्मवशगंकृत्वाऽतिष्ठत्सागरनंदनः ॥ २४ ॥ देवगंधर्वसिद्धाद्यान्सर्पराक्षसमानुषान् ॥ स्वपुरेनागरान्कृत्वाशशासभुवनत्रयम् ॥ २५ ॥

देवता गंधर्व सिद्ध इन सबोंमें जो कुछ रत्न अर्थात् सर्वोत्तम वस्तु थीं उनको अपने वशमें करिके वह सागरनंदन स्थित होत भयो ॥ २४ ॥ देवता गंधर्व सिद्ध आदिकोंको और सर्व राक्षस तथा मनुष्योंको अपने पुरमें नगरनिवासी करिके तीनों लोकको जो राज्य है ताहि करत भयो ॥ २५ ॥

या प्रकार जलंधर देवताओंको अपने वशमें करिके प्रजाओंको धर्मसे निजपुत्रके समान पालन करतभयो ॥ २६ ॥ इस जलंधरके धर्मे राज्य करनेके समय कोई रोगी न था न दुःखी न दुर्बल न दरिद्री दिखाई देता था अर्थात् जिस राज्यमें सब प्रजा आनंदमंगलसे समयको व्यतीत करती थी ॥ २७ ॥ नारदमुनि कहतेहैं कि ऐसे उस दानवेन्द्रको धर्मसे राज्य करनेके समयमें उसकी राज्यलक्ष्मी देख

एवंजलंधरःकृत्वादेवान्स्ववशवर्तिनः ॥ धर्मेणपालयामासप्रजाः पुत्रानिवौरसान् ॥ २६ ॥ नकश्चिद्व्याधितोनैवदुःखितोनकृशस्तथा ॥ नदीनोदृश्यतेतस्मिन्धर्माद्राज्यंप्रशासति ॥ २७ ॥ एवंमहींशासतिदानवेन्द्रेधर्मेणसम्यक्चादिदृक्षयाहम् ॥ कदाचिदागामथतस्यलक्ष्मींविलोकितुंश्रीरमणंचसेवितुम् ॥ २८ ॥

इति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये एकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ नारदउवाच ॥ ॥ समांसंपूज्यविधिवद्दानवेंद्रोऽतिभक्तिमान् ॥ संप्रहस्यतदावाक्यंजगादभुवनेश्वरः ॥ १ ॥

नेको और विष्णुका सेवन करनेको म वहां किसी समय गया ॥ २८ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायां कार्त्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायामेकादशोऽध्यायः ॥ ११ ॥ नारद बोले अतिभक्तियुक्त वह भुवनेश्वर दैत्योंका राजा मेरी विधिपूर्वक पूजा करके उस समय हँसिके वचन बोलत भयो ॥ १ ॥

हे महाराज ! आपका कहांसे आगमन भयो । हे प्रभु ! तुमने कहां कहीं कुछ देखो है ? जिसके लिये यहां आये हो हे मुनीश्वर ! सो मुझे आज्ञा दीजिये ॥ २ ॥ नारद बोले, हे दैत्येन्द्र ! मैं अपनी इच्छासे कैलास पर्वतपर गया वहां मैंने पार्वतीकरके सहित बैठे हुए शंकरको देखो ॥ ३ ॥ वह कैलास दसहजार योजन चौडा है और कल्पवृक्षोंका उसमें बडा वन है और सैकडों कामधेनुओंसे भरा

कुतआगम्यतेब्रह्मन्किंचिद्दृष्टंत्वयाप्रभो ॥ यदर्थमिहचायातस्तदाज्ञापयमांमुने ॥ २ ॥ नारदउवाच ॥
गतःकैलासशिखरेदैत्येंद्राहंयदृच्छया ॥ तत्रोमयासहासीनंदृष्टवानस्मिशंकरम् ॥ ३ ॥ योजनायुतवि
स्तीर्णेकल्पवृक्षमहावने ॥ कामधेनुशताकीर्णेचिन्तामणिसुदीपिते ॥ ४ ॥ तद्दृष्ट्वामहदाश्चर्यंवितर्को
मेऽभवत्तदा ॥ कापीदृशीभवेदृद्धिस्त्रिलोक्यांवानवेतिच ॥ ५ ॥ तदातवापिदैत्येंद्रसमृद्धिः संस्मृतामया॥
तद्दिलोकेनकामोऽहंत्वत्सान्निध्यमिहागतः ॥ ६ ॥

हुआ है और चिन्तामणियोंसे प्रकाशमान हो रहाहै ॥ ४ ॥ उस बडे आश्चर्यको देखिकै मेरे मनमें बडा वितर्क भयो कि त्रिलोकीमें कहीं ऐसी ऋद्धि है कि नहीं ॥ ५ ॥ हे दैत्येन्द्र ! तब मैंने आपकी भी ऋद्धिको स्मरण कियो और उसके देखनेकी इच्छासे यहां तुम्हारे समीप आयो हौं ॥ ६ ॥

स्त्रीरत्न करिके रहित तुम्हारी इस समृद्धिको देखि निश्चय मैं तर्क करताहौं कि शिवके समान त्रिलोकीमें कोई समृद्धिवालो नहीं है ॥ ७ ॥ यद्यपि अप्सरा और नागकन्या आदि तुम्हारे घरमें स्थित हैं तिसपर भी वे निश्चय पार्वतीके रूप समान नहीं हैं ॥८॥ तिसके सौंदर्यरूपी समुद्रमें डुबेहुये ब्रह्माने अपना वीर्य छोडा उसके साथ और किस स्त्रीकी उपमा दी जाय ॥९॥

त्वत्समृद्धिमिमांपश्यन्स्त्रीरत्नरहितांध्रुवम् ॥ तर्कयामिशिवादन्यस्त्रिलोक्यांनसमृद्धिमान् ॥ ७ ॥ अप्स रोनागकन्याद्यायद्यपित्वद्गृहेस्थिताः ॥ तथापितानपार्वत्यारूपेणसदृशाध्रुवम् ॥ ८ ॥ यस्यालावण्यजल धौनिमग्नश्चतुराननः ॥ स्ववीर्यममुचत्पूर्वंतयाकान्योपमीयते ॥ ९ ॥ वीतरागोऽपिचयथामदनारिःस्वली लया ॥ सौंदर्य्यगहनेभ्रामिशफरीरूपयापुरा ॥ १० ॥ यस्याःपुनःपुनारूपंपश्यन्धातापिसर्ज्जने ॥ सस र्ज्जाप्सरसस्तासांतत्समैकापिनोऽभवत् ॥ ११ ॥

तपस्वी भी शिव प्रथम मछलीका रूप धारण करनेवाली जिस पार्वती करिके अपनी लीलासे सौन्दर्यरूपी वनमें भ्रमाये गये ॥ १० ॥ सृष्टिके समय अर्थात् पार्वतीकी उत्पत्तिके समयमें ब्रह्माने भी जिसके रूपको वारंवार देखि अप्सराओंको उत्पन्न किया परन्तु उसके समान एक भी न भई ॥ ११ ॥

इसीसे स्त्रीरत्नके भोगनेवाले उन शिवकी वह समृद्धि श्रेष्ठ है हे दैत्येन्द्र ! सब रत्नोंके स्वामी जो तुम हो तिनकी समृद्धि वैसी अर्थात् शिवकीसी नहा है ॥ १२ ॥ ऐसे कहिके उससे पूछिके जब मैं वहांसे चलो आयो तब वह दैत्यनका राजा उस पार्वतीके रूपके श्रवणसे कामज्वरकरिके पीडित भयो ॥ १३ ॥ इस उपरांत उसने विष्णुकी मायासे कुछ मोहित हो शिवजीके लिये सिंहिकाका पुत्र

अतः स्त्रीरत्नसंभोक्तुस्समृद्धिस्तस्यसावरा ॥ तथानतवदैत्येन्द्रसर्वरत्नाधिपस्यच ॥ १२ ॥ एवमुक्त्वाव मामंत्र्यगतेमयिसदैत्यराट् ॥ तद्रूपश्रवणादासीदनंगज्वरपीडितः ॥ १३ ॥ अथ संप्रेषयामासदूतंतुसिंहिका सुतम् ॥ त्र्यंबकायतदाकिंचिद्विष्णुमायाविमोहितः ॥ १४ ॥ कैलासमगमद्राहुः कुर्वञ्छुक्लेंदुवर्चसम् ॥ कार्ष्ण्येनकृष्णपक्षेंदुवर्चसंस्वांगजेनतम् ॥ १५ ॥ निवेदितस्तुदेवायनंदिनाप्रविवेशसः ॥ त्र्यंबकभ्रूलतासंज्ञाप्रेरितोवाक्यमब्रवीत् ॥ १६ ॥

जो राहु है ताहि दूत बनाके भेजो ॥ १४ ॥ राहु जो सो श्वेतवर्ण जो चन्द्रमाका तेज है ताहि अपने शरीरकी कालिमासे कृष्णपक्षके चन्द्रमाके समान करतो हुओ कैलासको जातभयो ॥ १५ ॥ नंदी करिके शिवजीसे निवेदन कियो गयो वह राहु शिवके समीप जातभयो और शिवजीकी भौंहकी संज्ञासे प्रेरण कियो गयो वह वचन बोलत भयो ॥ १६ ॥

राहु बोले, हे वृषभध्वज! देवता और सर्पोंकरिके सेवन योग्य तीनों लोकनको स्वामी और सब रत्नको ईश्वरको जलंधर है ताकी आज्ञाको सुनो ॥ १७ ॥ श्मशानके वासी और सदा हाडोंके भार उठानेवाले और दिगंबर अर्थात् नंगे ऐसे जो तुम हो तिनको हैमवती अर्थात हिमाचलकी पुत्री काहेको स्त्री होनी चाहिये ॥ १८ ॥ मैं रत्नोंका स्वामी हूँ और वह स्त्री अर्थात् पार्व-

॥ राहुरुवाच ॥ देवपन्नगसेव्यस्यत्रैलोक्याधिपतेस्तथा ॥ सर्वरत्नेश्वरस्यत्वमाज्ञांशृणुवृषध्वज ॥ १७ ॥
श्मशानवासिनोनित्यमस्थिभारवहस्यच ॥ दिगंबरस्यतेभार्याकथंहैमवतीशुभा ॥ १८ ॥ अहंरत्नाधि
नाथोऽस्मिसाचस्त्रीरत्नसंज्ञिका ॥ तस्मान्ममैवसायोग्यानैवभिक्षाशिनस्तव ॥ १९ ॥ नारद उवाच ॥
वदत्येवंतदाराहौभ्रूमध्याच्छूलपाणिनः ॥ अभवत्पुरुषोरौद्रस्तीव्राशनिसमस्वनः ॥ २० ॥

ती भी स्त्रियोंमें रत्न है तिससे वह मेरे ही योग्य है और भी मांगके खानेवाले जो तुम हो तिनके योग्य नहीं है ॥ १९ ॥ नारद बोले ऐसे राहु कहिरहो हो वाही समय शिवजीकी भौंहोंके मध्यसों भयानक और तीव्र वज्रके शब्दके समान है शब्द जाको ऐसो पुरुष प्रगट होत भयो ॥ २० ॥

सिंहनकोसो है मुख जाको और चलायमान है जीभ जाकी और ज्वालासहित हैं नेत्र जाके और ऊपरको हैं केश जाके और सूखो है शरीर जाको ऐसो पुरुष दूसरे नृसिंहके समान लक्षित होत भयो ॥ २१ ॥ खानेको आते भये उसे देखि अति वेगसे भागता हुआ वह राहु उस पुरुष करिके बाहर पकड़ो गयो ॥ २२ ॥ पकडकरि जब खाने लगो तब रुद्रकरिके निवारण कियोगयो जिससे यह

सिंहास्यःप्रचलज्जिह्वःस ज्वालनयनोमहान् ॥ऊर्ध्वकेशःशुष्कतनुर्नृसिंहइवचापरः ॥२१॥ सतंखादितुमायांतंदृष्ट्वाराहुर्भयातुरः ॥ पलायन्नतिवेगेनबहिः सचदधारतम् ॥ २२ ॥ धृत्वाखादितुमारब्धस्तावद्रुद्रेणवारितः ॥ नैवासौवध्यतामेतिदूतोऽयंपरवान्यतः ॥ २३ ॥ मुंचेतिपुरुषः श्रुत्वाराहुंतत्याजसोऽबरे ॥ राहुंत्यक्त्वा सपुरुषस्तदारुद्रंव्याजिज्ञपत् ॥ २४ ॥ पुरुष उवाच ॥ क्षुधामांबाधतेऽत्यन्तंक्षुत्क्षामश्चास्मिसर्वथा ॥ किंभक्षयामिदेवेशतदाज्ञापयमांप्रभो ॥ २५ ॥

दूत पराये अधीन है तिससे यह मारने योग्य नहीं है ॥ २३ ॥ छोडदे इस वचनको वह पुरुष सुनिके उसने राहुको आकाशमें छोड दियो फिर राहुको छोडके उस पुरुषने तब शिवजीसे प्रार्थना की ॥२४॥ पुरुष बोला, क्षुधा मोकूं अत्यन्त बाधा देरही है और सब भांति मैं क्षुधासे दुर्बल हौं हे देवेश ! क्या खाऊं सो प्रभु मोको आज्ञा दीजिये ॥ २५ ॥

ईश्वर बोले, तू शीघ्रही अपने हाथ पांवके मांसको भक्षण कर ॥ नारद बोले, शिव करिके ऐसे आज्ञा दियो गयो वह पुरुष अपने हाथ पांवका मांस ऐसे खातो भयो कि जैसे शिरही शेष रह गयो ॥ २६ ॥ उसको शिरमात्र शेष रहो देखि उस समय अत्यंत प्रसन्न शिव विस्मययुक्त हो उस भीमकर्मा पुरुषसों बोलत भये ॥ २७ ॥ ईश्वर बोले, हे कीर्तिमुख ! तू सदा मेरे द्वारपर स्थित रह नारद

ईश्वर उवाच ॥ भक्षयस्वात्मनः शीघ्रमांसंत्वंहस्तपादयोः ॥ नारदउवाच ॥ सशिवेनैवमाज्ञप्तश्चखादपुरुषः स्वकम् ॥ हस्तपादोद्भवंमांसंशिरःशेषंयथाभवत् ॥ २६ ॥ दृष्ट्वाशिरोऽवशेषंतंसुप्रसन्नस्तदाशिवः ॥ उवाच भीमकर्माणंपुरुषंजातविस्मयः ॥ २७ ॥ ईश्वरउवाच ॥ त्वंकीर्तिमुखसंज्ञो हि भवमेद्वारगःसदा ॥ नारद उवाच ॥ तदाप्रभृतिदेवस्यद्वारिकीर्तिमुखः स्थितः ॥ २८ ॥ नार्चयंतीहयेपूर्वंतेषामर्चावृथाभवेत् ॥ २९ ॥ राहुर्विमुक्तोयस्तेनसोऽपतद्बर्बरस्थले ॥ अतःसबर्बरोभूतइतिभूमौप्रथांगतः ॥ ३० ॥

बोले, तबसे लगाके कीर्तिमुख शिवके द्वारपर स्थित है ॥ २८ ॥ जे प्रथम कीर्तिमुखको पूजन नहीं करे हैं उनकी पूजा वृथा हो जाय है ॥ २९ ॥ उस पुरुष करिके छोडे भयो राहु बर्बर स्थलमें गिरत भयो या कारण वह बर्बर भयो हुओ पृथिवीमें प्रसिद्ध होत भयो ॥ ३० ॥

ता पछि या लोकमें आपको फिर उत्पन्न भयो मानतो हुओ राहु जाके जलंधरसे वह वृत्तांत कहत भयो ॥३१॥ इति श्रीमत्परमसुख तनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिरचितायां कार्त्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥ नारद बोले, सो सुनिके क्रोधसों व्याकुल है शरीर जाको ऐसो जलंधर करोडों दैत्यन करिके युक्त शीघ्रही निकसत भयो ॥ १ ॥ जाते

ततस्सराहुः पुनरेवजातमात्मानमस्मिन्नितिमन्यमानः ॥ समेत्यसर्वंकथयांबभूवजलंधरायैवविचेष्टितंतत् ॥ ॥ ३१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये जलंधरोपाख्याने दूतसंवादे द्वादशोऽध्यायः ॥ १२ ॥

नारदउवाच ॥ जलंधरस्तुतच्छ्रुत्वाकोपाकुलितविग्रहः ॥ निर्जगामाशुदैत्यानां कोटिभिः परिवारितः ॥ १ ॥ गच्छतोऽस्याग्रतः शुक्रोराहुर्दृष्टिपथेऽभवत ॥ मुकुटश्चापतद्भूमौवेगात्प्रस्खलितस्तदा ॥ २ ॥ दैत्यसैन्याव्वृतैस्तस्यविमानानांशतैस्तदा ॥ व्यराजतनभःपूर्णंप्रावृषीवयथाघनैः ॥ ३ ॥ तस्योद्योगंतदादृष्ट्वादेवाःशक्रपुरोगमाः ॥ अलक्षितास्तदाजग्मुःशूलिनंतंविजिज्ञपुः ॥ ४ ॥

भए याको शुक्र और राहु दिखाई दिये और मुकुट भूमिमें गिर पडो और वेगके मारे आपहु गिरत भयो ॥ २ ॥ दैत्यनकी सेना करि युक्त वा समय सैकडों विमानों करि आकाश ऐसे भरगयो जैसे वर्षाऋतुमें मेघनसों भरजायहै ॥ ३ ॥ वा समय वाके उद्योगको देखि इन्द्रादिक सब देवता अलक्षित हो शिवजीके समीप गये और उनसे प्रार्थना करत भये ॥ ४ ॥

देवता बोले, हे स्वामी ! हे प्रभु ! क्या आप इन देवतानकी आपत्तिको नहीं जानै है अर्थात् जानोहो तो तातें हमारी रक्षाके निमित्त या सागरनंदनको मारो ॥ ५ ॥ यह देवताओंको वचन सुनिके शिवजी हँसके महाविष्णु जो भगवान् हैं तिनको बुलाके यह वचन बोले ॥ ६ ॥ ईश्वर बोले, हे विष्णुजी ! आपने संग्रामके बीचमें जलंधरको क्यों नहीं मारो उलटे आपनो स्थान वैकुंठ छोडिके वाके

॥ देवाऊचुः ॥ नजानासिकथंस्वामिन्देवापत्तिमिमांप्रभो ॥ तदस्मद्रक्षणार्थायजहिसागरनंदनम् ॥

॥ ५ ॥ इतिदेववचःश्रुत्वाप्रहस्यवृषभध्वजः ॥ महाविष्णुंसमाहूयवचनंचेदमब्रवीत् ॥ ६ ॥ ईश्वर उवाच ॥ जलंधरःकथंविष्णोनहतःसंगरेत्वया ॥ तद्गृहंचापियातोऽसित्यक्त्वावैकुंठमात्मनः ॥ ७ ॥

विष्णुरुवाच ॥ तवांशसंभवत्वाच्चभ्रातृत्वाच्चतथाश्रियः ॥ नमयानिहतःसंख्येत्वमेवजहिदानवम् ॥ ८ ॥

ईश्वर उवाच ॥ नायमोऽभ्भिर्महातेजाःशस्त्रास्त्रैर्वध्यतेमया ॥ देवैः सहस्वतेजोंऽशंशस्त्रार्थेदीयतांमम॥९ ॥

घरमें गये हो ॥ ७ ॥ विष्णु बोले, तुम्हारे अंशते उत्पन्न है यातें तथा लक्ष्मीको भाई है या कारणसों मैंने वाको संग्राममें नहीं मारो तुमही दानवको वध करो ॥ ८ ॥ ईश्वर बोले, यह महातेजस्वी इन अस्त्रनसों मोकरि न मारो जायगो ताते देवतान समेत आप अपने तेजको अंश शस्त्र बनानेके लिये मोको दीजिये ॥ ९ ॥

नारद बोले, या पीछे विष्णुआदि सब देवता तब अपने २ तेजनको देतभये वे सब तेज इकट्ठे होगये यह देखि शिवने आपनोहू तेज छोडो ॥ १० ॥ शिवजीने वा तेजके समूहसों ज्वालाओंकी मालासे अतिभयंकर उत्तम शस्त्र सुदर्शन नाम चक्र बनायो ॥ ११ ॥ वामेंसे जो कुछ तेज बचिरह्यो तासों इन्द्रने वज्र बनायो करोडों हाथी घोडे रथ पयादों करि युक्त जलंधरको कैलास

नारदउवाच ॥अथविष्णुमुखादेवाःस्वतेजांसिददुस्तदा॥तान्यैक्यमगमन्नीशोदृष्ट्वास्वंचामुचन्महः॥ १०॥ तेनाकरोन्महादेवोमहसांशस्त्रमुत्तमम् ॥ चक्रंसुदर्शनंनामज्वालामालातिभीषणम् ॥ ११ ॥ तेजःशेषेणचतदावज्रंचकृतवान्हरिः ॥ तावज्जलंधरोदृष्टःकैलासतलभूमिषु॥हस्त्यश्वरथपत्तीनांकोटिभिःपरिवारितः॥ १२ ॥ तंदृष्ट्वाऽलक्षिताजग्मुर्देवास्सर्वेयथागताः ॥ गणास्समरमायातायुद्धायातित्वरान्विताः ॥ ॥ १३ ॥ नंदीभवक्त्रसेनाननीमुखाःसर्वेशिवाज्ञया ॥ अवतेरुर्गणावेगात्कैलासाद्युद्धदुर्मदाः ॥ १४ ॥

पर्वतके समीपकी भूमिमें देखो ॥ १२ ॥ वाको देखतेही सब देवता जस आये हैं वैसेही छिप २ के चले गये और गण अति शीघ्रतासे युद्धके लिये संग्राममें आवत भये ॥ १३ ॥ ता पीछे शिवजीकी आज्ञासों नंदी गणेश स्वामीकार्तिक आदि गण युद्धके लिये दुर्मद हों कैलासते शीघ्र उतरत भये ॥ १४ ॥

ता पीछे कैलासके समीप भूमिमें शिवको और दैत्यनको शस्त्रास्त्रनसों परिपूर्ण घोर संग्राम होत भयो ॥ १५ ॥ वीरोंके आनन्द देने-वाले भेरी मृदंग और शंख इनके समूहोंके तथा हाथी घोडे रथ इनके शब्दोंसे नादित पृथ्वी कांपनेलगी ॥ १६ ॥ शक्ति तोमर बाणोंके समूह मूसल प्रास और पट्टिश शस्त्रास्त्रोंकरिके व्याप्त आकाश ऐसो शोभायमान भयो मानो कि, उल्काओंकरिके आच्छादित

ततः समभवद्युद्धं कैलासोपत्यकाभुवि ॥ प्रमथाधिपदैत्यानां घोरं शस्त्रास्त्रसंकुलम् ॥ १५ ॥ भेरीमृदंगशंखौघनिःस्वनैर्वीरहर्षणैः ॥ गजाश्वरथशब्दैश्च नादिताभूर्व्यकंपत ॥ १६ ॥ शक्तितोमरबाणौघमुसलप्रासपट्टिशैः ॥ व्यराजतनभः पूर्णमुल्काभिरिवसंवृतम् ॥ १७ ॥ निहतैरथनागाश्वैस्तदाभूमिर्व्यराजत ॥ वज्राहताचलशिरःसकलैरिवसंवृता ॥ १८ ॥ प्रमथाहतदैत्यौघान्भार्गवः समजीवयत् ॥ युद्धेपुनः पुनस्तत्रमृतसंजीवनीबलात् ॥ १९ ॥

है ॥ १७ ॥ और मारे भये जो रथ हाथी घोडे हैं तिन करिके भूमि ऐसी शोभित होतभई मानो कि वज्रसे गिराये भये पर्वतके शिखरोंके खंडनसों आच्छादित हो रही है ॥ १८ ॥ शिवके गणनकरिके मारेगये दैत्यनको वा युद्धमें शुक्राचार्य मृतसंजीवनी विद्याके बलसे बारंबार जिवावत भये ॥ १९ ॥

वाको देखि व्याकुल और भयभीत सब गण देवदेव जे शिव हैं तिनसों वह जो शुक्राचार्यकी करतूति है ताहि कहतभये ॥ २० ॥ ता पीछे रुद्रके मुखसे अतिभयंकर ताडवृक्षके समान हैं जांघें जाकी और गुफाके समान है मुख जाको और स्तनोंसे पीडित किये हैं वृक्ष जाने ऐसी कृत्या प्रगट होतभई ॥ २१ ॥ वह युद्धभूमिमें आयके बडे बडे असुरनको भक्षण करती भई शुक्राचार्यको अपनी भगमें

तंदृष्ट्वाव्याकुलीभूतागणाःसर्वेभयान्विताः ॥ शशंसुर्देवदेवायतत्सर्वंशुक्रचेष्टितम् ॥ २० ॥ अनुरुद्रमुखा त्कृत्याबभूवातिविभीषणा ॥ तालजंघोदरीवक्त्रास्तनापीडितभूरुहा ॥ २१ ॥ सायुद्धभूमिमासाद्यभक्षयं तीमहासुरान् ॥ भार्गवंस्वभगेधृत्वाजगामांतर्हितानभः ॥ २२ ॥ विधृतंभार्गवंदृष्ट्वादैत्यसैन्यगणास्तदा अम्लानवदनाहर्षान्निजघ्नुर्युद्धदुर्मदाः ॥ २३ ॥ अथाभज्यतदैत्यानांसेनागणभयार्दिता ॥ वायुवेगेनाहते वप्रकीर्णातृणसंहतिः ॥ २४ ॥

धारण करिके अन्तर्धान हो आकाशको चली जात भई ॥ २२ ॥ तब शुक्रको पकडाहुआ देखि प्रसन्न हैं मुख जिनको ऐसे गण युद्ध- में दुर्मद हो दैत्यनकी सेनाको हर्षसे मारत भये ॥ २३ ॥ या पछि गणनके भयसों पीडित दैत्यनकी सेना ऐसे छिन्न भिन्न होत भई जैसे पवनके वेगसों ताडित तृणोंको समूह बिखरजाय है ॥ २४ ॥

गणनके भयसों भागीभई सेनाको देव शुंभ और निशुंभ दोनों सेनापति और बलवान् कालनेमि ये तीनों क्रोधयुक्त हो युद्धको जात भये ॥ २५ ॥ ये तीनों महाबली वर्षाऋतुमें मेघनके समान बाणकी वर्षाको छोडतेहुए गणनकी सेनाको रोकत भये ॥ २६ ॥ ता पीछे वे दैत्यके शरसमूह टीडी दलके समान आकाश और सब दिशानको रोकी लेत भये और गणनकी सेनाको कंपा-

भग्नां गणभयात्सेनां दृष्ट्वामर्षयुतातयुः ॥ निशुंभशुंभसेनान्योकालनेमिश्चवीर्य्यवान् ॥२५॥ त्रयस्तेवारया मासुर्गणसेनामहाबलाः ॥ मुंचंतःशरवर्षाणिप्रावृषीवबलाहकः ॥ २६ ॥ ततोदैत्यशरौघास्तेशलभाना मिवव्रजाः ॥ रुरुधुःखंदिशःसर्वागणसेनांप्रकंपयन् ॥ २७ ॥ गणःशरशतैर्भिन्नारुधिरासारवर्षिणः॥वसंते किंशुकाभासानप्राज्ञायंतकिंचन ॥२८॥पतिताःपात्यमानाश्चभिन्नाश्छिन्नास्तदागणाः ॥ त्यक्त्वासंग्राम भूमिंते सर्वेऽपिविमुखाभवन् ॥ २९ ॥

यमान करि देतभये ॥ २७ ॥ सैकडों बाणोंकरि वेधेगये इसीसे रुधिरकी धाराको छोडते भये गण वसंतऋतुमें ढाकके वृक्षके समान लाल रंगके सिवाय कुछ न जाने जाते थे ॥ २८ ॥ वा समय गिरे और गिराये गये छिन्न भिन्न सब गण संग्रामभूमिको छोडिके भागत भये ॥ २९ ॥

ता पीछे शैलादि कहिये नंदी और स्वामीकार्तिक अपनी सेनाको हारी भई देखि क्रोधयुक्त ये तीनों हठसे दैत्य वरनको शीघ्र रोंकत भये ॥ ३० ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भावार्थबोधिनिसमाख्यायां त्रयोदशोऽध्यायः ॥ १३ ॥ नारद बोले, वे दैत्य नंदी और इभमुख कहिये गणेश और षण्मुख कहिये

ततश्च भग्नंस्वबलंविलोक्यशैलादिलम्बोदरकार्त्तिकेयाः ॥ त्वरान्विता दैत्यवरान्विसह्यनिवारयामासुरमार्षिणस्ते ॥ ३० ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये त्रयोदशोध्यायः ॥ १३ ॥ नारदउवाच ॥ ते गणाधिपतीन्दृष्ट्वानंदीभमुखषण्मुखान् ॥ अमर्षादभ्यधावंतद्वंद्वयुद्धायदानवाः ॥ १ ॥ नंदिनंकालनेमिश्चशुंभोलंबोदरंतथा ॥ निशुंभःषण्मुखंवेगादभ्यधावतदंशितः ॥ २ ॥

कार्त्तिकेय इत्यादि गणोंको देखि क्रोधसे द्वंद्वयुद्धके लिये दौरत भये ॥ १ ॥ अब द्वंद्वयुद्ध वर्णन करै हैं—कालनेमि दैत्य नंदीसे युद्ध करनेको आया और शुम्भ गणेशजीसे और निशुंभ स्वामी कार्त्तिकेयसे ये सब कवच पहिरि २ इन सबोंसे युद्ध करनेको वेगसे दौरत भये ॥ २ ॥

निशुंभ पांच बाणोंकरिके स्वामी कार्त्तिकके मयूरको वेगसे हृदयमें वेधत भयो और वह मोर मूर्च्छित होके गिरत भयो ॥ ३ ॥ तिस पीछे कार्त्तिकेय क्रोधित हो जबतक शक्तिको ग्रहण करे तबतक निशुंभ वेगसे अपनी शक्तिकरके उन्हें गिराय देत भयो ॥ ४ ॥ ता पीछे नंदी बाणोंके समूहसों कालनेमिको वेधत भयो और सात बाणोंसे घोडोंको तथा पताकाको और धनुषको काटत

निशुंभः कार्त्तिकेयस्यमयूरंपंचभिःशरैः ॥ हृदिविव्याधवेगेनमूर्च्छितः सपपातह ॥ ३ ॥ ततःशक्तिधरःश क्तिं यावज्जग्राहरोषितः ॥ तावन्निशुंभोवेगेनस्वशक्त्यातमपातयत् ॥ ४ ॥ ततोनंदीशरव्रातैःकालनेमिम विध्यत ॥ सप्तभिश्चहयान्केतुंधनुःसारथिमच्छिनत् ॥ ५ ॥ कालनेमिस्तुसंक्रुद्धोधनुश्चिच्छेदनंदिनः ॥ तदपास्य सशूलेनतंवक्षस्यहनद्बली ॥ ६ ॥ सशूलभिन्नहृदयोहताश्वोहतसारथिः ॥ अद्रेःशिखरमासुच्यशै लाद्रिंसोऽप्यपातयत् ॥ ७ ॥

भयो ॥ ५ ॥ कालनेमिभी क्रोधित होके नंदीका धनुष काटत भयो तब वह बलवान् उस धनुषको त्यागिके उस कालनेमिकी छातीमें शूल मारत भयो ॥ ६ ॥ शूलसे भेदन किया गया है हृदय जाको और मारे गये घोडा और सारथी जाके ऐसा जो काल- नेमि है सो पर्वतके शिखरको उखाडके वासे नंदीको गिरावत भयो ॥ ७ ॥

इस पीछे शुंभ और गणेश जिनके रथ और मूस वाहन हैं ऐसे दोनों युद्ध करते हुए आपसमें शरोंके समूहसों भेदन करत भये ॥ ८ ॥ तब गणेशजी बाणसे शुंभको हृदयमें वेधन करत भये और तीन बाणोंकरिके उसके सारथीको भूममें गिराय देतभये ॥ ९ ॥ ता पीछे शुंभहू अति क्रोधित हो बाणोंकी वर्षासे गणेशको और तीनि बाणोंसे मूसेको वेधिके मेघके समान गर्जत भयो ॥ १० ॥ हे राजा !

अथशुंभोगणेशश्चरथमूषकवाहनौ ॥ युध्यमानौशरव्रातैःपरस्परमविध्यताम् ॥८ ॥ गणेशस्तुतदाशुंभंहृदिविव्याधपत्रिणा ॥ सारथिंचत्रिभिर्बाणैःपातयामासभूतले ॥९॥ ततोऽतिक्रुद्धःशुंभोऽपिबाणवृष्टयागणाधिपम् ॥ मूषकंचत्रिभिर्विद्ध्वाननादजलदस्वनः ॥ १०॥ मूषकःशरभिन्नांगश्चालितुंनशशाकह ॥ लंबोदरःसमुत्तीयपदातिरभवन्नृप ॥ ११ ॥ ततोलंबोदरःशुंभंहत्वापरशुनाहृदि ॥ अपातयत्तदाभूमौमूषकंचारुहत्पुनः ॥ १२ ॥ कालनेमिर्निशुंभश्चाप्युभौलंबोदरंशरैः ॥ युगपज्जघ्नतुःक्रोधात्तोत्रैरिवमहाद्विपम् ॥१३ ॥

बाणोंसे विदीर्ण है अंग जाको ऐसो मूसा जब न चलसका तब गणेशजी उतरिके पावसे चलने लगे ॥११॥ ता पीछे गणेशजीने छातीमें फरसा मारिके शुंभको पृथ्वीमें गिरावत भये और फिर मूसेपर चढत भये ॥ १२ ॥ कालनेमि और निशुंभ दोनों एकसाथही गणेशजीको क्रोधकारि बाणोंसे मारत भये जैसे अंकुशसे कोई हाथीको मारै ॥ १३ ॥

तब महाबली वीरभद्र उनको पीडित देख करोड भूतों समेत उसपर दौरत भये ॥ १४ ॥ कूष्मांड भैरव वेताल योगिनियोंके गण पि-
शाच योगीनियोंके समूह और गण ये सब वीरभद्रके साथ चलत भये ॥ १५ ॥ तिस किलकिला शब्दोंसे और सिंहनादोंसे तथा
अन्य शब्दोंसे भरी भई सब पृथ्वी कांपने लगी ॥ १६ ॥ ता पीछे भूत दौरत भये आर दानवोंको भक्षण करत भये उछलते थे

तंपीड्यमानमालोक्यवीरभद्रोमहाबलः ॥ अभ्यधावतवेगेनभूतकोटियुतस्तदा ॥ १४ ॥ कूष्मांडाभैरवा
श्चापिवेतालायोगिनीगणाः ॥ पिशाचायोगिनीसंघागणाश्चापितमन्वयुः ॥ १५ ॥ ततःकिलकिलाशब्दैः
सिंहनादैःसुघर्घरैः ॥ निनादैर्भरितासर्वापृथिवीसमकंपत ॥ १६ ॥ ततोभूताभ्यधावंतभक्षयंतिस्मदानवान् ॥
उत्पतंत्यापतंतिस्मननृतुश्चरणांगणे ॥ ७१ ॥ नंदीचकार्त्तिकेयश्चसमाश्वस्तौत्वरान्वितौ ॥ निजघ्नतूर
णेदैत्यान्निरंतरशरव्रजैः ॥ १८ ॥ छिन्नभिन्नाहतैर्दैत्यैः पतितैर्भक्षितस्तदा ॥ व्याकुलासाऽभवत्सेनाविषण्ण
वदनातदा ॥ १९ ॥

कूदते थे और रणभूमिमें नाचते थे ॥ १७ ॥ नंदी और कार्त्तिकेय स्वस्थ होके शीघ्रतासे रणमें दत्योंको अविच्छिन्न बाणोंके समूहसे
मारतभये ॥ १८ ॥ छिन्नाभिन्न और मारेगये गिरेभये तथा खायेभये ऐसे दैत्योंसे मलिन है मुख जाको ऐसे सेना उस समय व्याकुल
होतभई ॥ १९ ॥

तव वह बली सागरनन्दन अपनी सेनाको गणोंकरि विध्वंसको देखि बडी पताकायुक्त रथमें बैठि गणोंके सन्मुख आवत भयो ॥ २० ॥ हाथी घोडे और रथोंके शब्द तैसेही शंख और भेरीका शब्द और दोनों सेनाओंका सिंहनाद उस समय होतभयो ॥ २१ ॥ जलंधरके बाणसमूहोंसे आकाश और पृथ्वीका मध्य ढकगया जैसे कि कुहरके पुंजसे आच्छादित होजाताहै ॥ २२ ॥ जलंधर पांच बाणनसों

प्रतिध्वस्तांतदासेनांदृष्ट्वासागरनंदनः॥ रथेनातिपताकेनगणानभिययौबली ॥२०॥हस्त्यश्वरथसंह्रादाः शंखभेरीरवास्तथा ॥ अभवत्सिंहनादश्चसेनयोरुभयोस्तदा ॥ २१ ॥ जलंधरशरव्रातैर्नीहारस्यतलैरिव ॥ द्यावापृथिव्योराच्छन्नमंतरंसमपद्यत ॥२२॥ गणेशंपंचभिर्विद्ध्वाशैलादिंनवभिःशरैः ॥ वीरभद्रंचविंशत्या ननादजलदस्वनः॥२३॥कार्त्तिकेयस्तदादैत्यंशक्त्याविव्याधसत्वरः॥ जुघूर्णशक्तिनिर्भिन्नःकिंचिद्व्याकुलमानसः ॥ २४ ॥ ततःक्रोधपरीतांगःकार्त्तिकेयंजलंधरः ॥ गदयाताडयामाससचभूमितलेऽपतत् ॥२५॥

गणेशको और नवसों नंदीको और बीस बाणनसों वीरभद्रको वेधिके मेघके समान गर्जत भयो ॥ २३ ॥ तव कार्त्तिकेय दैत्यको अतिशीघ्र शक्तिसे वेधत भये तब शक्तिके लगनेसे कुछ व्याकुल मन हो घूमने लगो ॥ २४ ॥ ता पछि क्रोधसे व्याप्त है अंग जाको ऐसो जलंधर कार्त्तिकेयको गदासे मारत भयो तब वे तौ भूमिमें गिरत भये ॥ २५ ॥

ऐसेही नंदीको वेगसे भूमिमें गिराय देत भयो तब गणेश क्रोधित हो वाकी गदाको फरसासों काटि देतभये ॥ २६ ॥ वीरभद्र वा दानवके हृदयमें तीनि बाण मारत भये और सात बाणनसों वाको वाके घोडानको पताकाको धनुष और छत्रको काटि देतभये॥ २७॥ ता पीछे दैत्यराज अतिक्रोधित हो दारुण शक्ति उठाके गणेशको गिराय देतभयो और फिर दूसरे रथमें चढत भयो ॥ २८ ॥

तथैवनंदिनंवेगादपातयतभूतले ॥ ततोगणेश्वरःक्रुद्धोगदांपरशुनाच्छिनत्॥२६ ॥ वीरभद्रस्त्रिभिर्बाणैर्हृदि विव्याधदानवम् ॥ सप्तभिश्चहयान्केतुंधनुश्छत्रंचचिच्छिदे॥२७॥ ततोऽतिक्रुद्धोदैत्येन्द्रः शक्तिमुद्यम्य दारुणाम् ॥ गणेशंपातयामासरथमन्यंसमारुहत् ॥ २८ ॥ अभ्ययादथवेगेनवीरभद्रंरुषान्वितः॥ ततस्तौ सूर्यसंकाशौयुयुधातेपरस्परम् ॥ २९॥ वीरभद्रस्ततस्तस्यहयान्बाणैरपातयत् ॥ धनुश्चिच्छेददैत्येंद्रः पुप्लुवेपरिघायुधः ॥ ३० ॥

तापीछे क्रोधित हो वीरभद्रपर दौरत भयो ता पीछे सूर्यके समान है कांति जिनकी ऐसे दोनों परस्पर युद्ध करत भये ॥ २९ ॥ ता पीछे वीरभद्र बाणनकरिके वाके घोडानको गिराय देत भये और धनुषको काटि देत भये तब दैत्येन्द्र परिघ अर्थात् लोहांगी लेके दौरत भयो ॥ ३० ॥

नारद बोले, वह शम्रिही जाके परिघसों वीरभद्रको मस्तकमें मारत भयो वह बीरभद्रहू शिर फूटनेसों रुधिरको डारत भयो पृथ्वी में गिरतभयो ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयपंडितकेशवप्रसादकृतायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां चतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ नारद बोले, वीरभद्रको गिरोभयो देखि रुद्रके गण भयसों रणको छोडि पुकार करते भये शिवके समीप

नारदउवाच ॥ सवीरभद्रंत्वरयाऽभिगम्यजघानदैत्यःपरिघेणमूर्द्धनि ॥ सचापिवीरःप्रविभिन्नमूर्द्धापपातभूमौरुधिरंसमुद्गिरन् ॥ ३१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणेकार्त्तिकमाहात्म्येचतुर्दशोऽध्यायः ॥ १४ ॥ नारदउवाच ॥ पतितंवीरभद्रंतुदृष्ट्वारुद्रगणाभयात् ॥ आगमंस्तेरणंहित्वाक्रोशमानामहेश्वरम् ॥ १ ॥ अथकोलाहलंश्रुत्वा गणानांचंद्रशेखरः ॥ अभ्ययाद्वृषभारूढःसंग्रामंप्रहसन्निव ॥ २ ॥ रुद्रमायांतमालोक्यसिंहनादैर्गणाः पुनः ॥ निवृत्ताःसंगरेदैत्यान्निजघ्नुःशरवृष्टिभिः ॥ ३ ॥ दैत्याश्चभीषणंदृष्ट्वासर्वेचैवविदुद्रुवुः ॥ कार्त्तिकव्रतिनंदृष्ट्वापातकानिवतद्भयात् ॥ ४ ॥

गये ॥ १ ॥ या पीछे कोलाहल सुनिक चन्द्रशेखर वृषभपर चाढि हँसते भये संग्रामको जात भये ॥ २ ॥ रुद्रको आते भये देखि लौटे भये गण सिंहनाद करिके फिरि बाणनकी वर्षासों दैत्यनको मारतभये ॥ ३ ॥ दैत्य शिवजीको भयंकर देखि ऐसे भागतभये जैसे कार्त्तिकव्रत करनहारेको देखि वाके भयसे पाप भाग जाय हैं ॥ ४ ॥

या पछि जलंधर दैत्यनको भागे भये देखि संग्राममें क्रोधसे हजारन बाणनको छोडतो भयो शिवजीके ऊपर दौरत भयो ॥ ५ ॥ शुंभ निशुंभ अश्वमुख कालनेमि बलाहक खड्गरोमा प्रचंड और घस्मर आदि दैत्य शिवके ऊपर दौरत भये ॥ ६ ॥ शिवजी गणोंकी सेनाको बाणरूपा अंधकारसे ढकी भई देखि दैत्यनके बाणजालको काटि अपने बाणनसों आकाशको आच्छादित करि देत

अथ जालंधरोदैत्यान्विद्रुतान्प्रेक्ष्यसंगरे ॥ रोषादधावच्चंडशिंमुंचन्बाणान्सहस्रशः ॥ ५ ॥ शुंभोनिशुंभो श्वमुखःकालनेमिर्बलाहकः ॥ खड्गरोमाप्रचण्डश्चघस्मराद्याःशिवंययुः ॥ ६ ॥ बाणांधकारसंच्छन्नंदृष्ट्वा गणबलंशिवः ॥ बाणजालमवच्छिद्यस्वबाणैरावृतंनभः॥७॥ दैत्यांश्चबाणवात्याभिः पीडितानकरोत्तदा॥ प्रचण्डबाणजालौघैरपातयतभूतले ॥ ८ ॥ खड्गरोम्णःशिरःकोपात्तदापरशुनाच्छिनत् ॥ बलाहकस्यच शिरःखट्वांगेनाकरोद्द्विधा ॥ ९ ॥

भये ॥ ७ ॥ और वा समय दैत्यनको बाणरूपी बघूलनसों व्याकुल करि देत भये और प्रचंड बाणनके समूहसों पृथिवीमें गिराय देत भये ॥ ८॥ और खड्गरोमा नाम राक्षसके शिरको क्रोधसे फरसा करके काटत भये और बलाहक नाम दैत्यक शिरको खट्वांगसे दो टूक करदेत भये ॥ ९ ॥

और घस्मर दैत्यको पाशसे बांधके पृथ्वीमें गिरावतभये कोई बैलके सींगनसे मारेगये दैत्य सिंहसे पीडित हाथियोंके समान संग्राममें ठहरनेको न समर्थ भये ॥ १० ॥ ता पीछे क्रोधसों व्याप्त है शरीर जाको ऐसे जलंधर वज्रके समान शब्दोंसों संग्राममें रुद्रको बुलावत भयो ॥ ११ ॥ जलंधर बोलो, अब मेरे साथ युद्ध करो तुमको इनके मारनेसे क्या प्रयोजन है ? हे जटाधारी ! तुममें जो कुछ बल

बद्धाचघस्मरंदैत्यंपाशेनाभ्यहनद्भुवि ॥ वृषशृंगहताःकेचित्केचिद्बाणैर्निपातिताः ॥ नशेकुरसुराःस्थातुं गजाः सिंहार्दिताइवः ॥ १० ॥ ततःकोपपरीतात्मावेगाद्रुद्रंजलंधरः ॥ आह्वयामाससमरेतीव्राशनिसमस्वनः ॥ ११ ॥ जलंधरउवाच ॥ युद्धचस्वाद्यमयासार्द्धंकिमेभिर्निहतैस्तव ॥ यच्चकिंचिद्बलंतेऽस्तितद्दर्शयजटाधर ॥ १२ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वादशभिर्बाणैर्जघानवृषभध्वजम् ॥ सतान्प्राप्तान्छित्तैर्बाणैश्चिच्छेदप्रहसञ्छिवः ॥ १३ ॥ ततोहयान्ध्वजंछत्रंधनुश्चिच्छेदसप्तभिः ॥ १४ ॥

होय सो दिखावो ॥ १२ ॥ नारद बोले, ऐसे कहिके दश बाणनसे शिवको मारत भयो वे शिव आये भये उन बाणनको अपने पैने बाणनकरिके हँसिके काटि देत भये ॥ १३ ॥ ता पीछे घोडाको ध्वजाको और छत्रको सात बाणनकरि काटत भये ॥ १४ ॥

कटि गयो है धनुष जाको और रथरहित ऐसे जलंधर वेगसों गदाको उठायके शिवके ऊपर दौरत भयो तब शिवजी वाकी गदाको बाणनकरि दो खंड करि देत भये ॥ १५ ॥ ताहूपर वह घूँसा उठायके मारनेकी इच्छासों शिवजीके ऊपर जात भयो तभी शिवजी बाणोंके समूहसों वाको एक कोस भरि हटाय देत भये ॥ १६ ॥ तापीछे जलंधर दैत्य शिवजीको अधिक बलवान् जानिके रुद्रको

सञ्छिन्नधन्वाविरथोगदामुद्यम्यवेगवान् ॥ अभ्यधावच्छिवस्तावद्गदांबाणैर्द्विधाऽकरोत ॥१५॥ तथापि मुष्टिमुद्यम्यययौरुद्रंजिघांसया ॥ तावच्छिवेनबाणौघैःक्रोशमात्रमपाकृतः ॥ १६ ॥ ततोजलंधरोदैत्यो मत्वारुद्रंबलाधिकम् ॥ ससर्जमायांगांधर्वीमद्भुतांरुद्रमोहिनीम् ॥ १७ ॥ ततोजगुश्चननृतुर्गंधर्वाप्सरसां गणाः ॥ तालवेणुमृदंगाद्यान्वादयंतिस्मचापरे ॥१८॥ तद्दृष्ट्वामहदाश्चर्यंरुद्रोनादविमोहितः ॥ पतितान्यपि शस्त्राणिकरेभ्योनविवेदसः ॥ १९ ॥

मोहित करनहारी अद्भुत गांधर्वी मायाको उत्पन्न करत भयो ॥ १७ ॥ ता पीछे गन्धर्व जे हैं ते गान करत भये अप्सरानके गण नाचत भये तथा और सब ताल वेणु मृदंग आदि बाजानको बजावत भये ॥ १८ ॥ वह बडा आश्चर्य देखिकै रुद्र नादसों मोहित हो हाथनते गिरे भये शस्त्रनकोभी न जानत भये ॥ १९ ॥

जलंधर दैत्य रुद्रको नृत्यगानकी ओर एकाग्र मन भयो जानि कामसे पीडित हो जहां गौरी स्थित थीं वहीं शीघ्र जात भयो ॥२० ॥ और महाबली जे शुंभ निशुंभ हैं उनको युद्धमें राखिके आप दशभुज पांचमुख और तीनि नेत्र तथा जटाओंको धारण करि शिवका रूप धारण करत भयो ॥ २१॥ और वह जलंधर बडे बैलपर चढत भयो या पीछे भवकी वल्लभा जो पार्वतीजी हैं सो शिवजीको आवत

एकाग्रीभूतमालोक्यरुद्रंदैत्योजलंधरः ॥ कामार्त्तःसजगामाशुयत्रगौरीस्थिताऽभवत् ॥ २० ॥ युद्धेशुंभनिशुंभाख्यौस्थापयित्वामहाबलौ ॥ दशदोर्दंडपंचास्यस्त्रिनेत्रश्चजटाधरः ॥ २१ ॥ महावृषभमारूढः सबभूवजलंधरः ॥ अथोरुद्रंसमायांतमालोक्यभववल्लभा ॥ अभ्यायय्यौसखीमध्यात्तद्दर्शनपथेऽभवत् ॥ २२ ॥ यावद्ददर्शचार्वंगींपार्वतींदनुजेश्वरः॥तावत्सवीर्यंमुमुचेजडांगश्चाभवत्तदा ॥ २३ ॥ अथज्ञात्वा तदागौरीदानवंभयविह्वला ॥ जगामांतर्हितावेगात्सातदोत्तरमानसम् ॥ २४ ॥

देखि सखियोंके मध्यसों उठिके उनके दर्शनके मार्गमें आवत भई ॥ २२ ॥ वह दैत्यनको राजा सुन्दर है अंग जाको ऐसी पार्वतीको देखि वीर्यको छोडत भयो और वाको अंग जड होजात भयो ॥ २३ ॥ ता पीछे गौरी वाको दानव जानि भयसों व्याकुल हो अंतर्हित होके अतिशीघ्र उत्तरदिशामें मानससरोवरको जात भई ॥ २४ ॥

ता पछि दैत्य क्षणभरमें बिजली समान जो पार्वती हैं ताहि न देखके वेगसे वहां युद्धमें फिर आवत भयो जहां शिवजी विद्यमान थे ॥ २५ ॥ पार्वतीहू वा समयमें मन करिकै विष्णुको स्मरण करत भई तबहीं उन देव अर्थात् विष्णुको समीपही बैठो देखत भई ॥ २६ ॥ पार्वती बोली, हे विष्णु ! जलंधर दैत्यने जो अद्भुत कर्म कियो सो कहा वा दुष्टको काम आपको नहीं विदित

तामदृष्ट्वाततोदैत्यःक्षणाद्विद्युल्लतामिव ॥ जवेनागात्पुनर्युद्धेयत्रदेवोवृषध्वजः ॥ २५ ॥ पार्वत्यपिभयाद्विष्णुंसस्मारमनसातदा ॥ तावद्ददर्शतंदेवंसूपविष्टसमीपगम् ॥ २६ ॥ पार्वत्युवाच ॥ विष्णोजलंधरोदैत्यःकृतवान्परमाद्भुतम् ॥ तत्किंनविदितंतेऽस्तिचेष्टितंतस्यदुर्मतेः ॥ २७ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ तेनैवदर्शितःपंथावयमप्यन्वयामहे ॥ नान्यथाऽसौभवेद्वध्यःपातिव्रत्यसुरक्षितः ॥ २८ ॥ नारद उवाच ॥ जगामविष्णुरित्युक्त्वापुनर्जालंधरं पुरम् ॥ अथरुद्रश्चगंधर्वानुगतःसंगरेस्थितः ॥ २९ ॥

है ॥ २७ ॥ श्रीभगवान् बोले वाहीकारिकै मार्ग दिखायो गयो अर्थात् छल करिकै रूप बनावनो सो हमहूँ वाही मार्गमें चलेंगे अर्थात् जैसा छल वाने कियो है ऐसो ही हमहूँ वाकी स्त्रीसूं करैं अन्यथा पातिव्रताधर्मसूं रक्षित वह मारने योग्य न होयगो ॥ २८ ॥ नारद बोले, विष्णु ऐसे कहिकै फिरि जलंधरके पुरको जात भये और रुद्र गंधर्वसमेत संग्राममें स्थित रहत भयो ॥ २९ ॥

तब वे शिव मायाको अंतर्धान भई देख बोधको प्राप्त होत भये ॥ ३० ॥ ता पीछे शिव मनमें विस्मित हो क्रोध करिके युद्धके लिये फिरि जलंधर पर जातभये वह दैत्यहू फिरि रणमें आये भये शिवको देखि बाणनके समूहसो आच्छादित करतभयो ॥ ३१ ॥ इति

अंतर्द्धानगतांमायांदृष्ट्वासबुबुधेतदा ॥ ३० ॥ ततोभवोविस्मितमानसःपुनर्जगामयुद्धायजलंधरंरुषा ॥ सचापिदैत्यःपुनरागतंशिवंदृष्ट्वाशरौघःसमवाकिरद्रणे ॥ ३१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये शिवजलंधरसंग्रामोनामपञ्चदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ नारदउवाच ॥ विष्णुर्जालंधरंगत्वातद्दैत्यपुटभेदनम् ॥ पातिव्रत्यस्यभंगायवृंदायाश्चाकरोन्मतिम् ॥ अथवृंदारकादेवीस्वप्नमध्येददर्शह ॥ भर्त्तारंमहिषारूढंतैलाभ्यक्तंदिगंबरम् ॥ २ ॥

श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायां कार्त्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां पंचदशोऽध्यायः ॥ १५ ॥ नारद बोले, विष्णु वा जलंधरके नगरमें जायके वृन्दाके पतिव्रताधर्म भंग करनेकी मति करत भये ॥ १ ॥ या पीछे वृन्दा देवी स्वप्नमें अपने पतिको भैंसेपर चढो और तेल लगाये नंगे शरीर देखत भई ॥ २ ॥

और काले फूलकी माला पहिरे कच्चे मांसके खानेहारे जीवोंकरि सेवित और दक्षिणदिशाको जात भयो मूँड मुँडाये अंधकार करि घेरो भयो ऐसो अपने पतिको स्वप्नमें देखत भई ॥ ३ ॥ और आपसमेत अपने पुरको सहसा समुद्रमें डूबोभयो देखत भई । वो समय जगीभई वह या स्वप्नको शोचने लगी ॥ ४ ॥ और उदय भये सूर्यको छिद्रोंकरि युक्त निश्चल देखत भई ॥ वह सब अनिष्ट

कृष्णप्रसूनभूषाढ्यक्रव्यादगणसेवितम् ॥ दक्षिणाशागतंमुंडंतमसाप्यावृतंतदा ॥ ३ ॥ स्वपुरंसागरेमग्नं सहसैवात्मनासह ॥ प्रबुद्धासातदाबालादुःस्वप्नंप्रविचिन्वती ॥ ४ ॥ ददर्शोदितमादित्यंसच्छिद्रंनिष्प्रभं मुहुः ॥ तदनिष्टमितिज्ञात्वारुदंतीभयविह्वला ॥ ५ ॥ कुत्रचिन्नालभच्छर्मगोपुराट्टालभूमिषु ॥ ततःसखी द्वययुतानगरोद्यानमागमत् ॥ ६ ॥ संत्रस्तासाभ्रमद्बालानालभत्कुत्रचित्सुखम् ॥ वनाद्वनान्तरंयातानै ववेदात्मनःसुखम् ॥ ७ ॥

जानि रोदन करनेलगी और भयसों व्याकुल होत भई ॥ ५ ॥ जो पुर और अटारी आदिकी भूमिनमें कहूँ सुखको न प्राप्त होत भई । ता पीछे दो सखीनको साथ लेके नगरके समीप जो बाग है तामें आवत भई ॥ ६ ॥ भयभीत वह बाला भ्रमण करत भई परन्तु सुखको कहूँ न प्राप्त होत भई एक बागसे दूसरे बागमें गई परन्तु अपनो सुख न देखत भई ॥ ७ ॥

ता पीछे भ्रमण करती भई वह बाला सिंहको है मुख जिनको और डाढैं तथा नेत्रोंसे भयंकर ऐसी डरावनी सूरतके दो राक्षसनको देखत भई ॥ ८ ॥ उनको देखि अतिव्याकुल हो भागनेमें तत्पर होत भई वा समय शांत रूप मौन धारण करे भये शिष्य समेत बैठे भये एकत्र तपस्वीको देखत भई ॥ ९ ॥ ता पीछे अपनी बांह उनके भयसे उस तपस्वीके गलेमें डारि कहतभई हे मुनि !

ततःसाभ्रमतीबालाददर्शातीवभीषणौ ॥ राक्षसौसिंहवदनौ दंष्ट्रानयनभीषणौ ॥ ८ ॥ तौदृष्ट्वाविह्वलाती वपलायनपराभवत् ॥ ददर्शतापसंशांतंसशिष्यंमौनमास्थितम् ॥ ९ ॥ ततस्तत्कंठमावृत्यानिजबाहुलतां भयात् ॥ मुनेमांरक्षशरणमागतास्मीत्यभाषत ॥ १० ॥ मुनिस्तांविह्वलांदृष्ट्वाराक्षसानुगतांतदा ॥ हुंका रेणैव तौ घोरौचकाराविमुखौतदा ॥ ११ ॥ तौहुंकारभयत्रस्तौदृष्ट्वातौविमुखौगतौ ॥ प्रणम्यदंडवद्भूमौ वृन्दावचनमब्रवीत् ॥ १२ ॥

मैं तुम्हारी शरणमें आइ हूं मेरी रक्षा करो ॥ १० ॥ तब मुनि राक्षसोंकरि खदेरी गई उस वृन्दाको व्याकुल देखि उन दोनों भयानक राक्षसोंको हुंकारसे भगाय देतभये ॥ ११ ॥ हुंकार करके भयसूं डरिके भाग गये उन राक्षसनको देखि वृन्दा दण्डवत्प्रणाम करिके वचन बोलती भई ॥ १२ ॥

वृन्दा बोली, हे कृपानिधि ! तुमने या घोर भयसे मेरी रक्षा करी अब मै कुछ प्रार्थना कराचाहौं सो कृपा कारिके आप वाको सुनिये ॥
॥ १३ ॥ हे प्रभो ! मेरा पति जलंधर रुद्रके साथ युद्ध करनेको गयो है सो वहां युद्धमें कैसे हैं हे उत्तमव्रतधारी महाराज ! यह मोसों
कहिये ॥ १४॥ नारद बोले, मुनि वाके वचनको सुनि कृपा कारिकै ऊपरको देखत भये इतनेमें दो वानर आके वा मुनीश्वरको नमस्कार

वृन्दोवाच ॥ रक्षिताहंत्वयाघोराद्भयादस्मात्कृपानिधे ॥ किंचिद्विज्ञप्तुमिच्छामिकृपयातन्निशम्यताम् ॥
॥ १३ ॥ जलंधरोहिमेभर्त्तारुद्रंयोद्धुंगतःप्रभो ॥ सतत्रास्तेकथंयुद्धेतन्मेकथयसुव्रत ॥ १४ ॥ नारद
उवाच ॥ मुनिस्तद्वाक्यमाकर्ण्यकृपयोर्ध्वमवैक्षत ॥ तावत्कपीसमायातौतंप्रणम्याग्रतः स्थितौ ॥ १५ ॥
ततस्तद्भूलतासंज्ञानियुक्तौगगनंगतौ ॥ गत्वाक्षणार्द्धादागत्यवानरावग्रतः स्थितौ ॥ १६ ॥ शिरःकबंध
हस्तौचदृष्ट्वाब्धितनयस्यसा ॥ पपातमूर्च्छिताभूमौभर्तृव्यसनदुःखिता ॥ १७ ॥

कारिके आगे खडे होत भये ॥ १५ ॥ और उन ऋषिको भौंहकी संज्ञासों प्रेरणा करेगये दो कपि आकाशको जात भये और जायके
आधेही क्षणमें फिरि आयके वे दोनों वानर मुनिके आगे स्थित होत भये ॥ १६ ॥ जलंधरका शिर और कबंध है हाथोंमें जिनके
ऐसे उन वानरोंको देखि वृन्दा पतिके कष्टसों दुःखित हो मूर्च्छित होके भूमिमें गिरत भयी ॥ १७ ॥

कमंडलुका जल छिडाकि वह उस समय मुनिकारि आश्वासित अर्थात् चैतन्य की गई वह अपने माथेको पतिके माथेपर धारिके दुःखी हो रोदन करती भई ॥ १८ ॥ वृन्दा बोली. हे प्रभु ! जो तुम पहिले सुखमें आनंदित करते सो तुम निरपराधिनी जो मैं प्यारी हौं तासों क्यों नहीं बोलोहो ॥ १९ ॥ जिन तुम कारिके विष्णु सहित सब देवता और गंधर्व जीतगये सो तुम तीनों लोकनके जीतनहारे अब

कमंडलुजलंसिक्त्वामुनिनाश्वासितातदा॥स्वभर्तृभालेसाभालंकृत्वादीनारुरोदह ॥१८॥ वृन्दोवाच ॥ यः पुरासुखसंवादे विनोदयसिमांप्रभो ॥ सकथंनवदस्यद्यवल्लभांमामनागसम् ॥ १९ ॥ येनदेवाः सगंधर्वा निर्जिताविष्णुनासह ॥ सकथंतापसेनाद्यत्रैलोक्यविजयाहितः ॥ २० ॥ नारद उवाच ॥ रुदित्वेतितदावृन्दातंमुनिंवाक्यमब्रवीत् ॥ वृन्दोवाच ॥ कृपानिधेमुनिश्रेष्ठजीवयैनंममप्रियम् ॥ त्वमेवास्यमुनेशक्तोजीवनायमतोमम ॥ २१ ॥ नारद उवाच ॥ इतितद्वाक्यमाकर्ण्यप्रहसन्मुनिरब्रवीत् ॥ मुनिरुवाच ॥ नायंजीवयितुंशक्तोरुद्रेणनिहतोयुधि ॥ २२ ॥

तपस्वीकारि कैसे मारे गये ॥ २० ॥ नारद बोले, वा समय वृन्दा ऐसे रोदन करकै वा मुनिसों वचन बोलत भई वृन्दा बोली हे कृपानिधि मुनिश्रेष्ठवर ! मेरे पतिको जिवावो हे मुनि ! तुमही याके जिवानेमें समर्थ हो यह मेरो मत है ॥२१॥ नारद बोले यह वाको वचन सुनि हँसिके मुनि बोलत भये मुनि बोले; रुद्रकारि संग्राममें मारेगये याको हमको जिवानेकी सामर्थ्य नहीं है ॥ २२ ॥

ताहू पर तेरे ऊपर जो कृपा है ता करिके युक्त मैं याहि जिवावौं हौं ॥ नारद बोले, ऐसे कहिके ब्राह्मण अंतर्धान होत भयो ताही समय वह सागरनंदन जीवत भयो ॥ २३ ॥ और वृन्दाको आलिंगन करके प्रसन्न मन ह्वो चुंबन करत भयो अनंतर वृन्दाहू पतिको देखि मनमें हर्षित होत भई ॥ २४ ॥ वा बागमें रहिके वा पतिसमेत बहुत दिनोंतक विहार करत भई नारद बोले, कभी भोगके अंतमें

तथापित्वत्कृपाविष्टयेनसंजीवयाम्यहम् ॥ नारद उवाच॥इत्युक्त्वांऽतर्दधेविप्रस्तावत्सागरनंदनः॥२३॥ वृंदामालिंग्यतद्वक्त्रंचुचुंबेप्रीतमानसः ॥ अथवृंदापिभर्त्तारंदृष्ट्वाहर्षितमानसा ॥ २४ ॥ रेमेतद्वनमध्यस्था तद्युक्ताबहुवासरम् ॥ नारदउवाच ॥ कदाचित्सुरतस्यांतेदृष्ट्वाविष्णुंतमेवहि ॥ २५ ॥ निर्भर्त्स्यक्रोधसंयु क्तावृंदावचनमब्रवीत् ॥ वृन्दोवाच ॥ धिक्त्वदीयंहरेशीलंपरदाराभिगामिनः ॥ २६ ॥ ज्ञातोऽसित्वंमया सम्यङ्मायीप्रत्यक्षतापसः ॥ यौत्वयामाययाद्वाःस्थौ स्वकीयौदर्शितौमम ॥ २७ ॥

वाहीको विष्णु देखत भई ॥ २५ ॥ फिरि क्रोधित ह्वो धमकाके वृंदा बोलत भई ॥ वृन्दा बोली, हे हरि ! पराई स्त्रीके साथके भोग करनहारे जो तुम हो तिनके शीलको धिक्कार है । प्रत्यक्षमें तपस्वी रूपके धारण करनहारे तुम भली भांति मायावी जाने गये और जो तुम माया करि मोको दिखाये वे तुम्हारे द्वारपाल हैं ॥ २६ ॥ २७ ॥

वेही दोनों राक्षस होके तुम्हारी स्त्रीको हरगें और तुमहू स्त्रीके दुःखा हो वनमें वानरोंकी सहायतावाले होउगे ॥ २८ ॥ सर्वेश्वरहू तुम भ्रमण करोगे और यह जो तुम्हारो शिष्य हो सो मृगरूप होयेंगे ऐसे कहिके वह वृन्दा उस वृन्दाम आसक्त है मन जिनको ऐसे विष्णु-कारि वारण कीगई हूँ अग्निमें प्रवेश करत भई ॥ २९ ॥ ३० ॥ ता पीछे हरि वृन्दाका बारम्बार स्मरण करतेहुए उसकी चिताकी

तावेवराक्षसौभूत्वाभार्यांतवहरिष्यतः ॥ त्वंचापिभार्यादुःखार्तोवनेकपिसहायवान् ॥ २८ ॥ भ्रमसर्वेश्वरै णोयंयस्ते शिष्यत्वमागतः ॥ इत्युक्त्वासातदावृन्दाप्राविशद्धव्यवाहनम् ॥ २९ ॥ विष्णुनावार्यमाणापित स्यामासक्तचेतसा ॥ ३० ॥ ततोहरिस्तामनुसंस्मरन्मुहुर्वृंदाचिताभस्मरजोवगुंठितः ॥ तत्रैवतस्थौमु निसिद्धसंघैःप्रबोध्यमानोऽपिययौनशांतिम् ॥ ३१ ॥ ति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये वृन्दोपा ख्यानेविष्णुसाक्षात्कारो नाम षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

भस्ममें लेटते भये वहा स्थित रहे और मुनियों तथा सिद्धोंके समूह करिके समझाये गय भी शान्तिको न प्राप्त होत भये ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिकृतायां कार्त्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां षोडशोऽध्यायः ॥ १६ ॥

नारद बोले, ता पीछे जलंधर रुद्रको अद्भुत पराक्रम जानि शिवजीको मोहित करतो सो मायाकारि गौरीको रचत भयो ॥ १ ॥ रथके ऊपर बँधीभई वा गौरीको शिवजी रोती भई देखि निशुंभ आद दैत्याकारि मारिजाती देखत भये ॥ २ ॥ गौरीकी वह दशा देखि शिवजी उद्विग्नमन हो अपने पराक्रमको भूलिके नाचा शिर कार स्थित होत भये ॥ ३ ॥ ता पीछे जलंधर फोंक पर्यंत घुसेभये तीनि

नारदउवाच ॥ ततोजलंधरोदृष्ट्वारुद्रमद्भुतविक्रमम् ॥ चकारमायया गौरींत्र्यंबकंमोहयन्निव ॥ १ ॥ रथोप रिचतांबद्धारुदंतींपार्वतींशिवः ॥ निशुंभप्रमुखाद्यैश्चवध्यमानांददर्शसः ॥ २ ॥ गौरींतथाविधांदृष्ट्वा शिवो ऽप्युद्विग्नमानसः ॥ अवाङ्मुखःस्थितस्तूष्णींविस्मृत्यस्वपराक्रमम् ॥ ३ ॥ ततोजलंधरोवेगात्त्रिभिर्विव्या धसायकैः ॥ आपुंखमग्नैस्तंरुद्रंशिरस्युरसिचोदरे ॥ ४ ॥ ततोजज्ञेसतांमायांविष्णुनासंप्रबोधितः ॥ रौद्र रूपधरो जातो ज्वालामालातिभीषणः ॥ ५ ॥

बाणनसे शिवजीको शिरमें छातीमें और पेटमें वेगसों वेधत भयो ॥ ४ ॥ ता पीछे विष्णुकारि चेताये शिव वा मायाको जानिजात भये और भयानक रूप धारण कारिके ज्वालाकी माला अर्थात् ज्वालाके समूहसों अतिभयंकर होत भये ॥ ५ ॥

उनका अत्यन्त महाभयानकरूप देखिके दैत्य सन्मुख स्थित होनेको न समर्थ होत भये किन्तु वे दशों दिशाओंको भागिजातभये॥६॥ ता पीछे रुद्र उन शुंभ निशुंभ दोनों दैत्यनको शाप देत भये कि तुम मेरे युद्धसे भागे हो इस कारण गौरी करिके मारनेयोग्य होउगे॥७॥ फिरि जलंधर वेगसों पैने बाणोंकी वर्षा जो है ताहि करत भयो तब भूमंडल बाणरूपी बडे अंधकारसों आच्छादित होत भयो ॥ ८ ॥

तस्यातीवमहारौद्रंरूपंदृष्ट्वामहासुराः॥ नशेकुःसंमुखेस्थातुं भेजिरेतेदिशोदश ॥ ६ ॥ ततःशापंददौरुद्रस्तयोःशुंभनिशुंभयोः ॥ ममयुद्धादपक्रांतौगौर्यावध्यौभविष्यथः ॥ ७ ॥ पुनर्जलंधरोवेगाद्ववर्षनिशितैः शरैः ॥ बाणांधकारसञ्छन्नंतदाभूमितलंमहत् ॥ ८ ॥ यावद्रुद्रश्चचिच्छेदतस्यबाणचयंजवात्॥ तावत्सपरिघेणाशुजघानवृषभंबली ॥ ९ ॥ वृषस्तेनप्रहारेणपरावृत्तोरणांगणात् ॥ रुद्रेणाकृष्यमाणोऽपिनतस्थौरणभूमिषु ॥ १० ॥ ततःपरमसंक्रुद्धोरुद्रोरौद्रवपुर्धरः ॥ चक्रंसुदर्शनंवेगाच्चिक्षेपादित्यवर्च्चसम् ॥ ११ ॥

जैसे शिवजी वाके बाणोंके समूहको वेगसे काटत भये वैसेही वह बली परिघसों बैलको मारत भयो ॥ ९ ॥ वा प्रहारसों रणभूमिते लौटो भयो वह बैल रुद्र करि खैंचोभी गयो परन्तु रणभूमिमें न ठहरत भया ॥ १० ॥ ता पीछे भयानक शरीर धारण करनहारे शिव अतिक्रोधित हो सूर्यके समान है तेज जाको ऐसे सुदर्शन नाम चक्रको वेगसों चलावत भये ॥ ११ ॥

आकाश पृथ्वीको प्रज्वलित करतो भयो वह वेगसों पृथ्वीतलमें गिरता और बडे विशाल हैं नेत्र जामें ऐसो जो जलंधरको शिर है ता
हि शरीरसे हारि लेत भयो ॥ १२ ॥ और या जलंधरको शरीर पृथ्वीको शब्दायमान करत भयो रथसे गिरत भयो और देहसे जो तेज
निकसो सो रुद्रम लीन हो जात भयो ॥ १३ ॥ और वृन्दाके देहको जो तेज हो वह गौरीमें लीन, होतभयो या पीछे ब्रह्मादिक सब

प्रदहन्नोदसीवेगात्पपातवसुधातले ॥ जहारतच्छिरःकायान्महदायतलोचनम् ॥ १२ ॥ रथात्कायःपपा
तास्यनादयन्वसुधातलम् ॥ तेजश्चनिर्गतं देहात्तद्रुद्रेलयमागतम् ॥ १३ ॥ वृन्दादेहोद्भवंतेजस्तद्गौर्यांलय
मागतम् ॥ अथब्रह्मादयोदेवाहर्षेणोत्फुल्ललोचनाः ॥१४॥ प्रणम्यशिरसादेवंशशंसुर्विष्णुचेष्टितम् ॥ देवा
ऊचुः ॥ महादेवत्वयादेवारक्षिताःशत्रुजाद्भयात् ॥ १५ ॥ किंचिदन्यत्समुद्भूतंतत्रकिंकरवामहे॥वृन्दाऽ्ला
वण्यसंभ्रांतोविष्णुस्तिष्ठतिमोहितः ॥ १६ ॥ रुद्रउवाच ॥ गच्छध्वंशरणं देवाविष्णोर्मोहापनुत्तये ॥ शर
ण्यांमोहिनींमायांसावःकार्यंकरिष्यति ॥ १७ ॥

देवता हर्षसे प्रफुल्लित हैं नेत्र जिनके ऐसे होत भये ॥ १४ ॥ फिर वे शंभुको प्रणाम करि विष्णुका वृत्तान्त कहतभये ॥ देवता बोले; हे
महादेव ! तुमकरिके देवता शत्रुसों उत्पन्न जो भय हो ताते रक्षा किये गये ॥ १५ ॥ कुछ और भय उत्पन्न भयो है वामें अब हमकहा करैं
वह यह है कि वृन्दाकी सुंदरतासे संभ्रममें पडे विष्णु मोहित हो वहीं अर्थात् वृन्दाकी चिताभस्ममें पडे हैं ॥ १६ ॥ रुद्र बोले हे देव

ताओ विष्णुका मोह दूरिकरनेके निमित्त शरण जानेयोग्य जो मोहिनी माया है ताकी शरणमें जाओ वह तुम्हारो कार्य करेगी ॥ १७ ॥
नारद बोले; ऐसे कहिके शिवजी तव सब गणोंसहित अंतर्धान हो जात भये और देवता भक्त हैं प्यारे जाको ऐसी जो मूल प्रकृति
अर्थात् माया है ताकी स्तुति करत भये ॥ १८ ॥ देवता बोले, जासे उत्पन्न भये सत्त्व रज तम ये गुण सृष्टि पालन और संहारके
करनहारे हैं और जाकी इच्छासों संसारकी उत्पत्ति और नाश होय है वा मूलप्रकृतिकूं हम नमस्कार करें हैं ॥ १९ ॥ निश्चयकरि तेईस

नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वांतर्दधेदेवः सहभूतगणैस्तदा ॥ देवाश्चतुष्टुवुर्मूलप्रकृतिंभक्तवत्सलाम् ॥१८॥ देवा
ऊचुः ॥ यदुद्भवाः सत्त्वरजस्तमोगुणाः सर्गस्थितिध्वंसनिदानकारिणः ॥ यदिच्छयाविश्वमिदंभवाभवौ
तनोतिमूलप्रकृतिंनताः स्मताम् ॥ १९ ॥ याहित्रयोविंशतिभेदशब्दिताजगत्यशेषेसमधिष्ठितापरा ॥ यद्रूप
कर्माणिजडास्त्रयोऽपिदेवास्तुमूलप्रकृतिंनताः स्मताम् ॥२०॥ यद्भक्तियुक्ताः पुरुषास्तुनित्यंदारिद्र्यभीमोह
पराभवादीन् ॥ नप्राप्नुन्त्येवहिभक्तवत्सलांसदैवमूलप्रकृतिंनताः स्मताम् ॥ २१ ॥

भेदोंकारि उच्चारण की जाती है और संपूर्ण जगत्में अधिष्ठित है और पर है जाके रूप और कर्मोंके जाननेमें तीनों देवताभी जड हैं
वा मूलप्रकृतिको हम नमस्कार करें हैं ॥ २० ॥ जाकी भक्ति करिके युक्त पुरुष सदा दारिद्र्य भय मोह और तिरस्कार आदिको
नहीं प्राप्त होय हैं ऐसी और भक्त जाके प्यारे हैं ऐसी मूलप्रकृतिको हम सदा नमस्कार कर हैं ॥ २१ ॥

नारद बोले, जो पुरुष या स्तोत्रका एकाग्रमन हो त्रिकाल पाठ करै है वाको दरिद्रता मोह और दुःख कभी नहीं स्पश करैं हैं ॥ २२ ॥ या प्रकार स्तुतिको करते भये आकाशमें स्थित और ज्वालासे व्याप्त किये हैं दिशाओंके अन्तर जाने ऐसे तेजोमंडलमें स्थित देखत भये ॥ २३ ॥ वा तेजोमंडलके मध्यसे सब देवता आकाशमें विचरनेवाली वाणीको सुनत भये शक्ति बोली मैं ही तीनि प्रकारसे

नारदउवाच॥स्तवमेतत्त्रिसंध्यंयःपठेदेकाग्रमानसः ॥दारिद्र्यमोहदुःखानिनकदाचित्स्पृशन्तितम्॥२२॥ इत्थं स्तुवंतस्तेदेवास्तेजोमंडलमास्थितम् ॥ ददृशुर्गगनेतत्रज्वालाव्याप्तदिगंतरम्॥ २३ ॥ तन्मध्याद्वार तींसर्वेशुश्रुवुर्व्योमचारिणीम् ॥ शक्तिरुवाच ॥ अहमेवत्रिधाभिन्नातिष्ठामित्रिविधैर्गुणैः ॥ २४ ॥ गौरी लक्ष्मी स्वराज्योतीरजःसत्त्वतमोगुणैः ॥ तत्रगच्छततःकार्यंविधास्यंतिचवःसुराः ॥ २५ ॥ नारद उवाच ॥ शृण्वतामितितांवाचमंतर्द्धानमगान्महः ॥ देवानांविस्मयोत्फुल्लनेत्राणां तत्तदानृप ॥ २६ ॥

व्यक्तियुक्त हो तीनों गुणोंकरिके स्थित रहूँहूँ ॥ २४ ॥ गौरी लक्ष्मी और सरस्वती इनके रज, सत्व, तम, इन तीनों गुणोंका आश्रय है । हे देवताओ ! वहां वे तुम्हारा कार्य करैंगी ॥ २५ ॥ नारद बोले, हे राजा ! विस्मयसों विकसित है नेत्र ऐसे देवाताओंकी वाणीके सुनत भये वा समय वह तेज अन्तर्धान होत भयो ॥ २६ ॥

ता पीछे वाक्य करि प्रेरित जे सब देवताहैं ते गौरी लक्ष्मी तथा सरस्वतीको भक्तिमें तत्पर होके प्रमाण करतभये ॥ २७ ॥ ता पीछे भक्त हैं प्यारे जिनको ऐसी वे तीनों देवताओंको प्रणाम करते देखि उनको बीज देती भई और उस समय उनसों वचनहूँ कहत भई ॥ २८ ॥ देवी बोलीं, इन बीजनको वहां जाइके बोइ देउ जहां विष्णु बैठेहैं ता पीछे तुम्हारो कार्य सिद्ध होयगो ॥ २९ ॥ नारद

ततःसर्वेऽपितेदेवागत्वातद्वाक्यनोदिताः ॥ गौरींलक्ष्मींस्वरांचैवप्रणेमुर्भक्तितत्पराः ॥ २७ ॥ ततस्ता स्तान्सुरान्दृष्ट्वाप्रणतान्भक्तवत्सलाः ॥ बीजानिप्रददुस्तेभ्योवाक्यान्यूचुस्तदाचताः ॥ २८ ॥ देव्यऊचुः॥ इमानितत्रबीजानिविष्णुर्यत्रावतिष्ठते ॥ निवपध्वंततःकार्यंभवतांसिद्धिमेष्यति ॥ २९ ॥ नारद उवाच ॥ ततस्तुहृष्टाःसुरसिद्धसंघाःप्रगृह्यबीजानिविचिक्षिपुस्ते ॥ वृंदाचिताभूमितलेसयत्रविष्णुःसदा तिष्ठतिसौ ख्यहीनः ॥ ३० ॥ इत्येतत्सत्यवाक्यस्यमाहात्म्यंसमुदाहृतम् ॥ यःपठेच्छृणुयाद्वापिस्वर्गलोकंसग च्छति॥३१॥ शृणुयादेकचित्तेनअविघ्नेनापियुज्यते ॥ सुतैर्विमुक्तायानारीनरश्चापिपठेत्सदा ॥ ३२ ॥

बोले, ता पीछे देवता और सिद्धनके समूह आनंदित हो बीजनको ले वहां बोलत भये जहां वृन्दाकी चिताभूमिमें सुखरहित विष्णु सदा विराजमानहैं ॥ ३० ॥ यह हमने सत्य वाक्यका माहात्म्य कहो याको जोकोई पढैगो वा सुनैगो वह स्वर्गलोकको प्राप्तहोयगो ॥ ३१ ॥ और जो एकाग्रचित्त होके सुनैगो वाके विघ्नकभी न होंगे और जो पुत्रहीन नरनारी सुनैंगे वा पढैंगे उनको पुत्र होइगो ॥ ३२ ॥

इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मकृतकार्त्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भावार्थबोधिनीसमाख्यायां सप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ नारद बोले, हे राजा! बोये भये बीजनसों धात्री मालती और तुलसी ये तीनों वनस्पति होत भई ॥१॥ जो ब्रह्माकी स्त्रीके बीजनसों उत्पन्न भई वह धात्री कही गई और जो लक्ष्मीके दिये बीजनसों उत्पन्न भई वह मालती कही गई और जो गौरीके

इति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये जलंधरवधोनामसप्तदशोऽध्यायः ॥ १७ ॥ नारद उवाच ॥ क्षितेभ्यस्तत्रबीजेभ्योवनस्पतयस्त्रयोऽभवन् ॥ धात्रीचमालतीचैवतुलसीचनृपोत्तम ॥ १ ॥ धात्र्युद्भवास्मृताधात्रीमाभवामालतीस्मृता ॥ गौरीभवाचतुलसीरजःसत्त्वतमोगुणाः ॥ २ ॥ स्त्रीरूपिण्योवनस्पत्योदृष्ट्वाविष्णुस्तदानृप ॥ उत्तस्थौसंभ्रमाद्वृन्दारूपातिशयविभ्रमः ॥ ३ ॥ दृष्ट्वाऽऽशुतेनताराकामासक्तेनचेतसा ॥ तेचापितुलसीधात्र्यौविष्णुमेवावलोकताम् ॥ ४ ॥

बीजनसों उत्पन्न भई वह तुलसी कहाई, ये तीनों क्रमसे रजोगुण सतोगुण तमोगुण रूप होतभई ॥ २ ॥ हे राजा! तब स्त्रीके रूपमें जो वनस्पति हैं तिन्हें वृन्दाके रूपको अतिशय विलापयुक्त देखि विष्णु शीघ्रही उठतभये ॥ ३ ॥ काममें आसक्त है चित्त जिनका ऐसे विष्णु करिके वे प्रीतिसों देखी गई वे तुलसी और धात्रीहू विष्णुहीको देखत भई ॥ ४ ॥

जो बीज पहले लक्ष्मीकरके ईर्ष्यासहित दियो गयो ताते वा बीजसे उत्पन्न स्त्री विष्णुमें ईर्ष्यापर होतभई ॥ ५ ॥ इस कारण अति निंदित वह बर्बरी या नामको प्राप्त होतभई और धात्री तथा तुलसी उनमें प्रीति करनेसे उनकी प्रीति बढावनहारी होत भई ॥ ६ ॥ तापीछे भूलिगयो है दुःख जिनको ऐसे सब देवताओंकरि नमस्कार कियेगये विष्णु प्रसन्न हो उन दोनोंसमेत वैकुण्ठभवनको जात

यच्चलक्ष्म्यापुराबीजमीर्ष्ययैवसमार्पितम् ॥ तस्मात्तदुद्भवानारीतास्मिन्नीर्ष्यापराभवत् ॥ ५ ॥ अतःसाबर्बरीत्याख्यामवापातविगर्हिता ॥ धात्रीतुलस्यौतद्रागात्तस्यप्रीतिप्रदेसदा ॥ ६ ॥ ततोविस्मृतदुःखोसौ विष्णुस्ताभ्यांसहैवतु ॥ वैकुंठमगमद्धृष्टः सर्वदेवनमस्कृतः ॥ ७॥ कार्त्तिकोद्यापनेविष्णोस्तस्मात्पूजा विधीयते॥तुलसीमूलदेशेतुप्रीतिदासाततःस्मृता॥८॥तुलसीकाननंराजन्गृहेयस्यावतिष्ठते ॥ तद्गृहंतीर्थरूपंतुनायांतियमकिंकराः॥९॥सर्वपापहरंपुण्यंकामदंतुलसीवनम्॥रोपयंतिनरश्रेष्ठास्तेनपश्यंतिभास्करिम् १०

भये ॥ ७ ॥ ताहीसों कार्त्तिकके उद्यापनके समय तुलसीमूलके निकट विष्णुकी पूजा कीजातीहै और वह विष्णुकी प्रीति बढावनहारी कही गईहै ॥ ८ ॥ हे राजा ! जाके घरमें तुलसीवन स्थित रहे है वाको घर तीर्थरूप है वामें यमके दूत नहीं आवै हैं ॥ ९॥ सब पापनके दूर करनहारे और कामनाके देनहारे पवित्र तुलसीके वनको जे पुरुष लगावै हैं वे श्रेष्ठमनुष्य यमराजका दर्शन नहीं करै हैं ॥ १० ॥

नर्मदा नदीका दर्शन तैसेही गंगाजीका स्नान और तुलसीके वनका संसर्ग ये तीनों समान कहे गये हैं ॥ ११ ॥ लगानेसे पालनेसे सींचनेसे और दर्शनसे तुलसी मनुष्योंकी वाणी मन और कायासे इकट्ठे करे भये पापनको जलाय देय है ॥ १२ ॥ जो पुरुष तुलसीकी मंजरीनसों हरि कहिये विष्णु हर कहिये शिव इनको पूजन करैहै वह गर्भरूप घरमें नहीं आवै है और निस्संदेह मुक्तिको पावनहारी

दर्शनंनर्मदायास्तु गंगास्नानंतथैवच ॥ तुलसीवनसंसर्गःसममेतत्त्रयंस्मृतम् ॥ ११ ॥ रोपणात्पालनात्से काद्दर्शनात्स्पर्शनान्नृणाम् ॥ तुलसीदहतेपापंवाङ्मनःकायसंचितम् ॥ १२ ॥ तुलसीमंजरीभिर्यः कुर्याद्धरिहरार्चनम् ॥ नसगर्भगृहंयातिमुक्तिभागीनसंशयः ॥ १३ ॥ पुष्कराद्दीनितीर्थानिगंगाद्याः सरि तस्तथा ॥ वासुदेवादयोदेवास्तिष्ठंतितुलसीदले ॥ १४ ॥ तुलसीमृत्तिकालिप्तोयस्तुप्राणान्विमुंचति ॥ यमोऽपिनेक्षितुंशक्तोयुक्तः पापशतैरपि ॥ विष्णोःसायुज्यमाप्नोतिसत्यंसत्यंनृपोत्तम ॥ १५ ॥

होयहै ॥ १३ ॥ पुष्कर आदिक तीर्थ और गंगा आदिक नदी और वासुदेव आदिक देवता तुलसी दलमें वास करै हैं ॥ १४ ॥ तुलसीके मूलकी मृत्तिका जाके अंगमें लगी भई है ऐसो जो पुरुष प्राणनको छोडैहै ताहि सैंकडों पापोंकरि युक्त होनेहूँपर यमराज देखनको हू समर्थ नहीं है, हे राजा ! और वह विष्णुके समीप प्राप्त होय है यह वार्ता वारंवार सत्य है ॥ १५ ॥

जो पुरुष तुलसीकाष्ठको चंदन धारण करै है वाकी देहको कियो भयोहू पाप नहीं स्पर्श करैहै ॥ १६ ॥ हे राजा ! जहां २ तुलसीके वनकी छाया हो वहां २ श्राद्ध करनो चाहिये और पितरनको दियो भयो अक्षय होय है ॥ १७ ॥ हे राजा ! आमलेकी छायामें जो पिंडदान करै है तौ नरकमें स्थितहू वाके पितर तृप्तिको प्राप्त होय हैं ॥ १८ ॥ हे राजाओंमें उत्तम ! मस्तकमें और हाथमें और

तुलसीकाष्ठजंयस्तुचंदनंधारयेन्नरः ॥ तद्देहंनस्पृशतिपापंक्रियमाणमपीहयत् ॥ १६ ॥ तुलसीविपिनच्छायायत्रयत्रभवेन्नृप ॥ तत्रश्राद्धंप्रकर्त्तव्यंपितॄणांदत्तमक्षयम् ॥ १७ ॥ धात्रीच्छायासुयःकुर्यात्पिंडदानंनृपोत्तम ॥ तृप्तिंप्रयांतिपितरस्तस्ययेनरकेस्थिताः ॥ १८ ॥ मूर्ध्निपाणौमुखेचैवदेहेचनृपसत्तम ॥ धत्तेधात्रीफलंयस्तुसविज्ञेयोहरिःस्वयम् ॥ १९ ॥ धात्रीफलंचतुलसीमृत्तिकाद्वारकोद्भवा ॥ यस्यदेहेस्थितानित्यंसजीवन्मुक्तउच्यते ॥ २० ॥ धात्रीफलविमिश्रैस्तुलसीदलमिश्रितैः ॥ जलैःस्नातिनरस्तस्यगंगास्नानफलंस्मृतम् ॥ २१ ॥

मुखमें और देहमें जो पुरुष आमलेके फलको धारण करै है वह साक्षात् विष्णुको रूप है ॥ १९ ॥ आमलेका फल तुलसी और द्वारिकाकी मृत्तिका ये जाकी देहमें नित्य स्थिर रहे हैं वह पुरुष जीवन्मुक्त कहो जाय है ॥ २० ॥ आमलेके फलों और तुलसीके दलोंकरि मिले भये जलसों जो मनुष्य स्नान करै है उसे गंगास्नानका फल मिलै है ॥ २१ ॥

जो मनुष्य आमलेके पत्तों या फलोंकरिके देवताओंका पूजन करै है वह सुवर्ण मणि और मोतिनके समूहकारि जो पूजन है ताके फलको प्राप्त होयहै ॥ २२ ॥ तीर्थ मुनीश्वर और देवता कार्तिकमें तुलाराशिके सूर्य होनेके समय सदा धात्रीका आश्रय लेके स्थित रहेहैं ॥ २३ ॥ जो मनुष्य द्वादशीको तुलसीदलका तथा कार्तिकमें धात्रीफलका छेदन करैहै वह अतिनिंदित नरकको प्राप्त होयहै ॥२४॥

देवार्चनंनरःकुर्याद्धात्रीपत्रैः फलैरपि॥सुवर्णमणिमुक्तौघैरर्चनस्याप्नुयात्फलम् ॥ २२ ॥ तीर्थानिमुनयो देवा यज्ञाः सर्वेऽपिकार्तिके ॥ नित्यंधात्रींसमाश्रित्यतिष्ठंत्यर्येतुलाश्रिते ॥२३॥ द्वादश्यांतुलसीपत्रंधात्री पत्रंतुकार्तिके ॥ लुनातिसनरोगच्छेन्निरयानतिगर्हितान् ॥ २४ ॥ धात्रीछायांसमाश्रित्यकार्तिकेऽन्नंभु नक्तियः ॥ अन्नसंसर्गजंपापमावर्षंतस्यनश्यति ॥ २५ ॥ धात्रीमूलेतुयोविष्णुंकार्तिकेपूजयेन्नरः॥ विष्णुः क्षेत्रेषुसर्वेषुपूजितस्तेनसर्वदा ॥ २६ ॥

जो कार्तिकके महीनेमें आमलेके वृक्षके नीचे बैठिके अन्नका भोजन करै वाको अन्नके संसर्गसों उत्पन्न भयो एकवर्षपर्यन्तको पाप नाशको प्राप्त होयहै ॥ २५ ॥ जो कार्तिकके महीनेमें आमलेके वृक्षके नीचे विष्णुको पूजन करैहै वाको सब क्षेत्रोंमें जो विष्णुके पूजनका फल है सो सदा प्राप्त होय है ॥ २६ ॥

धात्री और तुलसीके माहात्म्यको भगवान्‌की महिमाके समान चतुर्मुख ब्रह्माहू कहनेको समर्थ नहीं है ॥ २७ ॥ धात्री और तुलसीकी उत्पत्तिके कारण जो मनुष्य भक्तिसों सुनैहै वा सुनावैहै वह पापरहित हो अपने पुरुषोंसमेत उत्तम विमानमें बैठि स्वर्गको जायहै॥ २८॥ इतिश्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपण्डितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिविरचितायांकार्त्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भाषार्थबोधिनिसमाख्या-

धात्रीतुलस्योर्माहात्म्यमपिदेवश्चतुर्मुखः॥नसमर्थोभवेद्वक्तुंयथादेवस्यशार्ङ्गिणः॥२७॥ धात्रीतुलस्युद्भव कारणयःशृणोतियः श्रावयेचभक्त्या॥विधूतपाप्मासहपूर्वजैस्स्वैस्स्वर्गंव्रजत्यग्र्यविमानसंस्थः॥२८॥ इतिश्रीपद्मपुराणेकार्त्तिकमाहात्म्येधात्रीतुलस्योर्माहात्म्यकथनंनामाष्टादशोऽध्यायः॥१८॥ पृथुरुवाच॥ सेतिहासमिदंब्रह्मन्माहात्म्यंकथितंमम॥अत्याश्चर्यकरंसम्यक्तुलस्यास्तच्छ्रुतंमया॥ १ ॥यदूर्ज्जव्रतिनः पुंसःफलंमहदुदाहृतम्॥ तत्पुनर्ब्रूहिमाहात्म्यंकेनचाणमिदंकथम्॥ २ ॥

यामष्टादशोऽध्यायः ॥ १८ ॥ पृथु बोले, हे महाराज! इतिहासकरिके सहित अति आश्चर्यका करनेवाला तुलसीको माहात्म्य और व्रत आपने मोसे वर्णन कियो सो मन भली भाँति श्रवण कियो ॥ १ ॥ जो कार्त्तिकव्रत करनहारे पुरुषका फल है सो आपने कहो अब फिरि माहात्म्य कहिये और यह व्रत पहिले कौनकारि कियोगयो और कैसे कियो सो सब वर्णन करिये ॥ २ ॥

नारद बोले, सह्याचल पर्वत पर करवीरपुर नाम नगरमें धर्मका जाननेवाला धर्मदत्त सो प्रसिद्ध कोई ब्राह्मण होत भयो ॥ ३ ॥ सदा विष्णुका व्रत करनहारो और निरंतर विष्णुपूजामें तत्पर और द्वादशाक्षरमन्त्रके जपमें निष्ठ और अभ्यागतोंका सेवक ऐसो वह धर्मदत्त होत भयो ॥ ४ ॥ काहू समय वह कार्तिक महीनेमें पहरभर रातिरहे हरिके जागरणके निमित्त हरिमंदिरको गमन करत भयो ॥ ५ ॥

नारदउवाच ॥ आसीत्सह्याद्रिविषयेकरवीरपुरेपुरा ॥ ब्राह्मणोधर्मवित्कश्चिद्धर्मदत्तेतिविश्रुतः ॥ ३ ॥ विष्णुव्रतकरःशश्वद्विष्णुपूजारतःसदा ॥ द्वादशाक्षरविद्यायांजपनिष्ठोऽतिथिप्रियः ॥ ४ ॥ कदाचित्कार्त्तिकेमासिहरिजागरणायसः ॥ रात्र्यांतुर्य्यांशशेषायांजगामहरिमंदिरम् ॥ ५ ॥ हरिपूजोपकरणान्प्रगृह्यव्रजतातदा ॥ तेनदृष्टासमायाताराक्षसीभीमदर्शना ॥ ६ ॥ वक्रदंष्ट्राललज्जिह्वानिमग्नारक्तलोचना ॥ दिगंबराशुष्कमांसालंबोष्ठीघर्घरस्वना ॥ ७ ॥

हरिके पूजनकी सामग्री लेकरि जातो हुओ जो वह ब्राह्मण है ताने वा समय भयंकर है रूप जाको ॥ ६ ॥ वक्र कहिये टेढी हैं डाढैं जाकी और चलायमान है जीभ जाकी और भीतरको गडे भये लाल हैं नेत्र जाके और नंगी ओर सूखो है मांस जाको लंबे हैं होठ जाके और घर्घराहटयुक्त है शब्द जाको ऐसी राक्षसी देखा ॥ ७ ॥

वाही देखिके भयसूं घबरायो भयो और कांपत है सब अंग जाके ऐसो वह ब्राह्मण भयके मारें पूजाकी जो सामग्री है तिनसों और पूजाके निमित्त जो जल हो तासों वा राक्षसीको मारत भयो ॥ ८ ॥ जाते हरिको स्मरण करिके तुलसीयुक्त जलसों वह वाहि मारत भयो ताते वा राक्षसीके सब पाप नाश होजाते भये ॥ ९ ॥ या पीछे वह पाहिले जन्मके कर्मोंके परिपाकसों उत्पन्न भई अपनी दशाको स्मरण

तांदृष्ट्वाभयावित्रस्तःकंपितावयवस्तदा ॥ पूजोपकरणैस्सर्वैःपयोभिश्चाहनद्भयात् ॥ ८ ॥ संस्मृत्ययद्धरे र्नामतुलसीयुक्तवारिणा॥सोऽहनत्पातकंतस्यास्तस्मात्सर्वमगाल्लयम् ॥९॥ अथसंस्मृत्यसापूर्वजन्मकर्म विपाकजाम् ॥ स्वांदशामब्रवीद्विप्रंदंडवच्चप्रणम्यसा ॥ १० ॥ कलहोवाच ॥ पूर्वकर्मविपाकेनदशामेतां गतास्म्यहम् ॥ तत्कथंतुपुनर्विप्रप्राप्नुयामुत्तमांगतिम्॥११॥ नारदउवाच ॥ तांदृष्ट्वाप्रणतांसम्यग्वदमा नांस्वकर्मतत ॥ अतीवविस्मितोविप्रस्तदावचनमब्रवीत् ॥ १२ ॥

करिके ब्राह्मणको दंडवत् प्रणाम करिके बोलत भई ॥१०॥ कलहा बोली, पहिले कर्मके फलसों मैं या दशाको प्राप्त भई हौं हे ब्राह्मण ! ताते मैं कैसे उत्तम गतिको प्राप्त होऊं ॥ ११ ॥ नारद बोले, भली भाँति प्रणाम करि अपने वा कर्मको कहती भई जो कलहा है ताहि देखि वह ब्राह्मण बहुतही विस्मित हो वा सयम वचन बोलत भयो ॥ १२ ॥

धर्मदत्त बोलो, कौनस कर्मके फलसो तू ऐसा दशाको प्राप्त भई और कहांकी है कोन है कैसा तेरो शील है सो सब मोसों कह ॥ १३ ॥ कलहा बोली, हे महाराज ! सौराष्ट्रनगरमें भिक्षु नाम ब्राह्मण होतभयो पहिले मैं ताकी स्त्री थी कलहा मेरो नाम था और बहुतही निठुर थी ॥ १४ ॥ मो करिकै कबहूँ वचनसूभी भर्ताको शुभ न कियो गया और कबहूँ मीठो अन्न न दियो सदा पतिकी वंचन

धर्मदत्त उवाच ॥ केनकर्मविपाकेनत्वंदशामीदृशींगता ॥ कुतस्त्या काचकिंशीलातत्सर्वंकथयस्वमे ॥ १३ ॥ कलहोवाच ॥ सौराष्ट्रनगरेब्रह्मन्भिक्षुर्नामाभवद्द्विजः ॥ तस्याहंगृहिणीपूर्वंकलहाख्याऽतिनिष्ठुरा ॥ १४ ॥ नकदाचिन्मयाभर्तुर्वचसापिशुभंकृतम् ॥ नार्पितंतस्यमिष्टान्नंभर्तुर्वंचनशीलया ॥ १५ ॥ कलहप्रियया नित्यं भयोद्विग्नमनायदा ॥ परिणेतुंतदान्यांतुपतिश्चक्रेमतिंमम ॥ १६ ॥ ततोगरंसमादायप्राणांस्त्यक्त्वामृतिंगता ॥ अथबद्धावध्यमानांमांनिन्युर्यमकिंकराः ॥ १७ ॥

शील रही ॥ १५ ॥ कलह है प्यारो जाहि ऐसी मोसों जब उद्विग्न मन भयो तब मेरो पति दूसरी स्त्रीके व्याहनेको मन करत भयो ॥ १६ ॥ ता पछि मैं विषको खायके प्राणनको तज मृत्युको प्राप्त भई तब यमक दूत मांको बांधिके मारते भये यमलोकको ले जात भये ॥ १७ ॥

तब यम मोकों देखिके चित्रगुप्तसो पूंछत भये ॥ यम बोले, हे चित्रगुप्त ! याने कहा काम कियो है सो देखो ॥ १८ ॥ याने भलो वा बुरो जो कर्म कियो होय ताको फल पावै। कलहा बोली तब वह चित्रगुप्त मोकों धमकातो भयो वचन बोलत भयो ॥ १९ ॥ चित्तगुप्त बोले, याने किंचित् मात्रहू शुभ कर्म नहीं कियो है मिष्टअन्नको खाती भई याने भर्ताकों वह न दियो ॥ २० ॥ याते वल्गुनी

यमश्चमांतदा दृष्ट्वाचित्रगुप्तमपृच्छत ॥ यमउवाच ॥ अनयाकिंकृतंकर्मचित्रगुप्तविलोकय ॥ १८ ॥ प्राप्नो त्वेषाकर्मफलंशुभंवायदिवाऽशुभम् ॥ कलहोवाच ॥ चित्रगुप्तस्तदावाक्यंभर्त्सयन्मामुवाचसः ॥ १९ ॥ चित्रगुप्तउवाच ॥ अनयातुशुभंकर्मकृतंकिंचिन्नविद्यते ॥ मिष्टान्नंभुंजमानेयंनभर्तारितदर्पितम् ॥ २० ॥ अत श्चवल्गुनीयोन्यांस्वविष्ठादीचतिष्ठतु ॥ भर्तृद्वेषकरीह्येषानित्यं कलहकारिणी ॥ २१ ॥ विष्ठादाशूकरीयोनौ तस्मात्तिष्ठत्वियंहरे ॥ पाकभांडेसदाभुंक्तेभुंक्तेचैकायतस्ततः ॥ २२ ॥

नाम जो पक्षी है ताकी योनिमें परिके अपनी विष्ठा खाती रहै यह भर्तासों सदा द्वेष और कलह करनहारी है ॥ २१ ॥ याते विष्ठा खानेवाली शूकरकी योनिमें प्राप्त होय सदा पाक करनेके पात्र अर्थात् करोही वटला आदिमें भोजन करती थी और अकेली भोजन करती थी ॥ २२ ॥

याते अपने उत्पन्न भये बच्चनकी खानहारी बिल्लीकी योनिमें प्राप्त होय जासों याने भर्ताके ऊपर विष खायके आत्मघात कियो ॥ ॥ २३ ॥ ताते अतिनिंदित यह प्रेत शरीरमें स्थित रहै और याहीते यह तुम्हारे दूतों करिके मरु देशमें पहुंचाने योग्य है ॥ २४ ॥ वहां प्रेत शरीरमें स्थित यह बहुत कालपर्यंत रहे ता पीछे अशुभ करनहारी यह और तीनि योनियोंको भोग करै ॥ २५ ॥ कलहा

तस्मादेषाबिडालीतुस्वजातापत्यभक्षिणी ॥ भर्त्तारमपिचोद्दिश्यह्यात्मघातःकृतोऽनया ॥२३॥ तस्मात्प्रेतशरीरेऽपितिष्ठत्वेषातिनिंदिता ॥ अतश्चैवमरौदेशेप्रापितव्याभटैस्तव ॥ २४ ॥ तत्रप्रेतशरीरस्थाचिरंतिष्ठत्वियं ततः ॥ ऊर्ध्वंयोनित्रयंचैषाभुनक्त्वशुभकारिणी ॥२५॥ कलहोवाच ॥ साहंपंचशताब्दानिप्रेतदेहस्थिताकिल॥क्षुत्तड्भ्यांपीडितानित्यंदुःखितास्वेनकर्मणा ॥ २६ ॥ क्षुत्तृड्भ्यांपीडिताविश्यशरीरंवणिजांत्वहम् ॥ आयातादक्षिणंदेशंकृष्णावेण्योश्चसंगमम् ॥ २७ ॥ तत्तीरंसंश्रितायावत्तावत्तस्यशरीरतः ॥ शिवविष्णुगणैर्दूरमपकृष्टाबलादहम् ॥ २८ ॥

बोली, सो मैं पांचसौ वर्षोंसे प्रेतयोनिमें क्षुधापिपासासे पीडित और अपने कर्मसों सदा दुःखयुक्त स्थित हौं ॥ २६ ॥ क्षुधापिपासासे पीडित मै वैश्योंके शरीरमें प्रवेश करिके दक्षिण दिशामें कृष्णा और वेणी नदियोंके संगमपर आई ॥ २७ ॥ जब उनके तटमें पहुँची तबहीं उनके शरीरसों शिव तथा विष्णुके गणोंकरि मैं दूर निकारि दी गई ॥ २८ ॥

ता पीछे क्षुधासों पीडित जो मैं हौं सो हे उत्तम ब्राह्मण ! तुमकरिकै देखी गई और तुम्हारे हाथमें जो तुलसीदलयुक्त जल है ताके संस-
र्गसों मेरे पातक दूर होगये ॥ २९ ॥ हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! तात कृपा करो जाते मैं आगे होनेवाली तीनि योनिसों और या प्रेतयोनिसों
कैसेहू मुक्तिको पाऊं अर्थात् छूटिजाऊं ॥ ३० ॥ श्रेष्ठ ब्राह्मण इस प्रकार कलहाके वचन सुन वाक कर्मनको फलसे उत्पन्न वाकी ग्ला-

ततःक्षुत्क्षामयाहित्वंगच्छन्दृष्टोद्विजोत्तम ॥ त्वद्धस्ततुलसीनीरसंसर्गगतपापया ॥ २९ ॥ तत्कृपांकुरुवि
प्रेन्द्रकथंमुक्तिमवाप्नुयाम् ॥ योनित्रयादग्रभवादस्माच्चप्रेतदेहतः॥ ३० ॥इत्थंनिशम्यकलहावचनंद्विजा
ग्र्यस्तत्कर्मपाकभवविस्मयदुःखयुक्तः ॥ तदग्लानिदर्शनकृपाचलचित्तवृत्तिर्ध्यात्वाचिरंसवचननिजगा
ददुःखात् ॥ ३१ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये एकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

निके देखनसों उत्पन्न भई जो कृपा है तासों चलायमान है चित्तवृत्ति जाका ऐसो वह ब्राह्मण बहुत देरमें सोचिके दुःखसों वचन बोलत
भयो ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायां कार्त्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमा-
ख्यायामेकोनविंशोऽध्यायः ॥ १९ ॥

धर्मदत्त बोले, तीर्थ दान व्रत आदिकोंसो पाप दूर होयहै परन्तु प्रेतदेहमें स्थित जो तू है ताको उनमें अधिकार नहीं है ॥ १ ॥ तेरी ग्लानिको देखके मेरो मन खेदयुक्त भयो दुःखित जो तू है ताको उद्धार किये विना मेरो मन सुखी न होयगो ॥ २ ॥ तीनि योनिको देनहारो तेरो पाप अति उग्र है और अतिनिंदित प्रेतयोनिहू थोडे पुण्यनसो क्षीण न होयगी ॥ ३ ॥ तातें जन्मसों लगायके जो मैंने

धर्मदत्तउवाच ॥ विलयंयांतिपापानितीर्थदानव्रतादिभिः ॥ प्रेतदेहस्थितायास्तेतेषुनैवाधिकारिता ॥१॥ त्वद्ग्लानिदर्शनादस्मात्खिन्नंचममसानसम् ॥ नैवनिर्वृतिमायातित्वामनुद्धृत्यदुःखिताम् ॥ २ ॥ पातकंच तवात्युग्रंयोनित्रयविपादकम् ॥ नैवाल्पैःक्षीयतेपुण्यैःप्रेतत्वंचातिगर्हितम् ॥ ३ ॥ तस्मादाजन्मजनितंय न्मयाकार्तिकव्रतम् ॥ तत्पुण्यस्यार्द्धभागेनसद्गतित्वमवाप्नुहि ॥ ४ ॥ कार्तिकव्रतपुण्येननसाम्यंयांतिस र्वथा ॥ यज्ञदानानितीर्थानिदत्तान्यपियतोध्रुवम् ॥ ५ ॥ नारदउवाच ॥ इत्युक्त्वाधर्मदत्तोऽसौयावत्ताम भ्यषेचयत् ॥ तुलसीमिश्रितोयेनश्रावयन्द्वादशाक्षरम् ॥ ६ ॥

कार्तिकको व्रत कीनो है ताके पुण्यके आधे भागसों तू उत्तम गतिको प्राप्त हो ॥ ४ ॥ यातें यज्ञ दान तीर्थ व्रत इन सबनके पुण्यको कार्तिकव्रतके पुण्यकी समानताको नहीं प्राप्त होयहै ॥ ५ ॥ नारद बोले, ऐसे कहिके जौलों धर्मदत्त द्वादशाक्षर मंत्र सुनावतो भये तुलसीदलोंसे मिले भये जलसों वाहि छिडकत भयो ॥ ६ ॥

तबहीं प्रेतयोनिसों छूटीभई वह कलहा जलतीहुई अग्निकी ज्वालाके समान दिव्यरूप धारण कारि सुन्दरतामें लक्ष्मीके समान होत भई ॥ ७ ॥ ता पीछे वह ब्राह्मणको भूमिमें दंडवत् प्रणाम करती भई और हर्षसों गद्गदवाणी हो वचन बोलत भई ॥ ८ ॥ कलहा बोली, हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! मैं तुम्हारे प्रसादसों नरकसों छूटी पापनके प्रवाहमें डूबीभई जो मैं हो ताको आप निश्चय नौका भये ॥९॥ नारद बोले

तावत्प्रेतत्वनिर्मुक्ताज्वलदग्निशिखोपमा ॥ दिव्यरूपधराजाताऽलावण्येनयथेन्दिरा ॥ ७ ॥ ततःसादडवद्भूमौप्रणनामाथतंद्विजम् ॥ उवाचसातदावाक्यंहर्षगद्गदभाषिणी ॥ ८ ॥ कलहोवाच ॥ त्वत्प्रसादाद्द्विजश्रेष्ठनिर्मुक्तानिरयादहम् ॥ पापौघमज्जमानायास्त्वंनौभूतोऽसिमेध्रुवम् ॥ ९ ॥ नारदउवाच ॥ इत्थंसावदतीविप्रंददर्शायांतमंबरात् ॥ विमानंभास्वरंयुक्तंविष्णुरूपधरैर्गणैः ॥ १० ॥ अथसातद्विमानाग्र्यंद्वाःस्थाभ्यामधिरोपिता ॥ पुण्यशीलसुशीलाभ्यामप्सरोगणसेविता ॥ ११ ॥ तद्विमानंतदापश्यद्धर्मदत्तःसविस्मयम् ॥ पपातदंडवद्भूमौदृष्ट्वातौविष्णुरूपिणौ ॥ १२ ॥

ऐसे उस ब्राह्मणसों कहत भई वह कलहा भास्वर कहिये प्रकाशमान विष्णुकोसो है रूप जिनको ऐसे गणोंकरिके युक्त विमान देखत भई ॥ १० ॥ वह कलहा पुण्यशील और सुशील नाम जो विष्णुके द्वारपाल हैं तिनकरि श्रेष्ठ विमानमें बैठाईगई ॥ ११ ॥ वा समय वा विमानको धर्मदत्त विस्मयसहित देखत भये और उन गणोंको विष्णुका रूप देखि पृथ्वीमें दंडवत् प्रमाण करतभये ॥ १२ ॥

पुण्यशील सुशील नाम दोनों विष्णुक गण प्रणाम करते भये ब्राह्मणको उठायके वाकी प्रशंसा करि धर्मयुक्त वचन बोलत भये ॥ १३ ॥ गण बोले, हे द्विजश्रेष्ठ ! तुम बहुत अच्छे हो और विष्णुकी भक्तिमें सदा रत हो दीननपर दया करनेहारे हो धर्मज्ञ हो और सदा विष्णुके व्रतमें तत्पर हो ॥ १४ ॥ बालकपनसे लगाके तुम कारिके जो उत्तम कार्त्तिकको व्रत कियो गयो ताको जो आधो फल है ताके देनेसों

पुण्यशीलसुशीलौचतमुत्थाप्यानतंद्विजम् ॥ समभ्यनंदयन्वाक्यमूचतुर्धर्मसंयुतम् ॥ १३ ॥ गणावूचतुः ॥ साधुसाधुद्विजश्रेष्ठयत्त्वंविष्णुरतः सदा ॥ दीनानुकंपीधर्मज्ञोविष्णुव्रतपरायणः ॥ १४ ॥ आबालत्वाच्छुभंत्वेतद्यत्त्वयाकार्तिकव्रतम् ॥ कृतंतस्यार्द्धदानेनयदस्याःपूर्वसंचितम् ॥ १५ ॥ जन्मांतरशतोद्भूतं पापंताद्विलयंगतम्॥स्नानादेवगतंपापंयदस्याःपूर्वकर्मजम् ॥१६ ॥ हरिजागरणाद्यैश्चविमानमिदमास्थितम् ॥ वैकुण्ठंनीयते साधोनानाभोगयुतात्वियम् ॥ १७ ॥

याको जो सौ जन्मको संचित पाप है सो नाशको प्राप्त भयो ॥ १५ ॥ और याको पूर्वजन्मको पाप तौ स्नानहीसों जातो रहो और हरिको जागरण आदि जो तुमने कियो है ताके फलसों यह विमान प्राप्त भयो है ॥ १६ ॥ हे साधो ! नाना प्रकारके भोगनसों युक्त यह वैकुंठको प्राप्त कीजाती है ॥ १७ ॥

और दीपदान जो कार्त्तिकमें तुमने कियो है ताके पुण्यनसों याको यह तेजरूप प्राप्त भयो है और कार्त्तिकव्रतमें करेभये तुलसी आदिके पूजनसों ॥ १८ ॥ जो तुमने याको पुण्य दियो है तासों विष्णुके समीप जानहारी भई और हे कृपानिधि ! या जन्मके अंतमें स्त्रियोंसमेत तुमहू विष्णुलोकको जावोगे ॥ १९ ॥ विष्णुके वैकुण्ठ भवनमें भगवान्के समीप सरूपता मुक्तिको प्राप्त होउगे वे धन्य हैं और वे कृतकृत्य हैं और उनहींका जन्म सफल है ॥ २० ॥ जिनकरिके भक्तिसों हे धर्मदत्त ! तुम्हारी भाँति विष्णु-

दीपदानभवैःपुण्यैस्तेजसांरूपमास्थिता ॥ तुलसीपूजनाद्यैश्चकार्त्तिकव्रतकैःशुभैः ॥ १८ ॥ विष्णोः सन्निधिगाजातात्वयादत्तेकृपानिधे ॥ त्वमप्यस्यभवस्यांतेभार्याभ्यांसहयास्यसि ॥१९॥ वैकुण्ठभवनंविष्णोः सान्निध्यंचसरूपताम् ॥ तेधन्याःकृतकृत्यास्तेतेषांचसफलोभवः॥२० ॥ यैर्भक्त्याराधितोविष्णुर्धर्मदत्त त्वयायथा ॥ सम्यगाराधितोविष्णुःकिन्नयच्छातिदेहिनाम् ॥ २१ ॥ औत्तानचरणिर्येनध्रुवत्वेस्थापितः पुरा ॥ यन्नामस्मरणादेवदेहिनोयांतिसद्गतिम् ॥ २२ ॥

पूजा किये गये हैं भली भाँतिसों पूजन किये गये विष्णु मनुष्यनको क्या फल नहीं दिये हैं ॥ २१ ॥ जिन करिकै पहिले उत्तानपादका पुत्र ध्रुव कहिये निश्चल स्थानमें प्राप्त कियो गयो जिन भगवान्के नामके स्मरणहीसों देही जे मनुष्य हैं त सद्गात अर्थात् उत्तम गातिको प्राप्त होय हैं ॥ २२ ॥

पहिले ग्राहकरिके पकरोगयो गजेन्द्र जिन भगवान्के समीप प्राप्त भयो और जय नाम गण कहावत भयो ॥ २३ ॥ जाते तुम करिके विष्णु भगवान् पूजन किये हैं ताते तुम हूँ कई हजार वर्ष दोनों स्त्रियों समेत संसारमें भोग करिके उनके समीप प्राप्त होउगे ॥ २४ ॥ ता पीछे पुण्य जब क्षीण होयगो तब पृथ्वीमें आयके सूर्यवंशमें उत्पन्न हो प्रसिद्ध राजा होउगे ॥ २५ ॥ नाम दशरथ होयगो वहांहूँ

ग्राहगृहीतोनागेन्द्रोयन्नामस्मरणात्पुरा ॥ विमुक्तः सन्निधिंप्राप्तो जातोऽयंजयसंज्ञकः ॥ २३ ॥ यतस्त्वया र्चितोविष्णुस्तत्सान्निध्यंप्रयास्यसि ॥ बहून्यब्दसहस्राणिभार्याद्वययुतस्यते ॥ २४ ॥ ततःपुण्यक्षयेजाते यदायास्यसिभूतले ॥ सूर्यवंशोद्भवोराजाविख्यातस्त्वंभविष्यसि ॥ २५ ॥ नाम्नादशरथस्तत्रभार्याद्वय युतःपुनः ॥ तृतीययानयाचापियातेपुण्यार्द्धभागिनी ॥ २६ ॥ तत्रापितवसान्निध्यंविष्णुर्यास्यतिभूतले ॥ आत्मानंतवपुत्रत्वेप्रकल्प्यामरकार्यकृत् ॥ २७ ॥ तवोर्जस्यंव्रतादस्माद्विष्णुसंतुष्टिकारकात् ॥ नय ज्ञानचदानानिनतीर्थान्यधिकानिवै ॥ २८ ॥

दोनों स्त्रियोंकरि युक्त होउगे और तीसरा या कलहा करिके हूँ युक्त होउगे जो तुम्हारे आधे पुण्यकी पावनेवाली है ॥ २६ ॥ वाहू जन्ममें विष्णु पृथ्वीमें तुम्हारी समीपताको प्राप्त होयँगे आप तुम्हारे पुत्र होके देवतानको कार्य करेंगे ॥ २७ ॥ विष्णुके प्रसन्न करनहारे तुम्हारे या कार्त्तिकके व्रतसों न तो यज्ञ न दान और न तीर्थ अधिक हैं अर्थात् यह कार्त्तिकको व्रत सब यज्ञादिकनते अधिक है ॥ २८ ॥

हे विप्रेंद्र ! तुम धन्य हो याते तुमकरि यह भगवान्‌को प्रसन्न करनहारो व्रत कियो गयो जा व्रतके आधे भागके फलको प्राप्त भई कलहा हम करिके मुरारि जो श्रीभगवान् हैं तिनके समीप प्राप्त कीजाय है ॥ २९ ॥ इति श्रीमत्पण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां विंशतितमोऽध्यायः ॥ २० ॥ नारद बोले या प्रकार उन विष्णुके पार्षदनको वचन सुनिके धर्म-

धन्योऽसिविप्रेन्द्रयतस्त्वयेतद्व्रतकृतंतुष्टिकरंजगद्गुरोः ॥ यदर्धभागात्फलामुरारेःप्रणीयतेऽस्माभिरियंस लोकताम् ॥ २९॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये विंशतितमोऽध्यायः ॥२०॥ नारदरुवाच ॥ इत्थं तद्वचनंश्रुत्वाधर्मदत्तःसविस्मयः ॥ प्रणम्यदंडवद्भूमौवाक्यमेतदुवाचह ॥ १ ॥ धर्मदत्तउवाच ॥ आराधयतिसर्वेऽपिविष्णुंभक्तार्तिनाशनम् ॥ यज्ञैर्दानैर्व्रतैस्तीर्थैस्तपोभिश्चयथाविधि ॥२॥ विष्णुप्रीतिकरंतेषां किंचित्सान्निध्यकारकम् ॥ यत्कृत्वातानिचीर्णानिसर्वाण्यपिभवंतिहि ॥ ३ ॥

दत्त विस्मित हो भूमिमें दंडवत्प्रणाम करि यह वचन बोलत भयो ॥ १ ॥ धर्मदत्त बोले, भक्तनकी पीडाके दूरि करनहारे विष्णुकी सब मनुष्य यज्ञ दान व्रत तीर्थ और तपोंसों विधिपूर्वक पूजन करै है ॥ २ ॥ उनमेंसों विष्णुकी प्रीति करनहारो और सान्निध्य देनहारो कोई है जाके करनेसों ते सब यज्ञादिक सफल होजायँ ॥ ३ ॥

गण बोले, हे ब्राह्मण ! तुमने अच्छो प्रश्न कियो हे अनघ ! अर्थात् पापरहित इतिहास करिके सहित जो पहिले वृत्तान्त हम करि कह्यो जाय है वाहि तुम एकाग्रचित्त होके सुनो ॥ ४ ॥ कांचापुरामें पहिले चोल नाम चक्रवर्ती राजा होतभयो जाकेही नामसों चोल देश प्रसिद्ध होत भये ॥ ५ ॥ वा राजाके पृथ्वी पालनके समय कोई मनुष्य दरिद्री वा दुःखी वा पापबुद्धि वा

गणावूचतुः ॥ साधुपृष्टंत्वयाविप्रशृणुष्वैकाग्रमानसः ॥ सेतिहासंपुरावृत्तंकथ्यमानंमयाऽनघ ॥ ४ ॥ कांचीपुर्यांपुराचोलश्चक्रवर्तीनृपोऽभवत् ॥ यस्याख्ययैवतेदेशाश्चोलाइतिप्रथांगताः ॥ ५ ॥ यस्मिन्छासतिभूचक्रं दरिद्रोवापिदुःखितः ॥ पापबुद्धिःसरुग्वापिनैवकश्चिदभून्नरः ॥ ६ ॥ यस्याप्यनंतयज्ञस्य ताम्रपर्ण्यास्तटा उभौ ॥ सुवर्णयूपैशोभाढ्यावास्तांचैत्ररथोपमौ ॥ ७ ॥ सकदाचिदगाद्राजाह्यनंतशयनंद्विज ॥ यत्रासौजगतांनाथोयोगनिद्रामुपाश्रितः ॥ ८ ॥

रोगी नहीं होत भयो ॥ ६ ॥ असंख्य यज्ञ करनहारे जिस चोलके यज्ञस्तम्भ करिके ताम्रपर्णीनदकि दोनों तट शोभायुक्त चैत्ररथ जो कुबेरको वन है ताके समान शोभित होतभये ॥ ७ ॥ हे ब्राह्मण ! काहू समय वह राजा जहां जगतोंके स्वामी विष्णु भगवान् योगमायाका आश्रय लेके शयन करतहैं उस अनंतशयन नाम, स्थानको जातभयो ॥ ८ ॥

तहां देव श्रीपति भगवान्को दिव्य मणियों और मोतियोंसे शोभायमान सुवर्णके फूलनसों पूजन करत भयो ॥ ९ ॥ और भूमिमें दण्डवत्प्रणाम करिके वहीं बैठत भयो तब वह देवके समीप आवते भये एक ब्राह्मणको देखत भयो ॥ १० ॥ और देवकी पूजाके निमित्त हाथमें तुलसी और जलको धारण किये है और अपनी पुरी अर्थात् कांचीपुरीको रहनहारो हो और विष्णु-

तत्रश्रीरमणंदेवंसंपूज्यविधिवन्नृपः ॥ मणिमुक्ताफलैर्दिव्यैःस्वर्णपुष्पैश्चशोभनैः ॥ ९ ॥ प्रणम्यदंडवद्भूमावुपविष्टः सतत्रवै ॥ तावद्ब्राह्मणमायांतमपश्यद्देवसन्निधौ ॥ १० ॥ देवार्चनार्थंपाणौतुतुलस्युदकधारिणम्॥ स्वपुरीवासिनंतत्रविष्णुदासाह्वयंद्विजम् ॥ ११ ॥ सतत्राभ्येत्यावेिप्रर्षिर्देवदेवमपूजयत् ॥विष्णुसूक्तेनसंस्नाप्यतुलसीमंजरीदलैः ॥ १२ ॥ तुलसीपूजयातस्यरत्नपूजांपुराकृताम् ॥ आच्छादितांसमालोक्यराजाक्रुद्धोऽब्रवीद्वचः ॥ १३ ॥

दास वाको नाम हो ऐसे ब्राह्मणको देखत भया ॥ ११ ॥ वह ब्रह्मऋषि वहां जायके विष्णुसूक्तसों स्नान करायके तुलसीकी मंजर और दल जो तुलसीपत्र हैं तिनकरिके देवदेव जे भगवान् हैं तिनको पूजन करत भयो ॥ १२ ॥ वा ब्राह्मणकी तुलसी पूजाकरिके पहिले करी भई अपनी रत्ननकी पूजको ढकी भई देखि राजा क्रोधित हो वचन बोलत भयो ॥ १३ ॥

चोल बोले, यहां माणिक्य और सुवर्ण करिके जो पूजा शोभायुक्त मैंने की है विष्णुदास तुम करके वह तुलसीके दलनसों क्यों आच्छादित करी गई अर्थात् तुमने क्यों ढकिदीनी ॥ १४ ॥ विष्णुकी भक्तिको नहीं जाने है तू ढोंगी है यह मैं जानता हो जो तू अति शोभा करिके युक्त जो पूजा है वाहि ढके है ॥ १५ ॥ यह वा चोलराजाके गौरवको न मानि वा समय वचन बोलतभयो ॥ १६ ॥ विष्णु-

चोलउवाच ॥ माणिक्यस्वर्णपूजात्रशोभाढ्यायाकृतामया ॥ विष्णुदासकथंसेयमाच्छन्नातुलसीदलैः ॥ १४ ॥ विष्णुभक्तिंनजानासिवराकोऽसिमतिर्मम ॥ यस्त्विमामातिशोभाढ्यांपूजामाच्छादयस्यहो ॥ ॥ १५ ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वासक्रोधःसद्विजोत्तमः ॥ राज्ञोगौरवमुल्लंघ्यजगादवचनंतदा ॥ १६ ॥ विष्णु दासउवाच ॥ राजन्भक्तिंनजानासिगर्वितोऽसिनृपश्रिया ॥ कियद्विष्णुव्रतंपूर्वंत्वयाचीर्णंवदस्वतत् ॥ १७ ॥ गणावूचतुः ॥ तद्ब्राह्मणवचः श्रुत्वाप्रहस्यसनृपोत्तमः ॥ विष्णुदासंतदागर्वादुवाचवचनंद्विजम् ॥ १८ ॥ राजोवाच ॥ इत्थंवदसिचेद्विप्रविष्णुभक्त्यातिगर्वितः ॥ भक्तिस्तेकियतीविप्रदरिद्रस्याधनस्यच ॥ १९ ॥

दास बोले, हे राजा ! तुम भक्तिको नहीं जानौहो राज्यलक्ष्मीसू गर्वित हो रहे हो तुमने पहिले कितनो विष्णुको व्रत कीनोहै सो कहो ॥ १७ ॥ गण बोले उस ब्राह्मणके वचनको सुनि वह नृपश्रेष्ठ हँसिके विष्णुदाससों गर्वयुक्त वचन बोलत भयो ॥ १८ ॥ राजा बोलो, हे ब्राह्मण ! जो तू विष्णुभक्तिसों अतिगर्वित हो ऐसे कहै है तो दरिद्री और निधन जो तू है ताकी भक्ति कितनी ॥ १९ ॥

विष्णुके तुष्ट करनहारे यज्ञ दान आदि तैंने नहीं किये और हे ब्राह्मण ! तैंने कहूँ पहिले देवालय बनवायो ? ॥ २० ॥ ऐसे जो तू है ताके यह भक्तिको घमंड है हे ब्राह्मण ! ताते या समय वे सब ब्राह्मण मेरो वचन सुनैं ॥ २१ ॥ अब तुम सब देखो कि यह ब्राह्मण अथवा मैं विष्णुके साक्षात्कारको प्राप्त होउँगो हे ब्राह्मण ! तब तुम सब दोनोंकी भक्तिको जानोगे ॥ २२ ॥ गण बोले;

यज्ञदानादिकंनैवविष्णोस्तुष्टिकरंकृतम् ॥ नापिदेवालयंपूर्वंकृतंविप्रत्वयाक्वचित् ॥ २० ॥ ईदृशस्यापिते गर्वएषतिष्ठतिभक्तितः ॥ तच्छृणवंतुवचोमेऽद्यसर्वेऽप्येतेद्विजोत्तमाः ॥ २१ ॥ साक्षात्कारमहंविष्णोरेष वाद्यगमिष्यति ॥ पश्यंतुसर्वेऽपिततोभक्तिंज्ञास्यतिचावयोः ॥ २२ ॥ गणावूचतुः ॥ इत्युक्त्वासनृपोऽग च्छान्निजराजगृहंतदा ॥ आरेभेवैष्णवंसत्रंकृत्वाचार्यंसमुद्गलम् ॥ २३ ॥ ऋषिसंघसमाजुष्टंबह्वन्नबहुदाक्षि णम् ॥ यद्व्रतंचकृतंपूर्वंगयाक्षेत्रसमृद्धिमत् ॥ २४ ॥

ऐसे कहिके वह राजा अपने राजभवनको जातभयो और मुद्गल ऋषिको आचार्य करिके विष्णुसंबन्धी जो यज्ञ है ताको आरम्भ करत भयो ॥ २३ ॥ यह यज्ञ कैसो है कि जामें ऋषिनके समूह स्थित हैं और जो बहुतसो अन्न हो बहुतसी दक्षिणा हो संपत्ति युक्त या व्रतको संकल्प पहिले गयाक्षेत्रमें कियो है ॥ २४ ॥

व्रती जो विष्णुदास है सोऊ विष्णुके सन्तुष्ट करनहारे यथायुक्त नियमोंको करतो भयो वा समय वहांई देवालयमें स्थित रहत भयो ॥ २५ ॥ माघ और कार्त्तिकको व्रत और भलीभाँति तुलसीके वनका पालन करनो और एकादशीके दिन द्वादशाक्षर मन्त्रसों हरिको जप इन सबनको वह करत भयो ॥ २६ ॥ षोडश उपचारनकरिके और गीत नृत्य आदि मंगलनकरिके वह

विष्णुदासोऽपितत्रैवतस्थौदेवालयेव्रती ॥ यथोक्तनियमान्कुर्वन्विष्णोस्तुष्टिकरान्सदा ॥ २५ ॥ माघोर्ज्जयोर्व्रतंसम्यक्तुलसीवनपालनम् ॥ एकादश्यांहरेर्जाप्यंद्वादशाक्षरविद्यया ॥ २६ ॥ उपचारैःषोडशभिर्गीतनृत्यादिमंगलैः ॥ नित्यंविष्णोस्तदापूजांव्रतानेतानिसोकरोत् ॥२७॥ नित्यंसंस्मरणंविष्णोर्गच्छन्भुंजन्स्वपन्वसन् ॥ सर्वभूतस्थितंविष्णुमपश्यत्समदर्शनः ॥ २८ ॥ माघकार्त्तिकयोर्नित्यंविशेषनियमानपि ॥ अकरोद्विष्णुतुष्ट्यर्थंसोद्यापनविधिंतथा ॥ २९ ॥

नित्य विष्णुकी पूजाको और इन उक्त व्रतनको करतभयो ॥ २७ ॥ जाते भोजन करते और शयन करते भये सदा विष्णु भगवान्हीको स्मरण करत भयो और समदृष्टि होके सब भूतननें स्थित विष्णु भगवान्हीको देखत भयो ॥ २८ ॥ और वही विष्णुकी प्रसन्नताके निमित्त माघ तथा कार्तिकके विशेष नियमोंको और उद्यापनविधिको करत भयो ॥ २९ ॥

ऐसे श्रीपति जो भगवान् तिनका आराधन करते और भगवान्हीमें निष्ठा है सब इन्द्रियोंके कर्म जिनको और व्रतमें स्थित जो चोलेश्वर और विष्णुदास हैं जिनको आराधन करते बहुत काल व्यतीत होतभयो ॥ ३० ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनय-श्रीपंडितकेशवप्रसादशर्म्मद्विवेदिविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भावार्थबोधिनीसमाख्यायामेकविंशोऽध्यायः ॥ २१ ॥

एवंसमाराधयतोः श्रियःपतिंतयोस्तुचोलेश्वरविष्णुदासयोः ॥ कालोव्यतीयाय महान्व्रतस्थयोस्तन्निष्ठसर्वेन्द्रियकर्मणोस्तदा ॥ ३० ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये एकविंशोध्यायः ॥२१॥ गणावूचतुः ॥ कदाचिद्विष्णुदासोऽथकृत्वानित्यविधिंद्विजः ॥ सूपकर्माकरोत्तावदहरत्कोऽप्यलक्षितः ॥१॥ तमदृष्ट्वाप्यसौपाकं पुनर्नैवाकरोत्तदा ॥ सायंकालार्चनस्यासौव्रतभंगभयाद्द्विजः ॥ २ ॥

गण बोले, काहू समय विष्णुदास ब्राह्मण है सो नित्यविधि जो संध्योपासनपूजा आदि हैं ताहि करके पाकविधि जो रसोई है ताहि करत भयो तब कोई अलक्षित पुरुष वाहि चुरायलेजात भयो ॥ १ ॥ तब वह उस पदार्थोंको न देखिके भी सायंकालको पूजन और व्रतका जो भंग ताके भयसूं वह ब्राह्मण फिरि पाक न करत भयो ॥ २ ॥

दूसरे दिन फिरि पाककरिकै जब ताईं वह विष्णुको नैवेद्य लगावै तौलौं कोई अलक्षित पुरुष फिरि हरिले जात भयो ॥ ३ ॥ हे राजन् ! ऐसे सात दिन पर्यंत कोई वाको पाक हरिलेजातभयो ता पीछे विस्मयसहित वह मनमें ऐसो विचार करत भयो ॥ ४ ॥ आश्चर्यकी बात है कि नित्य आयके मेरो पाक कौन लेजायहै यह क्षेत्र संन्यासीका स्थान है मोको सर्वथा नहीं त्यागने योग्य है ॥ ५ ॥ जो दूसरो

द्वितीयेऽह्निपुनःपाकंकृत्वायावत्सविष्णवे ॥ उपहारार्पणंकर्तुंतावत्कोऽप्यहरत्पुनः ॥ ३ ॥ एवंसप्तदिनंतस्यपाकंकोऽप्यहरन्नृप ॥ ततःसविस्मयःसोऽथमनस्येवंविचार्यच ॥ ४ ॥ अहोनित्यंसमभ्येत्यकः पाकंहरतेमम ॥ क्षेत्रंसंन्यासिनःस्थानंनत्याज्यंममसर्वथा ॥ ५ ॥ पुनःपाकंविधायात्रभुज्यतेयदिचेन्मया ॥ सायंकालार्चनं चैतत्परित्याज्यंकथंभवेत् ॥ ६ ॥ यदिपाकंविधायैवभोक्तव्यंवैमयानतत् ॥ अनिवेद्यहरेःसर्ववैष्णवैर्नैवभुज्यते ॥ ७ ॥ उपोषितोऽहंसप्ताहंतिष्ठाम्यत्रव्रतस्थितः ॥ अद्यसंरक्षणंसम्यक्पाकस्यास्यकरोम्यहम् ॥ ८ ॥

पाक बनाके मुझकरिके भोजन कियोजाय तो यह सायंकालको पूजन कैसे छोडोजाय ॥ ६ ॥ जो पाक करतेही भोजन करैं तो मोसों ऐसो न होय क्योंकि हरिको विना अर्पण किये वैष्णवें करि भोजन नहीं कियो जाय है ॥ ७ ॥ सात दिनको उपासी मैं यहां व्रतमें स्थित हौं अब मैं या पाककी भले प्रकार रक्षा करौंगो ॥ ८ ॥

या प्रकार वह पाकको करिके वहांई छिपिके बैठत भयो तब पाकके अन्नको लेजानेको आये भये एक चांडालको देखत भयो ॥ ९ ॥ क्षुधासों दुर्बल दीन है मुख जाको और हाड तथा चाम है बाकी जामें ऐसे वा चांडालको देखि वह श्रेष्ठ ब्राह्मण दयाके मारे मनसे दुःखी होत भयो ॥ १० ॥ वह ब्राह्मण उस अन्न लेजानेवालेको देखि ठहर ठहर ऐसे कहत दौरत भयो वह अन्न रूखो क्यों खायगो

इतिपाकंविधायासौतत्रैवालक्षितः स्थितः ॥ तावद्ददर्शचांडालंपाकान्नहरणोत्थितम् ॥ ९ ॥ क्षुत्क्षामंदीनवदनमास्थिचर्मावशोषितम् ॥ तमालोक्यद्विजाग्र्योऽभूत्कृपयाखिन्नमानसः ॥ १० ॥ विलोक्यान्नहरंविप्रस्तिष्ठतिष्ठेत्यधावत ॥ कथमश्नासितद्रूक्षंघृतमेतद्गृहाणभोः ॥ ११ ॥ इत्थंब्रुवंतंविप्राग्र्यमायांतंसविलोक्यच ॥ वेगादधावत्तद्भीत्यामूर्च्छितश्चपपातह ॥ १२॥ भीतंसंमूर्च्छितंदृष्ट्वाचांडालंसद्विजोत्तमः ॥ वेगादभ्येत्यकृपयास्ववस्त्रांतैरवीजयत् ॥ १३ ॥

और यह घी ले ऐसो कहतो वह घीका पात्र ले वाके पीछे जात भयो ॥ ११ ॥ ऐसो कहतो भयो आवतो जो वह श्रेष्ठ ब्राह्मण है ताहि देखि वह चांडाल वाके भयसों वेगसों भागो और मूर्च्छित होके गिरत भयो ॥ १२ ॥ वह ब्राह्मण उस चांडाल को भयभीत और मूर्च्छित देखि शीघ्र वस्त्रोंके अंचलसों पवन करत भयो ॥ १३ ॥

या पीछे उठे भये उसी चांडालको विष्णुदास शंख चक्र गदाधारी साक्षात् नारायण देवको देखत भयो ॥ १४ ॥ पीले हैं वस्त्र जिनके और चारि हैं भुजा जिनके और श्रीवत्सको है चिह्न जिनके मुकुटको धारण किये हैं और अळसीके फूलके समान है रंग जिनको और कौस्तुभ मणि है वक्षस्थलमें जिनके ऐसे भगवान्को देखत भयो ॥ १५ ॥ उनको देखिके वह ब्राह्मण सात्त्विकभाव करिके युक्त हो

अथोत्थितंतमेवासौविष्णुदासोऽभ्यलोकयत् ॥ साक्षान्नारायणंदेवंशंखचक्रगदाधरम् ॥१४॥ पीताम्बरं चतुर्बाहुं श्रीवत्सांकंकिरीटिनम् ॥ अतसीपुष्पसंकाशंकौस्तुभोरस्थलंविभुम् ॥ १५ ॥ तं दृष्ट्वासात्त्विकैर्भावैरावृतोद्विजसत्तमः ॥ स्तोतुंचापिनमस्कर्तुंतदानालंबभूवसः ॥ १६ ॥ अत्रशक्रादयोदेवास्तत्रैवाभ्याययुस्तदा ॥ गंधर्वाप्सरसश्चापिजगुश्चननृतुर्मुदा ॥ १७ ॥ विमानशतसंकीर्णंदेवर्षिगणसंकुलम् ॥ गीतवादित्रनिर्घोषंतत्स्थानमभवत्तदा ॥ १८ ॥

वा समय स्तुति करनेको और नमस्कार करनेको न समर्थ होतभयो ॥ १६ ॥ या पीछे वा समय इन्द्र आदिक देवताहू वहीं आवत भये और गंधर्व तथा अप्सरा आनंदसों नाचत भये ॥ १७ ॥ वा समय वह स्थान सैकडों विमानों करि परिपूर्ण और देवता तथा ऋषिके गण युक्त और गाने बजानेको है शब्द जामें ऐसो होत भयो ॥ १८ ॥

ता पछि विष्णु भगवान् सतोगुणी व्रत है जाको ऐसे अपने भक्तको छातीसे लगायके अपनी समान रूपता दे वैकुंठ लेजातभये ॥ ॥ १९ ॥ श्रेष्ठ विमानमें स्थित और विष्णुके समीप जाते भये विष्णुदासको यज्ञकी दीक्षा युक्त वह चोलराजा है सो देखत भयो ॥ २० ॥ वैकुंठभवनको जाते भये विष्णुदासको देखि वह राजा चोल अपने गुरु मुद्गलको बुलाके या प्रकार वचन बोलत

ततोविष्णुस्समालिंग्यस्वभक्तंसात्त्विकव्रतम् ॥ सारूप्यमात्मनादत्त्वाऽनयद्वैकुंठमंदिरम् ॥ १९॥ विमानवरसंस्थंतंगच्छंतंविष्णुसान्निधिम् ॥ दीक्षितश्चोलनृपतिर्विष्णुदासंददर्शसः ॥ २० ॥ वैकुंठभवनंयांतंविष्णुदासंविलोक्यसः ॥ स्वगुरुंमुद्गलंवेगादाहूयेत्थंऽवचोब्रवीत् ॥ २१ ॥ चोलउवाच ॥ यत्स्पर्द्धयामयाचैतद्यज्ञदानादिकंकृतम् ॥ सविष्णुरूपधृग्विप्रोयातिवैकुंठमंदिरम् ॥ २२ ॥ दीक्षितेनमयासम्यक्क्षेत्रेऽस्मिन्वैष्णवेबहु ॥ हुतमग्नौकृताविप्रादानाद्यैःपूर्णमानसाः ॥ २३ ॥

भयो ॥ २१ ॥ चोल बोला, जाकी स्पर्द्धासों मैंने यह यज्ञ दान आदि कीनों वह ब्राह्मण विष्णुका रूप धरिके वैकुंठको जाय रहो है ॥ २२ ॥ दीक्षित जो मैं हौं वहां ताकरिके वैष्णव क्षेत्रमें अग्निहोत्र कियो गयो और दान आदिकरके ब्राह्मणोंकी कामना पूरण कीगई ॥ २३ ॥

परंतु अबलों वे विष्णु मेरे उपर निश्चयकारि प्रसन्न नहीं होतेहैं और विष्णुदासकी भक्तिही करिके हरिने साक्षात्कार दियो ॥ २४ ॥ ताते दान और यज्ञ न करिके विष्णु नहीं प्रसन्न होय हैं ताते भक्तिही वा विभुके दर्शनमें मुख्य कारण है अर्थात् भक्तिहीसों प्रसन्न होयहैं ॥ २५ ॥ गण बोले, ऐसे कहिके राजा अपने भानजेको राजगद्दीपर बैठावत भयो बालकपनहीसों यज्ञकी दीक्षामें रहो हो ताते या

नैवाद्यापिसमेविष्णुःप्रसन्नोजायतेध्रुवम् ॥ विष्णुदासस्यभक्त्यैवसाक्षात्कारंददौहरिः ॥ २४ ॥ तस्माद्दानै श्चयज्ञैश्चनैवविष्णुः प्रसीदति ॥ भक्तिरेवपरंतस्यनिदानंदर्शनेविभोः ॥२५॥ गणावूचतुः ॥ इत्युक्त्वाभागि नेयंस्वमभ्यषिंचन्नृपासने ॥ आबाल्याद्दीक्षितोयज्ञेह्यपुत्रत्वमगाद्यतः ॥ २६ ॥ तस्माद्द्यापितद्देशेसदा राज्यांशभागिनः ॥ स्वस्रीयाएवजायंतेतत्कृतावधिवर्तिनः ॥२७ ॥ यज्ञवाटंततोभ्येत्यवह्निकुण्डाग्रतःस्थि तः ॥ त्रिरुच्चैर्व्याजहाराशुविष्णुंसंबोधयंस्तदा ॥ २८ ॥ विष्णुभक्तिःस्थिरांदेहिमनोवाक्कायकर्मभिः ॥ इत्युक्त्वासोऽपतद्वह्नौसर्वेषामेवपश्यताम् ॥ २९ ॥

राजाके पुत्र नहीं भयो हो ॥ २६ ॥ ताते वा देशमें अबताईं चोल राजाकी करी भई अवधिको वर्तनेवाले भानजेही राज्यके अधिकारी होयहैं ॥ २७ ॥ ता पीछे यह चोल यज्ञस्थानमें जाके अग्निके आगे खडो होके विष्णुको संबोधन देतो भयो ॥ २८ ॥ और यह कहतो भयो कि हे विष्णो ! मन वाणी और कायसो स्थिरभक्ति दीजिये ऐसे कहिके यह राजा सबके देखते अग्निकुंडमें गिरतभयो ॥ २९ ॥

ता पछि मुद्गल क्रोधसों अपने शिखाको उखारत भये तबते अबताईं उनके गोत्रमें मुद्गल शिखाहीन होते हैं ॥ ३० ॥ तबही भक्तवत्सल भगवान् कुंडकी अग्निमें प्रगट होतभये और चोलको छातीमें लगाके श्रेष्ठ विमानमें चढावते भये ॥ ३१ ॥ वाको छातीमें लगाके अपनी सरूपता दे वाहि समेत देवताओंकरि युक्त देवेश भगवान् वैकुंठमंदिरको जात भये ॥ ३२ ॥ जो विष्णुदास हो सो तो पुण्य-

मुद्गलस्तुततःक्रोधाच्छिखामुत्पाटयत्स्वकाम् ॥ ततस्तत्प्रभृतितद्गोत्रेमुद्गलाविशिखाभवन् ॥ ३० ॥ ताव दाविरभूद्विष्णुःकुण्डाग्नौभक्तवत्सलः ॥ तमालिंग्यविमानाग्र्यंसमारोहयदच्युतः ॥ ३१ ॥ तमालिंग्यात्म सारूप्यंदत्त्वावैकुंठमंदिरम् ॥ तेनैवसहदेवेशोजगामत्रिदशैर्वृतः ॥ ३२ ॥ योविष्णुदासस्सतुपुण्यशीलोय श्चोलभूपस्ससुशीलनामा ॥ एतावुभौतत्समरूपभाजौद्वाःस्थौकृतौतेनरमाप्रियेण ॥ ३३ ॥ इति श्रीप द्मपुराणेकार्तिकमाहात्म्ये द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

शील है और जो चोलराजा हो सो सुशील नाम है उनके समानरूपके पानेवाले ये दोनों उन भगवान् करिके द्वारपाल किये गये ॥ ३३ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबो-धिनीसमाख्यायां द्वाविंशोऽध्यायः ॥ २२ ॥

धर्मदत्त बोला; जय अरु विजय मैंने विष्णुके द्वारपाल सुनेहैं उनकरिके पहिले कहा व्रत नियम कियो गयो जाते वे विष्णुके रूपके धारण करनेवाले भये ॥ १ ॥ गण बोले, हे ब्राह्मण ! पहिले तृणबिंदुकी कन्या देवहूतीमें कर्दम ऋषिकी दृष्टिहीसे दो पुत्र उत्पन्न होत भये ॥ २ ॥ जेठेका नाम जय और छोटेका नाम विजय हो पछि वाही देवहूतीमें योगकर्मको जाननहारे कपिलमुनि उत्पन्न होत भये

धर्मदत्तउवाच ॥ जयश्चविजयश्चैवविष्णोर्द्वाःस्थौश्रुतौमया ॥ किंनुताभ्यांपुराचीर्णयस्मात्तद्रूपधारिणौ ॥
॥ १ ॥ गणावूचतुः ॥ तृणबिंदोस्तुकन्यायांदेवहूत्यांपुराद्विज ॥ कर्दमस्यतुदृष्टेस्तुपुत्रौद्वौसंबभूवतुः ॥
॥ २ ॥ ज्येष्ठोजयःकनिष्ठोऽभूद्विजयश्चेतिनामतः ॥ तस्यामेवाभवत्पश्चात्कपिलो योगकर्मवित् ॥ ३ ॥
जयश्चविजयश्चैवविष्णुभक्तिरतौसदा ॥ तस्मिन्निंद्रियग्रामौधर्मशीलौबभूवतुः ॥ ४ ॥ नित्यमष्टाक्षरी
जाप्यौविष्णुव्रतकरावुभौ ॥ साक्षात्कारंददौविष्णुस्तयोर्नित्यार्चनेसदा ॥ ५ ॥

॥ ३ ॥ जय और विजय विष्णुकी भक्तिमें सदा रत होत भये उन्हीमें हैं इन्द्रियोंके समूह जिनके ऐसे दोनों धर्मशील होत भये ॥ ४ ॥ दोनों सदा अष्टाक्षरी विद्याको जप करै हैं और विष्णुके व्रत करनहारे जो वे दोनों हैं तिनको विष्णु सदैव नित्यके पूजनमें साक्षात् दर्शन देत भये ॥ ५ ॥

कबहूँ वे दोनों मरुत नाम राजाकरिके यज्ञमें बुलाये जात भये और यज्ञकर्म करानेमें चतुर देवता और ऋषियोंके गणकरिके पूजित वे दोनों जात भये ॥ ६ ॥ वहां उस मरुतके यज्ञमें जय तो ब्रह्मा होत भये और विजय याजक होत भये ता पीछे उसे सम्पूर्ण करत भये ॥ ७ ॥ यज्ञके अन्तका स्नान करिके मरुत उन दोनोंको बहुतसो धन देत भयो और हे दोनों वा धनको ले

मरुतेनकदाचित्ताववाहूतौयज्ञकर्मणि ॥ जग्मतुर्यज्ञकुशलौदेवर्षिगणपूजितौ ॥ ६ ॥ जयस्तत्राभवद्ब्रह्मायाजकोविजयोऽभवत् ॥ ततोयज्ञविधिंकृत्स्नंपरिपूर्णंचचक्रतुः ॥ ७ ॥ मरुतोवभृथस्नातस्ताभ्यांवित्तंददौबहु ॥ तत्समादायतौवित्तंजग्मतुःस्वाश्रमंप्रति ॥ ८ ॥ यजनायपृथग्विष्णोस्तुष्ट्यर्थंतौतदामुनी ॥ तद्धनंविभजंतौतुपस्पर्द्धातेपरस्परम् ॥ ९ ॥ जयोऽब्रवीत्समोभागः क्रियतामितितत्रसः ॥ विजयश्चाब्रवीन्नैतद्यल्लब्धंयेनतस्यतत् ॥ १० ॥

अपने आश्रमको जात भये ॥ ८ ॥ पृथक् कहिये जुदे विष्णुके पूजनके और तुष्टि अर्थात् प्रसन्नताके लिये वा धनके बांटनेमें परस्पर स्पर्द्धा करने लगे ॥ ९ ॥ जयने कहा कि समान विभाग करनो चाहिये कि विजयने कहा यह न होयगो जो जाने पायो है सो ताको है ॥ १० ॥

ता पीछे जय मनम क्षोभित हो क्रोधसों विजयको यह शाप देतभयो तू ग्रहण करिके या धनको नहीं देत है याते तू ग्राह हो ॥ ११ ॥
विजय वाको यह शाप सुनिके वहू वाहि शाप देतभयो कि मदसों भ्रांत हो तैंने मोको शाप दीन्हों ताते तू मातंग अर्थात् हाथी हो ॥
॥ १२ ॥ तब वे दोनों नित्यके पूजनमें भगवान्‌को देखिके उन विभुसों यह वृत्तान्त कहत भये, और रमापति भगवान्‌सों शापकी

ततोऽशपज्जयः क्रोधाद्विजयं क्षुब्धमानसः ॥ गृहीत्वानददास्येतत्तस्माद्ग्राहोभवेतितम् ॥ ११ ॥ विजयस्तस्य तंशापं श्रुत्वा सोऽप्यशपच्चतम् ॥ मदभ्रांतोऽशपस्त्वंमांतस्मान्मातंगतांव्रज ॥ १२ ॥ ततदाचख्यतुर्विष्णुंदृष्ट्वा नित्यार्चनेविभुम् ॥ शापयोश्चनिवृत्तिंतौययाचातेरमापतिम् ॥ १३ ॥ जयविजयावूचतुः ॥ भक्तावावांकथं देवग्राह मातंगयोनिगौ ॥ भविष्यावः कृपासिंधोतच्छापोविनिवर्त्यताम् ॥ १४ ॥ श्रीभगवानुवाच ॥ मद्भक्तयोर्वचोऽसत्यंनकदाचिद्भविष्यति ॥ मयापिनान्यथाकर्तुंशक्यतेतत्कदाचन ॥ १५ ॥

निवृत्ति अर्थात् लौटि जानो मांगत भये ॥ १३ ॥ जय विजय बोले, आपके भक्त हम दोनों कैसे ग्राह और मातंगकी योनिमें जान हारे होयँगे हे कृपासिंधु ! ताते हम दोनोंको शाप लौटि दीजिये ॥ १४ ॥ श्रीभगवान् बोले, मेरे भक्तनको वचन कबहूँ झूठ न होय और मैंहूं कदापि वाहि अन्यथा करनेको समर्थ नहीं हौं ॥ १५ ॥

पहिले मैं प्रह्लादके वचनसों निश्चयसे खंभमें प्रगट होतभयो और अंबरीषके वचनसों दश प्रकारसों मैं उत्पन्न होत भयो ॥ १६ ॥ ताते तुम दोनों अपने हाथसों करे भये इन शापोंको भोगिके मेरे पदको प्राप्त होउगे ऐसे कहिके भगवान् अंतर्धान होतभये ॥ १७ ॥ गण बोले, ता पछि वे दोनों गंडकी नदीके तटमें ग्राह और मातंग होत भये वाहु योनिमें जातिको स्मरण रहो ताते विष्णुके व्रतमें स्थित

प्रह्लादवचसास्तम्भेह्याविर्भूतोह्यहंपुरा॥ तथांबरीषवाक्येन जातोऽहंदशधाकिल॥ १६॥ तस्माद्युवामिमौ शापाव नुभूयस्वयंकृतौ ॥ लभेतांमत्पदंनित्यमित्युक्त्वांतर्दधेहरिः॥ १७॥ गणावूचतुः । ततस्तौग्राहमातंगावभूतांगं डकीतटे॥ जातिस्मरौचतद्योन्यामपिविष्णुव्रतेस्थितौ॥ १८॥ कदाचित्सगजस्स्नातुंकार्त्तिक्यां गंडकींगतः ॥ तावज्जग्राहतंग्राहस्संस्मरञ्छापकारणम्॥ १९ ॥ ग्राहग्रस्तोह्यसौनागस्सस्मारश्रीपतिंतदा ॥ तावदाविरभूद्वि ष्णुः शंखचक्रगदाधरः ॥ २० ॥

रहत भये ॥ १८ ॥ काहू समय वह हाथी कार्त्तिकीके दिन गंडकी नदीमें न्हायवेको जातभयो वाको ग्राह शापका कारण स्मरण करके पकरिलेत भयो ॥ १९ ॥ तब ग्राहकरि पकरो गयो यह हाथी भगवान्को स्मरण करत भयो तबहीं शंख चक्र गदाको धारण करे विष्णु प्रगट होत भये ॥ २० ॥

तब चक्र चलायके वे दोनों उद्धार करे गये और अपने समान रूप देके भगवान् उन दोनोंको वैकुण्ठमें लेजात भये ॥ २१ ॥ तब-
से लगाके वह स्थान हरिक्षेत्र नामसों प्रसिद्ध भयो जामें चक्रके स्पर्शसों पाषाणहू चिह्नयुक्त होगये ॥ २२ ॥ लोकमें वे दोनों जय
और विजय नामसों विख्यात हैं । हे ब्राह्मण ! जिनको तैंने पूछो हो वे दोनों सदा हरिके प्यारे द्वारपाल हैं ॥ २३ ॥ हे धर्मज्ञ ! याते

ततस्तौग्राहमातंगौचक्रंक्षिप्त्वासमुद्धृतौ ॥ दत्त्वाचनिजसारूप्यंवैकुंठमनयद्विभुः ॥ २१ ॥ ततःप्रभृतित
त्स्थानंहरिक्षेत्रमितिस्मृतम्॥ चक्रसंघर्षणाद्यस्मिन्ग्रावाणोऽपिहिलांछिताः॥२२॥ताविमौविश्रुतौलोके जयश्च
विजयस्तथा॥नित्यंविष्णुप्रियौद्वाःस्थौपृष्टौयौहित्वयाद्विज॥२३॥अतस्त्वमपिधर्मज्ञनित्यंविष्णुव्रतेस्थितः ॥
त्यक्त्वामात्सर्यदंभौ हिभवस्वसमदर्शनः॥२४॥ तुलामकरमेषुप्रातःस्नायीसदाभव॥एकादशीव्रतेनिष्ठस्तु
लसीवनपालकः ॥ २५ ॥ ब्राह्मणानपिगाश्चैव वैष्णवांश्चसदाभज ॥ मसूरिकामारनालंवृंताकान्यपि
वैत्यज ॥ २६ ॥

तुमहू सदा विष्णुके मतमें स्थित हो मात्सर्य और दंभको छोडिके समदृष्टि होजाउ ॥ २४ ॥ तुला मकर और मेष इन राशियोंमें
सूर्यके आनेपर सदा प्रातःकाल स्नान करनहारे होउ और एकादशीके व्रतमें निष्ठा राखो और तुलसीवनको पालन करो
॥ २५ ॥ ब्राह्मण और वैष्णवनको सदा सेवन करो और मूसरी कांजी बैंगन इनका त्याग करो ॥ २६ ॥

ऐसे तुमहूं देहके अंत समय उस विष्णुके परमपदको प्राप्त होउगे हे धर्मदत्त ! जैसे हम प्राप्त भये हैं ॥ २७ ॥ जन्मसों लगाके किये गये विष्णुके प्रसन्न करनहारे या व्रतसों निश्चय करिके न तौ यज्ञ और न व्रत न दान अधिक हैं अर्थात् यह व्रत सबनसों अधिक है ॥ २८ ॥ हे ब्राह्मणश्रेष्ठ ! तुम धन्य हो जाते तुमने जगत्को गुरु जो भगवान् तिनको प्रसन्न करनहारो व्रत कियो जाके

एवंत्वमपि देहांते तद्विष्णोः परमंपदम् ॥ प्राप्नोषि धर्मदत्त त्वं तद्भक्त्यैव यथा वयम् ॥२७॥ तवाजन्मव्रतादस्माद्विष्णुसंतुष्टिकारकात्॥ नयज्ञा न च दानानि न तीर्थान्यधिकानि च ॥२८॥ धन्योऽसि विप्राग्र्य यतस्त्वयैतद्व्रतं कृतं तुष्टिकरं जगद्गुरोः ॥ यदर्द्धभागात्तफला मुरारेः प्रणीयतेऽस्माभिरियं सलोकताम्॥२९॥ नारद उवाच ॥ इत्थं तौ धर्मदत्तं तमुपवेश्य विमानगौ॥ तया कलहया सार्द्धं वैकुंठभवनं गतौ ॥ ३० ॥ धर्मदत्तोऽप्यसौ जातप्रत्ययस्तद्व्रते स्थितः ॥ देहांते तद्विभोः स्थानं भार्याभ्यां संयुतोऽभ्यगात् ॥ ३१ ॥

आधे भागके फलको पावनहारी यह कलहा हम करिके विष्णुकी सलोकताको प्राप्त की जाती है ॥ २९ ॥ नारद बोले, ऐसे उस धर्मदत्तसों कहिके विमानमें स्थित होके वे दोनों उस कलहासमेत वैकुंठभवनको जात भये ॥ ३० ॥ यह धर्मदत्त उत्पन्न है विश्वास जाको ऐसो हो वा व्रतमें स्थित भयो और देहांतके समय दोनों स्त्रियों समेत उन विभु कहिये समर्थ जे विष्णु हैं तिनके स्थानमें प्राप्त होत भयो ॥ ३१ ॥

पहिले भयो जो यह इतिहास है ताहि जो कोऊ मनुष्य सुनेगो वह हरिके निकट प्राप्त करनहारी भक्तिको जगत्‌के गुरु जो भगवान् हैं तिनकी कृपासों प्राप्त होयगो ॥ ३२ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपण्डितकेशवप्रसादशर्म्मद्वि० का० त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ पृथु बोले, उस कृष्णा वेणीके तटसों शिव और विष्णुके गणन करिके वैश्यके शरीरसों कलहा

इतिहासमिमंपुराभवंशृणुतेश्रावयतेचयः पुमान्॥हरिसन्निधिकारिणींमतिंलभतेसकृपयाजगद्गुरोः ॥३२॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये त्रयोविंशोऽध्यायः ॥ २३ ॥ पृथुरुवाच ॥ कृष्णावेण्योस्तटात्तस्माच्छिववविष्णुगणैःपुरा ॥ वणिक्छरीरात्कलहानिरस्ताकथितात्वया ॥ १ ॥ प्रभावोऽयंतयोर्नद्योःकिंवाक्षेत्रस्यतस्यच ॥ तन्मेकथयधर्मज्ञविस्मयोऽत्रमहान्मम ॥२॥ नारदउवाच ॥कृष्णाकृष्णतनुःसाक्षाद्वेण्यांदेवोमहेश्वरः ॥ तत्संगमप्रभावंतुनालंवक्तुंचतुर्मुखः ॥ ३ ॥

निकाली गई वह तुमने मोसो पहिले कही सो यह नदियोंको प्रभाव है अथवा वा क्षेत्रको है ? हे धर्मज्ञ ! मोसो कहो मोको बडा संदेह है ॥ १ ॥ २ ॥ नारद बोले, कृष्णा साक्षात् कृष्णको शरीर है और वेणी महादेवको रूप है उन दोनोंके संगमके प्रभावको चतुर्मुख ब्रह्माहू कहनेको समर्थ नहीं है ॥ ३ ॥

ताहू मैं उनकी उत्पत्ति कहूंगो तुम सुनो चाक्षुषमन्वंतरमें पहिले देव पितामह रम्य सह्याद्रिके शिखरपर यज्ञ करनेको उद्यत होत भये वे यज्ञकी सामग्री इकट्ठी करके देवगण सहित ॥ ४ ॥ ५ ॥ और विष्णु रुद्र समेत उस पर्वतके शिखरको जात भये भृगु आदि मुनिगण ब्रह्म दैवत मुहूर्त्तमें ॥ ६ ॥ उनकी दीक्षा विधानके लिये बडी प्रीतिसों समाज करत भये और बडी पत्नी जो

तथापितत्समुत्पत्तिंकीर्त्तयिष्यामितांशृणु ॥ चाक्षुषेप्यंतरेपूर्वंमनोर्देवःपितामहः ॥ ४ ॥ सह्याद्रिशिखरे रम्येप्रजनायोद्यतोभवत् ॥ सकृत्वायज्ञसंभारान्सर्वदेवगणैःसह ॥५॥ युक्तोहरिहराभ्यांचतद्गिरेः शिखरं ययौ ॥ भृग्वादयोमुनिगणामुहूर्तेब्रह्मदैवते ॥ ६ ॥ तस्यदीक्षाविधानायसमाजंचक्रुरादृताः ॥ अथज्ये ष्ठांस्वरांपत्नीमाहूयांचक्रुरंजसा ॥ ७ ॥ साशनैरायायौतावद्भृगुर्विष्णुमुवाचह ॥ भृगुरुवाच ॥ विष्णोस्व रात्वयाहूताप्यायातानकथंचन ॥ ८ ॥ मुहूर्त्तातिक्रमश्चैवकार्योदीक्षाविधिःकथम् ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ नायातिचेत्स्वराशीघ्रंगायत्र्यत्राविधीयताम् ॥ ९ ॥

वाणीकी देवता है ताहि बुलावत भये ॥ ७ ॥ वह हौले २ आवत भई तब भृगु विष्णुसों बोलत भये भृगु बोले, हे विष्णु ! तुम करिके बुलाई भी स्वरा कैसेहू नहीं आवै ॥ ८ ॥ और मुहूर्त्त निकला जाता है दीक्षाविधि कैसे की जाय ॥ श्रीकृष्ण बोले, जो शीघ्र स्वरा न आवै तो यहां गायत्रीको दीक्षा करनी चाहिये ॥ ९ ॥

क्या यह पुण्यकाममें उनकी स्त्री नहीं है ? ॥ नारद बोले, ऐसे ही रुद्र विष्णुके वचनको मानि लेत भये ॥ १० ॥ उस भृगुके वचनको सुनिके तब गायत्रीको ब्रह्माके दक्षिणभागमें बैठाके दीक्षा विधिको करत भये ॥ ११ ॥ जौलौं मुनीश्वर उन ब्रह्माको दीक्षा विधि करैं तौलौं उस यज्ञके स्थानमें स्वरादेवी आवत भई ॥ १२ ॥ ता पीछे वह ब्रह्माके साथ दीक्षित देखि सौतिकी ईर्षामें तत्पर क्रोध

एषापिनभवेत्तस्यभार्याकिंपुण्यकर्मणि ॥नारद उवाच ॥ एवमेवहिरुद्रोऽपिविष्णोर्वाक्यममन्यत ॥ १०॥
तच्छ्रुत्वाचभृगोर्वाक्यंगायत्रींब्रह्मणस्तदा॥निवेश्यदक्षिणेभागेदीक्षाविधिमथाकरोत् ॥११॥ यावद्दीक्षाविधितस्यविधेश्चक्रुर्मुनीश्वराः॥ तावदभ्याययौतत्रस्वरायज्ञस्थलेनृप ॥ १२ ॥ ततस्तांदीक्षितां दृष्ट्वागायत्रींब्रह्मणासह ॥ सापत्न्येर्ष्यापराक्रोधात्स्वरावचनमब्रवीत् ॥ १३ ॥ स्वरोवाच ॥ अपूज्यायत्र पूज्यन्ते पूज्यानांचव्यतिक्रमः॥ त्रीणितत्रभविष्यंतिदुर्भिक्षंमरणंभयम्॥ १४॥येयंचदक्षिणेभागेउपविष्टामदासने॥ तस्माल्लोकैस्सदाऽदृश्यागुप्तरूपातुनिम्नगा ॥ १५ ॥

सो वचन बोलत भई ॥ १३ ॥ स्वरा बोली, जहां नहीं पूजनेयोग्य पूजे जाते है और पूजने योग्य नहीं पूजे जाते हैं तहां दुर्भिक्ष मरण भय ये तीनि बातें होयँगी ॥ १४ ॥ जो यह दाहिने ओर मेरे आसन पर बैठी है ताते लोगन करिके सदा नहीं देखने योग्य गुप्त रूप नदी होयगी ॥ १५ ॥

मेरे आसनपर यह छोटी तुम करिके बैठाई गई ताते तुम सब जडीभूत हो नदीरूप होउगे ॥ १६ ॥ तापीछे वाके शापको सुनिके कांपते हैं ओठ जाके ऐसी गायत्री देवताओंके रोकनेहूँ पर देवीको शाप देत भई ॥ १७ ॥ गायत्री बोली, ब्रह्मा जैसे तेरे पति हैं तैसेही मेरे हैं तैंने वृथा शाप दीन्हों ताते तूभी नदी हो ॥ १८ ॥ नारद बोले, ता पीछे शिव विष्णु आदि सब देवता हाहाकार करि

मदासनेकनिष्ठेयंभवद्भिःसन्निवेशिता ॥ तस्मात्सर्वेजडीभूतानदीरूपाभविष्यथ ॥ १६ ॥ ततस्तच्छापमाकर्ण्यगायत्रीकंपिताधरा ॥ समुत्थायाशपद्देवैर्वार्यमाणापितांस्वराम् ॥१७॥ गायत्र्युवाच ॥ तवभर्त्तायथाब्रह्मा ममाप्येषतथाखलु ॥ वृथाशापस्त्वयादत्तोभवत्वमपिनिम्नगा॥ १८॥ नारदउवाच ॥ ततोहाहाकृतास्सर्वेशिवविष्णुमुखास्सुराः ॥ प्रणम्यदंडवद्भूमौस्वरांतत्रविजिज्ञपुः ॥१९॥ देवा ऊचुः ॥ देविसर्वेवयंशप्ताब्रह्माद्यायत्त्वयाधुना ॥ यदिसर्वेजडीभूताभविष्यामोत्रनिम्नगाः॥२०॥तदालोकत्रयंह्येतद्विनश्यतिहिनिश्चितम् ॥ अविवेककृतस्तस्माच्छापोऽयंविनिवर्त्यताम् ॥ २१ ॥

दंडवत् प्रणाम करिके स्वरा देवीसों प्रार्थना करत भये ॥ १९ ॥ देवता बोले, हे देवी ! तैंने ब्रह्मा आदि हम सबको शाप दीन्हों जो सब जडीभूत हो नदी होजायँगे ॥ २० ॥ तो ये तीनों लोक निश्चय करि नाशको प्राप्त होयँगे तुमने विचार नहीं कीन्हा ताते यह शाप लौटनो चाहिये ॥ २१ ॥

स्वरा बोली, सुरोत्तमो ! यज्ञकी आदिमें जो तुमने गणेशको पूजन नहीं कीन्हो ताते मेरे क्रोधसों उत्पन्न यह विघ्न भयो ॥ २२ ॥ मेरो यह वचनहू झूठ न होयगो ताते अपने अंशोंकरि जडीभूत हो तुम सब नदी होउगे ॥ २३ ॥ हम दोनों सौतभी अपने अंशोंकरि पश्चिमवाहिनी नदी होंयगी ॥ २४ ॥ नारद बोले, यह वा स्वराके वचन सुनिके ब्रह्मा विष्णु महेश जडरूप हो अपने २ अंशोंकरि

स्वरोवाच ॥ नार्चितोहिगणाध्यक्षोयज्ञादौयत्सुरोत्तमाः ॥ तस्माद्विघ्नंसमुत्पन्नंमत्क्रोधजमिदंखलु ॥२२॥ नापिमद्वचनंह्येतदसत्यंखलुजायते ॥ तस्मात्स्वांशैर्जडीभूतायूयंभवतानिम्नगाः ॥ २३ ॥ आवामापिसपत्न्यौचस्वांशाभ्यामपिनिम्नगे ॥ भविष्यावोऽत्रभोदेवाः पश्चिमाभिमुखावहे ॥२४॥ नारदउवाच ॥ इति तद्वचनं श्रुत्वाब्रह्मविष्णुमहेश्वराः ॥ जडीभूताभवन्नद्यस्स्वांशैस्सर्वैतदानृप ॥२५॥ तत्रविष्णुरभूत्कृष्णावेण्यादेवोमहेश्वरः ॥ ब्रह्माककुद्मिनीचापिपृथगेवाभवन्नृप ॥ २६ ॥ देवास्स्वानर्पितानंशाञ्जडीकृत्वाविचिक्षिपुः ॥ सह्याद्रिशिखरेभ्यस्तेपृथगासंस्तुनिम्नगाः ॥ २७ ॥

नदीरूप होत भये ॥ २५ ॥ तहां विष्णु कृष्णा होत भये और महादेव वेण्या और हे राजा ! ब्रह्मा ककुद्मिनी नाम नदी भये ये सब पृथक् पृथक् होतभये ॥ २६ ॥ देवता हू जडकरके अपने अंशनको देतभये वे सब ब्रह्मादि सह्यपर्वतके शिखरोंसे नदी हो पृथक् २ बहने लगे ॥ २७ ॥

देवता आदिकोंके अंशसे उत्पन्न नदी पूर्ववाहिनी भई और उनकी स्त्रियोंके अंशसे सैकरों हजारों पश्चिमवाहिनी नदी भई ॥ २८ ॥ और गायत्री और स्वरा दोनों पश्चिमवाहिनी नदी भई और सावित्री इस नामसों प्रसिद्ध भई ॥ २९ ॥ ब्रह्माने वहां यज्ञके विष्णु और शिव दोनोंकी स्थापना की वे दोनों महाबल और अतिबल नामोंसे प्रसिद्ध देवता होतभये ॥ ३० ॥ कृष्णा और वेणीके या उपा

देवांशैःपूर्ववाहिन्योबभूवुःपश्चिमावहाः ॥ ततपत्न्यंशैः पृथक्तत्रशतशोऽथसहस्रशः ॥२८॥ गायत्रीचस्वराचैवपश्चिमाभिमुखेतदा ॥ योगेनाभवतान्नद्यौसावित्रीतिप्रथांगते ॥ २९ ॥ ब्रह्मणास्थापितौतत्रयज्ञेहरिहरावुभौ ॥ महाबलातिबलिनौनाम्नादेवौबभूवतुः ॥ ३० ॥ कृष्णोद्भवंपापहरंपुमान्यः शृणोतियः श्रावयतेचभक्त्या ॥ स्यात्तस्यपुंसः सकलंकुलंयत्तद्दर्शनस्नानगमोद्भवंस्मृतम् ॥३१॥ इतिश्रीपद्मपुराणेकार्तिमाहात्म्येचतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वापृथुर्विस्मितमानसः ॥ सपूज्यनारदंसम्याग्विससर्जतदाप्रिये ॥ १ ॥

स्थानको जो भक्तिसों सुनेगो और सुनावेगो वाको उनके दर्शन और स्नानको फल प्राप्त होयगो ॥ २१ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपाण्डितकेशवप्रसादशर्मकृतकार्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां चतुर्विंशोऽध्यायः ॥ २४ ॥ श्रीकृष्ण बोले, हे प्रिये ! या प्रकार उनको वचन सुनि विस्मित है मन जिनको ऐसे पृथुराज नारदकी विधिपूर्वक पूजा करिके उनको बिदा करत भये ॥ १ ॥

हे प्रभु ! जो परायो कियो पुण्य है वह देनेसो मिलसकै है और विना दियो हू काहू मागंसो मिलसकैहै कि नहीं सो कहिये ॥८॥ श्रीकृष्ण-जी बोले, विना दिये भये पुण्य तथा पाप जैसे मनुष्यनको और जा कर्म करिके मिलैहैं सो यथावत् अर्थात् ठीकठीक सुनो ॥ ९ ॥ सतयुग आदि अर्थात् त्रेता और द्वापरमें देश गांव और कुल पुण्य पापके अंशभागी होते हैं और कलियुगमें तौ केवल करनेवालो

दत्तंचलभ्यतेपुण्यंयत्परेणकृतंकिल ॥ अदत्तंकेनमार्गेणलभ्यतेवानवेतिच ॥८॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ अद त्तान्यपिपुण्यानिपापान्यपितथानरैः ॥ प्राप्यंतेकर्मणायेनतद्यथावन्निशामय ॥ ९ ॥ देशग्रामकुलानिस्यु र्भागभांजिकृतादिषु ॥ कलौतुकेवलंकर्त्ताफलभुक्पुण्यपापयोः ॥ १० ॥ अकृतेऽपिहिसंसर्गेव्यवस्थेयमु दाहृता ॥ संसर्गात्पुण्यपापानियथायांतितथाशृणु ॥ ११ ॥ एकास्यामैथुनाद्योनेरेकपात्रस्थभोजनात् ॥ फलार्द्धं प्राप्नुयान्मर्त्योयथावत्पुण्यपापयोः ॥ १२ ॥

पुण्य तथा पापको भागी होयहै ॥ १० ॥ संसर्ग न करके भी यह व्यवस्था कही गई और संसर्गसों जैसे पुण्य पाप दूसरेको मिलै हैं सो सुनो ॥ ११ ॥ एक स्थानमें बैठनेसों भोग करनेसों विवाह आदि याने संबंधसों और एक पात्रमें भोजन करनेसों मनुष्य पुण्य तथा पापको आधो फल पावैहै ॥ १२ ॥

तातें ये तीनों व्रत मोको बहुतही प्यारे हैं माघको तथा कार्त्तिकको और तैसेही एकादशीको ॥ २ ॥ वनस्पतियोंमें तुलसी और महीनेमें कार्त्तिक और तिथियोंमें एकादशी तथा क्षेत्रोंमें द्वारका मोको प्यारी है ॥ ३ ॥ इंद्रियोंको वशमें करिके जो इनको सेवन करैगो सो मोको जैसे प्यारो होयगो वैसे यज्ञादिकनसों नहीं होयगो ॥ ४ ॥ वा पुरुषको नियम करिके पापनसों भय न करनो चाहिये

तस्माद्व्रतत्रयंह्येतन्ममार्तावप्रियंकरम् ॥ माघकार्त्तिकयोस्तद्वत्तथैवैकदशीव्रतम् ॥ २ ॥ वनस्पतीनां तुलसीमासानांकार्त्तिकः प्रियः ॥ एकादशीतिथीनांचक्षेत्राणांद्वारकामम ॥ ३ ॥ एतेषांसेवनं यस्तु करोतिनियतेंद्रियः ॥ समेवल्लभतांयातिनतथायजनादिभिः ॥ ४ ॥ पापेभ्योनभयंतेनकर्त्तव्यंनियमादपि ॥ एतेषांसेवनंकान्तेकुर्वतांमत्प्रसादतः ॥ ५ ॥ सत्यभामोवाच ॥ विस्मापनीयंतन्नाथयत्त्वयाकथितंमम ॥ परदत्तेनपुण्येनकलहामुक्तिमागता ॥ ६ ॥ इत्थंप्रभावोऽयंमासःकार्त्तिकस्तेप्रियंकरः ॥ स्वामिद्रोहादिपापानिस्नानपुण्यैर्गतानियत् ॥ ७ ॥

हे प्यारी ! इन तीनोंके सेवन करनेहारे पुरुषनके पाप मेरे प्रसादसों दूरि होजाय हैं ॥ ५ ॥ सत्यभामा बोली, हे नाथ ! जो आप मोसों कही वह आश्चर्यके योग्य है कि; पराये दिये भये पुण्यसों कलहा मुक्तिको प्राप्त भई ॥ ६ ॥ या कार्त्तिक मासको ऐसो प्रभाव है और आपको ऐसो प्यारो है कि जासों स्वामीसों द्रोह आदिके पाप स्नानके पुण्यसों दूरि भये ॥ ७ ॥

पढानेसों यज्ञ करानेसों और एक पंक्तिमें भोजन करनेसों मनुष्य पुण्य और पापनके चतुर्थांश फलको परोक्षमें प्राप्त होय हैं ॥ १३ ॥ देखने और सुननेसों तैसेही मनके ध्यानसों मनुष्यको पुण्य और पापनको सौवाँ भाग प्राप्त होय है ॥ १४ ॥ और दूसरेकी निन्दा और चुगली और धिक्कार देना इन बातोंके करनेसों वाके करे भये पापोंको लेके अपने पुण्य देयहै ॥ १५ ॥ पुण्य और पापनको करतो

अध्यापनाद्याजनाद्वाप्येकपंक्त्यशनादपि ॥ तुर्यांशंपुण्यपापानांपरोक्षंलभतेनरः ॥ १३ ॥ दर्शनश्रवणाभ्यांचमनोध्यानात्तथैवच ॥ परस्यपुण्यपापानांशतांशंप्राप्नुयान्नरः ॥ १४ ॥ परस्यनिंदांपैशुन्यंधिक्कारंचकरोतियः॥ तत्कृतंपातकंप्राप्यस्वपुण्यंप्रददातिसः ॥ १५ ॥ कुर्वतःपुण्यपापानिसेवांयःकुरुतेपरः ॥ पत्नीभृतकाशिष्येभ्योयदन्यःकोऽपिमानवः ॥ १६ ॥ तस्यसेवानुरूपंचद्रव्यंकिंचिन्नदीयते ॥ सोऽपिसेवानुरूपेणतत्पुण्यफलभाग्भवेत् ॥ १७ ॥

भयो जो पुरुष है ताकी सेवा स्त्री नौकर तथा शिष्य इनको छोडिके और दूसरो मनुष्य करैहै ॥ १६ ॥ और वाकी सेवाके अनुरूप वाको कुछ धन न दियो जाय तो वह मनुष्य सेवाके अनुरूप वाके पुण्यमें अंशभागी होय है ॥ १७ ॥

एक पंक्तिमें भोजन करनहारे मनुष्यनमें जो परोसनेका उल्लघन करैहै अर्थात् नहा परोसैहै तौ वह उल्लंघन कियो मनुष्य वाके पुण्यके छठे भागको प्राप्त होय है ॥ १८ ॥ स्नान तथा संध्या आदि करनेमें कोई जो छूले अथवा बातचीत करे तो वह करनेहारो मनुष्य अपने शुभकर्मको छठो भाग वाको निश्चय देय है ॥ १९ ॥ जो पुरुष धर्मके निमित्त दूसरे मनुष्यसों धनकी याचना करे है तौ वह

एकपंक्त्यश्नतांयस्तुलंघेतपरिवेषणम् ॥ तत्पुण्यस्यषडंशंतुलभेद्यस्तुविलंघितः ॥ १८ ॥ स्नानसंध्यादिकंकुर्वन्यःस्पृशेद्वायभाषते ॥ तत्पुण्यकर्मषष्ठांशंदद्यात्तस्मैसुनिश्चितम् ॥ १९ ॥ धर्मोद्देशेनयद्द्रव्यमपरंयाचतेनरः ॥ तत्कर्मजंयस्यधनंतस्यदत्त्वाप्नुयात्फलम् ॥ २० ॥ अपहृत्यपरद्रव्यंपुण्यकर्मकरोतियः ॥ कर्मकृत्पापभाक्तत्रधनिनस्तद्भवंफलम् ॥ २१ ॥ नापकृत्यऋणंयस्तुपरस्यम्रियतेनरः ॥ धनीतत्पुण्यमाप्नोतितद्धनस्यानुरूपतः ॥ २२ ॥

वाहि धन देके वाके कर्मके फलको प्राप्त होय है ॥ २० ॥ पराई द्रव्यको लेके जो कोई पुण्य कर्म करे है तौ कर्म करनहारो पापभागी होय है और धनवालेको कर्मको फल मिलै है ॥ २१ ॥ और जो मनुष्य दूसरेके ऋण दिये विना मृत्युको प्राप्त होय है तौ वह अपने धनके अनुरूप धनीको पुण्य ग्रहण करले है ॥ २२ ॥

बुद्धिको देनहारो अर्थात् सिखावनहारो और सलाह देनहारो वा कर्मकी सामग्री देनहारो और प्रेरणा करनहारो मनुष्य पुण्य पापके छठे भागको प्राप्त होय है ॥ २३ ॥ प्रजाके पुण्यपापको छठो भाग राजा पावै है तैसेही शिष्यसों गुरु स्त्रीसों पति पुत्रसों पिता छठो भाग पावै है ॥ २४ ॥ अपने पतिक पुण्यको आधो भाग स्त्री पावै है जो उसकी आज्ञामें रहनहारी और प्रसन्न करनहारी

बुद्धिदातानुमंताचयश्चोपकरणप्रदः ॥ प्रेरकश्चापिषष्ठांशंप्राप्नुयात्पुण्यपापयोः ॥२३॥ प्रजाभ्यःपुण्यपापानां राजाषष्ठांशमुद्धरेत् ॥ शिष्याद्गुरुःस्त्रियोभर्तापितापुत्रात्तथैवच ॥ २४ ॥ स्वपत्युरपिपुण्यस्ययोषिदर्द्धमवाप्नुयात्॥चेत्तस्यानुव्रतासास्याद्भर्तुः संतुष्टिकारिणी ॥२५॥ परहस्तेनदानानिकुर्वतःपुण्यकर्मणः॥ विनाभृत्यकपुत्राभ्यांकर्तापष्ठांशमुद्धरेत् ॥ २६ ॥ वृत्तिदोवृत्तिसंभोक्तुःपुण्यंषष्ठांशमुद्धरेत्॥आत्मनोवापरस्यापियादिसेवांनकारयेत् ॥ २७ ॥

होय तो अन्यथा नहीं भाग पावैगी ॥ २५ ॥ जो पुण्यात्मा पुरुष पराये हाथसों दान करैहै तौ नौकर और पुत्रको छोडिकै करनहारो छठो भाग पावै है ॥ २६ ॥ जीविका देनहारो वाके खानहारके पुण्यको छठो भाग पावै है जो अपनी वा औरकी सेवा न करावै तौ अन्यथा नहीं ॥ २७ ॥

ऐसे विना दियेहू पराये इकट्ठे करे भये पुण्य पाप मिले हैं परन्तु कलियुगमें यह नियम नहीं करनो चाहिये काहेसों कि कर्त्ता ही पुण्य पापको भोगे है ॥ २८ ॥ यामें पहिले व्यतीत भयो बहुत उग्र इतिहास पवित्र और मतिको देनहारो है ॥ २९ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायां कार्त्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५ ॥ श्रीकृष्ण बोले, पहले उज्जैन नगरीमें ब्राह्मणकर्मसों रहित और पापयुक्त है कर्म जाके और अत्यन्त दुष्ट है बुद्धि जाकी ऐसो धनेश्वर नाम कोई एक ब्राह्मण

इत्थंह्यदत्तान्यपिपुण्यपापान्यायांतिनित्यंपरसंचितानि॥कलौत्वयंवैनियमोनकार्यःकर्त्तैवभोक्ताखलुपुण्यपापयोः ॥ २८ ॥ शृणुष्वचास्मिन्नितिहासमुग्रंपुराभवंपुण्यमतिप्रदंच ॥२९॥ इति श्रीपद्मपुराणेकार्त्तिकमाहात्म्ये पंचविंशोऽध्यायः ॥ २५॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ पुराऽवंतीपुरेकश्चिद्विप्रआसीद्धनेश्वरः॥ ब्रह्मकर्मपरिभ्रष्टःपापकर्मासुदुर्मतिः ॥१॥ रसकंबलचर्माद्यैःसोऽसत्यानृतवृत्तिकः ॥ स्तेयवेश्यासुरापानयुक्तःसंत तमानसः॥२॥देशाद्देशान्तरंगच्छन्क्रयविक्रयकारणात्॥माहिष्मतींपुरीमागात्कदाचित्सधनेश्वरः॥३॥

होत भयो ॥ १ ॥ वह रस कंबल चर्म आदिको करिके वाणिज्यकी जीविका करै हो और चोरी वेश्या गमन और सुरापान इनको सदा करै हो और वाको मन सन्तापयुक्त रहतोहो ॥ २ ॥ और वह धनेश्वर ब्राह्मण खरीदने और बेचनेके निमित्त देशदेशान्तरमें फिरतो भयो माहिष्मती अर्थात् महेसरिनाम नगरीको जात भयो ॥ ३ ॥

माहिष करिके वह पहले बसाई गई ताते याको नाम माहिष्मती भयो पापनकी नाश करनहारी नर्मदा नदी नगरीको परकोटा हो रही है ॥ ४ ॥ वहां वह धनेश्वर अनेक ग्रामोंसों आये भये कार्त्तिकके व्रत करनहारेनको देखि एक महीना वहां वास करत भयो ॥ ५ ॥ वह बेचनेके कारणसों नित्य नर्मदा नदीके तीर भ्रमण करतो भयो न्हाये और जप तथा देवताओंकी पूजामें लगे भये ब्राह्मणनको

माहिषेणकृतापूर्वंतस्मान्माहिष्मतीतिसा ॥ यस्यावप्रगताभातिनर्मदापापनाशिनी ॥ ४ ॥ कार्त्तिकव्रतिनस्तत्रनानाग्रामागतान्नरान् ॥ सद्दष्वाविक्रयंकुर्वन्मासमेकमुवासह ॥ ५ ॥ सनित्यंनर्मदातीरेभ्रमान्विक्रयकारणात् ॥ ददर्शब्राह्मणान्स्नातान्जपदेवार्चनेस्थितान् ॥ ६ ॥ कांश्चित्पुराणपठतःकांश्चिच्चश्रवणेरतान् ॥ नृत्यगायनवादित्रविष्णुश्रवणतत्परान् ॥ ७ ॥ विष्णुमुद्रांकितान्कांश्चिन्मालातुलसिधासिधारिणः ॥ ददर्शकौतुकाविष्टस्तत्रतत्रधनेश्वरः ॥ ८ ॥

देखत भयो ॥ ६ ॥ कोई पुराण पढरहे हैं और कोई पुराणोंके सुननेमें लगे हैं और कोई विष्णुके नृत्य गान और बाजा आदिके सुननेमें लगे ऐसे देखत भये ॥ ७ ॥ काहूको विष्णुकी मुद्रानसों अंकित और तुलसीकी माला धारण किये भये वहां धनेश्वर कौतुकयुक्त मन होके देखत भयो ॥ ८ ॥

नित्य वहां भ्रमण करतो भयो वह धनेश्वर वैष्णवके दर्शन और स्पर्शन संभाषणसों विष्णुके नामको जो स्मरण है ताहि प्राप्त होत भयो ॥ ९ ॥ ऐसे एक मास स्थित वह धनेश्वर करी जाती भई कार्त्तिकको उद्यापनविधिको और भक्तिसहित जो हरिको जागरण है ताहि देखत भयो ॥ १० ॥ ता पाछे पौर्णमासीको ब्राह्मण और गौको पूजन आदि जो है ताहि और व्रत करनहारे पुरुषनकी दी

नित्यंपरिभ्रमंस्तत्रदर्शनस्पर्शभाषणात् ॥ वैष्णवानांतथाविष्णोर्नामसंस्मरणंलभन् ॥ ९ ॥ एवंमासंस्थितःसोऽथकार्त्तिकोद्यापनेविधिम् ॥ क्रियमाणंददर्शासौभक्त्याजागरणंहरेः॥ १० ॥ पौर्णमास्यांततोऽपश्यद्विप्रगोपूजनादिकम् ॥ दक्षिणाभोजनाद्यंचदीयमानंव्रतास्थितैः ॥ ११ ॥ ततोऽर्कास्तमयेचैवदीपोत्सवविधिंतदा ॥ क्रियमाणंददर्शासौप्रीत्यर्थंत्रिपुराद्विषः ॥ १२ ॥ त्रिपुराणांकृतोदाहोयतस्तस्यांशिवेनतु ॥ अतस्तु क्रियतेतस्यांतिथौभक्तैर्महोत्सवः ॥ १३ ॥

भई दक्षिणानको और भोजन आदिको देखत भयो ॥ ११ ॥ ता पीछे सूर्यके अस्त होनेके समय शिवजीको प्रसन्नताके निमित्त की भई जो दीपदानकी विधि है ताहि वह धनेश्वर देखत भयो ॥ १२ ॥ जाते उस तिथिमें शिवजी करिके त्रिपुरासुरके रचित तीनों पुरनको दाह कियो गयो है याते वा तिथिमें भक्तनकरि बडो उत्सव कियो जाय है ॥ १३ ॥

मोमें और रुद्रमें जो कोई अन्तर मानैगो वाकी संपूर्ण पुण्यकामोंकी क्रिया निस्संदेह निष्फल होजायँगी ॥ १४ ॥ ता पीछे प्रजा आदिको
देखतो भयो वह ब्राह्मण धनेश्वर भ्रमण करतो भयो ता समय वह कारे सांप करि काटो गयो और व्याकुल होके गिरत भयो ॥ १५ ॥
मनुष्य वाहि गिरो भयो देखि कृपायुक्त हो घेरि लेत भये और वा समय तुलसीयुक्त जल वाके मुखमें डारत भये ॥ १६ ॥

ममरुद्रस्ययः कश्चिदन्तरंपरिकल्पयेत् ॥ तस्यपुण्यक्रियास्सर्वानिष्फलाःस्युर्नसंशयः ॥ १४ ॥ ततःपूजा
दिकंपश्यन्बभ्रामसधनेश्वरः ॥ तावत्कृष्णाहिनादष्टोविह्वलः सपपातह ॥ १५ ॥ जनास्तंपतितंवीक्ष्यप
रिवव्रुःकृपान्विताः ॥ तुलसीमिश्रितंतोयंतन्मुखेसिषिचुस्तदा ॥ १६ ॥ अथदेहंपरित्यक्तंतंबद्ध्वायमाकिंक
राः ॥ ताडयन्तः कशाघातैर्निन्युःसंयमनींरुषा ॥ १७ ॥ चित्रगुप्तस्तुतंदृष्ट्वायमायावेदयत्तदा ॥ आबाल
त्वात्तेनपुराकर्मयद्दुष्कृतंकृतम् ॥ १८ ॥

या पीछे वाकी देह छूटि गई तब यमके दूत वाही बांधिके कोडनसों मारत भये संयमनी नाम जो यमकी पुरी है तामें क्रोधसों
ले जात भये ॥ १७ ॥ चित्रगुप्त वाहि देखिके बालकपनसों जो पहले दुष्कर्म किये हैं वा समय तिन सबनको निवेदन यमराजसों
करत भये ॥ १८ ॥

चित्रगुप्त बोले, याको बालपनसों लगायके कहीं कोई सुकृत नहीं दीखै हैं हे यमराज ! याके पापनको वर्णन एक वर्षहूँमें नहीं हो सकैगो ॥ १९ ॥ हे महाराज ! यह दुष्ट केवल पापहीकी मूर्ति दिखाई देय है ताते कल्पपर्यन्त नरकमें याहि पचानो योग्य है ॥ २० ॥ श्रीकृष्ण बोले, ता पीछे यमराज वह अपनो कालसमान अग्निरूप दिखाके क्रोधसों अपने दूतनसों वज्रके समान वचन बोलत भये ॥

चित्रगुप्तउवाच ॥ नवास्यदृश्यतेकिंचिदाबाल्यात्सुकृतं क्वचित् ॥ दुष्कृतंशक्यतेवक्तुंवर्षेणापिनभास्करे ॥ १९ ॥ पापमूर्तिरयंदुष्टःकेवलंदृश्यतेविभो ॥ तस्मादाकल्पमर्यादंनिरयेपरिपच्यताम् ॥ २० ॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ वज्रतुल्यंवचः क्रोधाद्यमःप्राहस्वकिंकरान् ॥ दर्शयन्नात्मनोरूपंतच्चकालाग्निसंनिभम् ॥ ॥ २१ ॥ यमउवाच भोःप्रेतपतयस्त्वेनंवध्यमानंस्वमुद्गरैः ॥ कुंभीपाकेक्षिपेच्चासौदुष्टःकल्मषदर्शनः ॥ ॥ २२ ॥ ततोमुद्गरनिर्भिन्नमूर्द्धानंप्रेतपानयत् ॥ कुंभीपाकेचतंक्षिप्त्वातैलक्कथनशब्दिवे ॥ २३ ॥

॥ २१ ॥ हे प्रेतपतियो ! याहि अपने मुद्गरनसों मारत भये कुंभीपाक नाम नरकमें डारो यह दुष्ट है और याको पापरूप दर्शन है ॥ २२ ॥ ता पीछे मुद्गरसों फोरो गयो है मस्तक जाको ऐसे वा धनेश्वरको प्रेतपति लेके तेलके औटनेको हैं चिराचिराहट जामें ऐसे कुम्भीपाक नरकमें डारत भयो ॥ २३ ॥

वा कुम्भीपाकमें वा धनेश्वरके डारतेही वाकी अग्नि ऐसी शीतलताको प्राप्त होगई जैसे पहले प्रह्लादके डारनेसों भई थी ॥ २४ ॥ यह बडा आश्चर्य देखिके प्रेतपति विस्मययुक्त हो वह आयके वा समय वह सब यमसों कहत भये ॥ २५ ॥ यमराज तौ प्रेतपति करिके निवेदन कियो जो कौतुक है ताहि सुनिके आः यह कैसी बात है ऐसे कहि वाहि बुलाके विचार करत भये ॥ २६ ॥ तबहीं

यावत्क्षिप्तश्चतत्रासौतावच्छीतलतांययौ ॥ कुंभीपाकेयथावह्निःप्रह्लादक्षेपणात्पुरा ॥ २४ ॥ तद्दृष्ट्वामहदाश्चर्यंप्रेतपाविस्मयान्विताः ॥ वेगादागत्यतत्सर्वंयमायावेदयंस्तदा ॥ २५ ॥ यमस्तुकौतुकंदृष्ट्वाप्रेतपैश्चनिवेदितम् ॥ आःकिमेतदितिप्रोच्यतमानीयव्यचारयत् ॥२६॥ तावदभ्यागतस्तत्रनारदः प्राहसत्वरम् ॥ यमेनपूजितः सम्यक्तंदृष्ट्वावाक्यमब्रवीत् ॥ २७ ॥ नारदउवाच ॥ नैवायंनिरयान्भोक्तुमर्होह्यरुणनंदन ॥ यस्मादंतेस्यसंजातंकर्मयन्निरयापहम् ॥ २८ ॥

वहां आये भये और यमराज करि भली भांति पूजे भये नारद मुनि वाहि देखि हँसिके वचन बोलत भये ॥ २७ ॥ हे अरुणनंदन ! यह नरक भोगन योग्य नहीं है जात याको नरक दूरि करनहारो कर्म भयो है ॥ २८ ॥

जो मनुष्य पुण्य करनहारे मनुष्यनको दर्शन और स्पर्श उनसों संभाषण करै हैं तो वह दर्शन आदिको करनहारो मनुष्य पुण्य कर्म करनहारेके पुण्यमेंसे छठो भाग निश्चय करि पावै है ॥ २९ ॥ और धनेश्वरने तो अगनित कार्त्तिकव्रत करनहारे मनुष्यनसों महीना-भरि संसर्ग कियो है ताते उनके पुण्यमें यह अंशको भागी है ॥ ३० ॥ उनकी परिचर्या करनहारो यह, संपूर्ण व्रतनके अंशको

यःपुण्यकर्म्मिणांकुर्याद्दर्शनस्पर्शभाषणम् ॥ ततःषडंशमाप्नोतिपुण्यस्यानियतंनरः॥२९॥संख्यातीतैस्तु संसर्गकृतवान्वैधनेश्वरः ॥ कार्त्तिकव्रतिभिर्मासंतेषांपुण्यांशभागयम् ॥ ३० ॥ परिचर्याकरस्तेषांसंपूर्णव्रतभागयम् ॥ अतऊर्ज्जव्रतोद्भूतपुण्यसंख्यानविद्यते ॥३१॥ कार्तिकव्रतिनांपुंसांपातकानिमहान्त्यपि॥ प्रदहन्नात्ममहसाविष्णुःसद्भक्तवत्सलः ॥ ३२ ॥ अंतेचनर्मदातोयैस्तुलसीमिश्रितैस्त्वयम् ॥ वैष्णवैः स्नापितोविष्णोर्नामसंश्रावितोऽपिच ॥ ३३ ॥

भागीहै याही कार्तिकके व्रतसों उत्पन्न भयो जो पुण्य है ताकी संख्या नहीं है ॥ ३१ ॥ कार्तिकव्रत करनहारे पुरुषनके बडे भारीहू पापनको भक्तवत्सल भगवान् अपने तेजसों भस्म करिदेत है ॥ ३२ ॥ और अंत समयमें यह धनेश्वर वैष्णवनसे तुलसीदलन करि मिले भये नर्मदाके जलसों स्नान करायो गयोहै ॥ ३३ ॥

तातें दूरि होगये हैं पाप जाके ऐसो यह धनेश्वर उत्तम गति पानेके योग्य है वैष्णवोंको वाके ऊपर अनुग्रह हैं यातें यह नरकमें पचाने योग्य नहीं है ॥ ३४ ॥ जैसे गीले सूखें पापों करि नरक भोगना निकटवर्ती होता है ऐसेही सुकृत करके स्वर्गकी निकटता प्राप्त होती है ॥ ३५ ॥ तातें नहीं है आर्द्र पुण्य जाके ऐसो यक्षयोनिमें स्थित यह पापोंके भोगके दिखलानेवाले नरकोंको देखिके मुक्ति

तस्मान्निर्गतपापोऽयंसद्गतिंप्राप्तुमर्हति ॥ वैष्णवानुग्रहीकस्मान्निरयेनैवपच्यताम् ॥३४॥ आर्द्रशुष्कैर्यथा पापैर्निरयेभोगसन्निधिः ॥ प्राप्यतेसुकृतैस्तद्वत्स्वर्गस्यसान्निधिस्तदा॥३५॥तस्मादनार्द्रपुण्योहियक्षयोनि स्थितस्त्वयम् ॥ विलोक्यानिरयान्सर्वान्पापभोगप्रदर्शकान् ॥३६॥ श्रीकृष्णउवाच॥इत्युक्त्वागतवतिना रदः ससौरिस्तद्वाक्यश्रवणविबुद्धतत्सुकर्मा ॥ तंविप्रंपुनरनयतस्वाकिंकरेणतान्सर्वान्निरयगणान्प्रदर्शयि ष्यन् ॥ ३७ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्त्तिकमाहात्म्ये धनेश्वरोपाख्याने षड्विंशोऽध्यायः ॥ २६ ॥

पावै ॥ ३६ ॥ श्रीकृष्ण बोले, ऐसे कहिके जब नारद चले गये तब नारदके वचनोंके सुननेसों जाने हैं वा धनेश्वरके सुकर्म जिन्होंने ऐसे सूर्यके पुत्र यमराज अपने दूतके द्वारा वा ब्राह्मणको नरक दिखानेकी इच्छासों फिर बुलावत भये ॥ ३७॥ इति श्रीमत्पं- डित रमसुखतनयश्रीपंडितकेशवप्रसादशर्माद्विवेदिविरचितायां कार्तिकमाहात्म्यभाषाटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां षड्विंशोऽ- ध्यायः ॥ २६ ॥

श्रीकृष्ण बोले, ता पीछे यमकी आज्ञा करनहारो प्रेतपति है सो सब नरकनके दिखानेकी इच्छासों धनेश्वरको लेजायके वचन बोलत भयो ॥ १ ॥ प्रेतपति बोलो, हे धनेश्वर! ये जो भयावने नरक हैं तिन्हें देखो जिनमें पापी पाप करनहारो मनुष्य यमके दूतन करि पचाये जाय हैं ॥ २ ॥ भयानक है दर्शन जाको ऐसो यह तत्तवालुक नाम नरक है जामें अंत समय जली है देह

श्रीकृष्णउवाच ॥ ततोधनेश्वरंनीत्वानिरयान्प्रेतपोऽब्रवीत् ॥ दर्शयिष्यंस्तुतान्सर्वान्यमानुज्ञाकरस्तदा ॥ ॥ १ ॥ प्रेतउवाच ॥ पश्येमान्निरयान्घोरान्धनेश्वरमहाभयान् ॥ येषुपापकरानित्यंपच्यंतेयमकिङ्करैः ॥ २ ॥ तत्तवालुकनामायंनिरयोघोरदर्शनः ॥ यस्मिन्नतेदग्धदेहाः क्रंदंतेपापकारिणः ॥३॥ अतिथीन्वैश्वदेवान्तेक्षुत्क्षामानागतांश्चये ॥ न पूजयंतितेह्येतेपच्यंतेस्वेनकर्मणा ॥४॥ गुर्वग्नीन्ब्राह्मणान्गाश्चवेदान्मूर्द्धाभिषिक्तकान् ॥ ताडयंतिपदायेवैतेनिर्दग्धांघ्रयस्त्विमे ॥ ५ ॥

जिनकी ऐसे पापी चिल्लाय रहेहैं ॥ ३ ॥ बलिवैश्वदेव कर्मके अंतमें अर्थात् भोजन समय क्षुधासे पीडित आये भये अभ्यागतका पूजन नहीं करते हैं वे यहां नरकमें अपने कर्मकरिके पचाये जायहैं ॥ ४ ॥ गुरु अग्नि ब्राह्मण गौ वेद और क्षत्रियको जो पादसों ताडन करे हैं वे ये मनुष्य जरे भये पांवनके हैं ॥ ५ ॥

या नरकके छः भेद हैं यह नानाप्रकारके पापनसों मिलै है तैसेही अंधतामिस्रनाम यह दूसरा बडा नरक है ॥ ६ ॥ देखो सुईके समान पैने हैं मुख जिनके और घोर हैं मुख जिनके ऐसे तमोतक्यादि कीडों कारिके पापी मनुष्यनके देह भेदन कियेजायहैं ॥ ७ ॥ यह भी छः प्रकारको है कुत्ते गीध आदि पक्षियों कारिके पराये ममेक भेदन करनेवाले पापी पचाये जाते हैं ॥ ८ ॥ तीसरो यह क्रकचनाम

षड्भेदस्त्वेषनिरयोनानापापैःप्रपद्यते ॥ तथैवांधतामिस्रोऽयंद्वितीयोनिरयोमहान् ॥ ६ ॥ पश्यसूचीमुखै र्देहाभिद्यंतेपापकर्मणाम् ॥ कृमिभिर्घोरवक्त्रैश्चतमोतक्यादिभिर्द्विज ॥७॥ असावपिस्थितःषोढाश्वगृध्रपक्षि भिस्तथा ॥ परमर्मभिदोमर्त्याःपच्यंतेतेषुपापिनः ॥८॥ तृतीयःक्रकचोह्येषनिरयोघोरदर्शनः ॥ यत्रेमेक्र कचैर्मर्त्याः पच्यंतेपापकारिणः ॥९॥ असिपत्रवनाद्यैश्चषट्प्रकारोऽप्ययंस्थितः ॥ पत्नीपुत्रादिभिर्येतुवियो गंप्रापयंतिहि ॥१०॥ इष्टैरन्यैरपि नरान्पच्यंतेतइमेनराः ॥ असिपत्रैश्छिद्यमानावृकभीत्यापलायिताः ॥११॥

घोरदर्शन नरक है जामें ये पापी मनुष्य क्रकच जो आरा है तिसकरिके चीरे जाय हैं ॥ ९ ॥ यह क्रकचनाम हू नरक असिपत्रवनादिक भेदनसों छः प्रकारको है जामें ये मनुष्य स्त्री पुरुष आदिकनको वियोग कराय देयहैं वे पचाये जाय हैं ॥ १० ॥ और प्यारी वस्तुसे तथा औरनसे वियोग करावे हैं वे मनुष्य पचाये जांय हैं ॥ ११ ॥

असिपत्र अर्थात् खड्गन कारिके काटे गये और भेडियेके भयसूं भागे भये इतउत चिल्लाते भये पापी मनुष्य पचाये जायहैं अर्गल नाम यह महाघोर चौथो नरक है ॥ १२ ॥ देखो नाना प्रकारकी फांसियोंसों बांधिके यमदूत ताडना देरहेहैं याकोभी मारनेके भेदनसों छः भेद हैं ॥ १३ ॥ कूटशाल्मलि नाम पांचवें नरकको देखो जामें अंगारोंके समान सेमलकेसे कांटे हो रहे हैं ॥ १४ ॥ जामें पराई

पच्यंतेपापिनःपश्यक्रंदमानाइतस्ततः ॥ अर्गलाख्यो महारौद्रश्चतुर्थोनिरयोह्ययम् ॥ १२ ॥ पश्यनाना विधःपाशैराबध्ययमकिंकरैः ॥ असावपिचषड्भेदोवधोवेदादिभिःस्मृतः ॥१३॥ कूटशाल्मलिनामानंनि रयं पश्यपंचमम् ॥ यत्रांगारनिभाह्येताःशाल्मलीलोमसन्निभाः ॥ १४ ॥ यत्रयोढाभिपच्यंतेयातनाभिरि मेजनाः ॥ परदारपरद्रोहपरद्रव्यरताश्चये ॥ १५ ॥ रक्तपूयमिमेपश्यषष्ठंनिरयमुल्बणम् ॥ अधोमुखा विपच्यंते यत्रपापकृतोनराः ॥ १६ ॥

निन्दा पराये द्रोहके करनहारे और पराई द्रव्यके लेनहारे ये जन यमकी यातनाओंसे छः प्रकारकरिके पचाये जातेहैं ॥ १५ ॥ रक्तपूय अर्थात् जामें रुधिर और पीब भरोहै ऐसे इस छठे उल्बण नरकको देखो जामें पापी मनुष्य नीचे मुहको करिके लटकाये जाते हैं ॥ १६ ॥

जे अभक्ष्य वस्तुओंके खानेहारे हे जे निन्दा तथा चुगुली करनेमें तत्पर रहे हैं वे मर्दन करे जाने और मारे जाने पर बडे भयानका शब्दनको कर रहेहैं ॥ १७ ॥ यह भी दुर्गन्ध आदिसों छः प्रकारको है और घोरहै दर्शन जाको ऐसो यह सातवों कुम्भीपाक नाम नरक है ॥ १८ ॥ हे धनेश्वर ! यह तैल आदि वस्तुओं करके छः प्रकारको है ताहि तुम देखो यामें महापातकी नर यमदूतनकरिके दंड

अभक्ष्यभक्षकानिन्दापैशुन्याभिरताइमे ॥ भज्यमानावध्यमानाःक्रंदंतेभैरवान्नवान् ॥ १७ ॥ षट्प्रकारो विगंधाद्यैरसावपिहिसंस्थितः ॥ कुंभीपाकः सप्तमोऽयंनिरयोघोरदर्शनः ॥१८॥ षोढातैलादिभिर्द्रव्यैर्धने श्वरविलोकय ॥ महापातकिनोयत्रपीडचन्तेयमकिंकरैः ॥ १९॥ बहून्यब्दसहस्राणिभुंजंतेयमयातनाः॥ चत्वारिंशन्मितानेतान्द्व्यधिकान्पश्यरौरवान् ॥ २० ॥ अकामात्पातकंशुष्कंकामादार्द्रमुदाहृतम् ॥ आर्द्रशुष्कादिभिः पापैर्द्विप्रकारानवस्थितान् ॥ २१ ॥

दिये जाते हैं अर्थात् तैल आदिमें औटाये जातेहैं ॥ १९ ॥ बहुतसी हजारों वर्षपर्यंत इनमें प्राणी यमकी यातनाओंको भोगेहैं दो ऊपर चालीस याने ४२ प्रमाण जिनको ऐसे जो ये रौद्रनरक हैं तिनको देखो ॥ २० ॥ विना कामनाके जो होय है वह सूखो कहावै है और जो कामनासों होय है वह आर्द्र अर्थात् गीला कहा जायह ऐसे गीले और सूखेके भेदोंसे पाप दो प्रकारके हैं ॥ २१ ॥

चौरासीकी गिन्तीमें नरकोंके जुदे २ भेद हैं अप्रकीर्ण पांक्तेय मालिनीकरण तैसीही जातिभ्रंशकर और उपपातक नाम हैं जाको सो और अतिपाप महापाप ये सात प्रकारके पाप हैं इन सातोंकरिके सात नरकमें पचायेजाते हैं ॥ २२ ॥ २३ ॥ और तुम्हारो जो कार्तिक व्रत करनहारे पुरुषनसों संसर्ग भयो ताके पुण्यसमूहसों तुमकारिके नरक दूरि करेगये ॥ २४ ॥ २५ ॥ श्रीकृष्ण बोले, ऐसे नरकनको

चतुराशीतिसंख्याकैः पृथग्भेदानवस्थितान् ॥ अप्रकीर्णंतुपांक्तेयंमलिनकिरणंतथा ॥२२॥ जातिभ्रंशकरंतद्वदुपपातकसंज्ञकम् ॥ अतिपापंमहापापंसप्तधापातकंस्मृतम् ॥ २३ ॥ एभिः सप्तसुपच्यंतेनिरयेषु यथाक्रमम् ॥ कार्त्तिकव्रातिभिःपुंभिर्यत्संसर्गोऽभवत्तव ॥२४॥ तत्पुण्योपचयात्तत्रनिर्हतानिरयाः खलु ॥ ॥ २५॥ श्रीकृष्णउवाच ॥ दर्शयित्वेतिनिरयान्प्रेतपस्तमथाहरत् ॥ धनेश्वरंयक्षलोकेयक्षेशोऽभूत्सतत्रह ॥ २६ ॥ धनदस्यानुगस्सोऽयंधनयक्षेतिविश्रुतः ॥ यदाख्ययाऽकरोत्तीर्थमयोध्यायांतुगाधिजः ॥२७॥

दिखायके प्रेतप वा धनेश्वरके यक्षोंके लोकमें लेजातभयो वहां वह यक्षोंको स्वामी होत भयो ॥ २६ ॥ सो यह धनेश्वर धनयक्ष या नामसों प्रसिद्ध कुबेरको अनुचर होतभयो जाके नामसों अयोध्यामें विश्वामित्र तीर्थ करत भये ॥ २७ ॥

ऐसो है प्रभाव जाको ऐसो यह कार्तिकमास मुक्तिको देनहारो और करनहारो है जाते अनेक पापनको करनहारोहू मनुष्य कार्तिक व्रत करनहारेके दर्शनसों मुक्तिको प्राप्त होइहै ॥ २८ ॥ इति श्रीमत्पंडितपरमसुखतनयश्रीपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायां कार्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायां सप्तविंशोऽध्यायः ॥ २७ ॥ सूत बोले, वासुदेव अति प्यारी सत्यभामासों या

एवंप्रभावःखलुकार्तिकेयोमुक्तिप्रदोभुक्तिकरश्चयस्मात् ॥ योहंत्यनेकार्जितपातकानिकर्तुश्चसंदर्शनतो ऽपिमुक्तिम् ॥ २८ ॥ इति श्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये सप्तविंशोऽध्यायः ॥२७॥ सूतउवाच॥इत्युक्त्वावासुदेवोऽसौसत्यभामामातिप्रियाम् ॥ सायंसंध्याविधिंकर्तुंजगामचनिजंगृहम् ॥ १ ॥ एवंप्रभावः प्रोक्तोऽयं कार्तिकः पापनाशनः ॥ विष्णुप्रियकरोऽत्यन्तंभुक्तिमुक्तिफलप्रदः ॥ २ ॥

प्रकार कहिके सायंकालकी संध्याकी जो विधि ताके करनेको अपने घर जात भये ॥ १ ॥ ऐसो है प्रभाव जाको और पापको नाश करनहारो कार्तिक मास मैंने तुमसों कहो यह कार्तिकमास विष्णुभगवान्की प्रीतिको करनहारो है और भुक्तिमुक्तिरूपी जो फल है ताको देनहारो है ॥ २ ॥

हरिको जागरण करना और प्रातःकाल स्नान करना तुलसीका सेवन करना और दीपदान करना ये कार्त्तिकके व्रत हैं ॥ ३ ॥ ये पूर्व कहे भये जो पांच प्रकारके व्रत हैं तिनसों जो व्रत प्राप्त होय है वह भुक्ति तथा मुक्तिको देनहारो है ॥ ४ ॥ ऋषि बोले, विष्णुको प्यारो अत्यंत फलको देनहारो और सुननेसों रोमांचित करनहारो विस्मययुक्त यह कार्त्तिकमासको इतिहास आपने वर्णन कियो

हरिजागरणंप्रातःस्नानंतुलसिसेवनम् ॥ उद्यापनंदीपदानंव्रतान्येतानिकार्तिके ॥ ३ ॥ पंचकैर्व्रतकैरेभिः संपूर्णंकार्तिकव्रतम् ॥ फलमाप्नोतितत्प्रोक्तंभुक्तिमुक्तिफलप्रदम् ॥ ४ ॥ ऋषयऊचुः ॥ विष्णुप्रियोऽति फलदः प्रोक्तोऽयंरोमहर्षणः ॥ कार्त्तिकप्रभवस्सम्यक्सेतिहासोऽतिविस्मितः ॥५॥ अवश्यंचतथाकार्यः पापदुःखनिवृत्तये ॥ मोक्षार्थिभिर्नरैः सम्यग्भोगकामैरथापिवा ॥ ६ ॥ एवंस्थितोयदाकश्चिद्व्रतस्थस्संकटेस्थितः ॥ दुर्गारण्यस्थितोवापिव्याधिभिःपरिपीडितः ॥ ७ ॥

॥ ५ ॥ यह कार्त्तिकमासको व्रत पापोंके तथा दुःखके दूर करनेके लिये मोक्षके चाहनेवाले तथा भोगोंके चाहनेवाले पुरुषनकरिके अवश्य करने योग्य है ॥ ६ ॥ ऐसे व्रतस्थित कोई मनुष्य संकटमें परिजाय अथवा कठिन वनमें स्थित होय अथवा रोगनकरिके पीडित होय ॥ ७ ॥

तो वा मनुष्य करिके यह शुभकार्तिकका व्रत कैसे कियो जाय जातें अत्यंत फलको देनहारो यह व्रत मनुष्यन करिके सर्वथा नहीं त्याग करने योग्य है ॥ ८ ॥ सूत बोले, ऐसे सदा दृढव्रत करनहारो पुरुष जो अपवित्रमें परिजाय तो विष्णु वा शिवके मंदिरमें हरिको जागरण करे ॥ ९ ॥ जो शिव अथवा विष्णुकोहू मंदिर न होय तो काहू देवताके स्थानमें करै जो काठिनवनमें स्थित होय वा आप-

कथंतेनप्रकर्त्तव्यंकार्त्तिकव्रतकंशुभम् ॥ इदमत्यंतफलदंनत्याज्यंसर्वथानरैः ॥८॥ सूतउवाच ॥ एवमा पद्गतोयस्तुनरोनित्यंदृढव्रतः ॥ विष्णोःशिवस्यवाकुर्यादालयेहरिजागरम् ॥ ९ ॥ शिवविष्णुगृहाभावेस र्वदेवालयेष्वपि ॥ दुर्गाटव्यांस्थितो यस्तुयादिवापद्गतोभवेत् ॥ १० ॥ कुर्यादश्वत्थमूलेतुतुलसीनांवनेष्व पि ॥ ११ ॥ विष्णुनामप्रबंधानांगायनंविष्णुसंनिधौ ॥ गोसहस्रप्रदानेतत्फलमाप्नोतिमानवः ॥ १२ ॥ वाद्यकृत्पुरुषश्चापिवाजपेयफलंलभेत् ॥ सर्वतीर्थावगाहोत्थंनर्त्तकःफलमाप्नुयात् ॥ १३ ॥

त्तिमें होय ॥ १० ॥ तो पीपलके नीचे अथवा तुलसीके वनमें जागरण करे ॥ ११ ॥ विष्णुके समीप विष्णुके नामोंके प्रबन्धको गान करनेसों मनुष्य हजार गोदानके फलको प्राप्त होय है ॥ १२ ॥ बाजा बजानेवालो पुरुष वाजपेय यज्ञके फलको प्राप्त होय है और नाचनहारो संपूर्ण तीर्थनको स्नान है ताके फलको प्राप्त होय है ॥ १३ ॥

जो आपत्तिमें परो भयो मनुष्य कहूँ जल न पावै अथवा रोगी होय विष्णुके नामसों मार्जन करै ॥ १४ ॥ जो व्रतमें स्थित मनुष्य उद्यापनविधि करनेको न समर्थ होय तौ व्रतके पूरे होनेके लिये पीछे ब्राह्मणोंको जिमावे ॥ १५ ॥ पृथ्वीमें ब्राह्मण जो अव्यक्त रूप भगवान् हैं तिनको स्वरूप हैं ताते ब्राह्मणोंके संतुष्ट होनेसों भगवान् सदा संतुष्ट होय हैं ॥ १६ ॥ यामें सन्देह नहीं है जो दीपदान

आपद्गतो यदाप्यंभोनलभेत्कुत्रचिन्नरः ॥ व्याधितोवायथाकुर्याद्विष्णोर्नाम्नापिमार्जनम् ॥ १४ ॥ उद्यापनविधिंकर्तुमशक्तोयोव्रतेस्थितः ॥ ब्राह्मणान्भोजयेत्पश्चाद्व्रतसम्पूर्तिहेतवे ॥ १५ ॥ अव्यक्तरूपिणो विष्णोः स्वरूपोब्राह्मणोभुवि ॥ तत्संतुष्ट्यातुसंतुष्टः सर्वदास्यान्नसंशयः ॥ १६ ॥ अशक्तोदीपदानायपरदीपंप्रबोधयेत् ॥ तस्यवारक्षणंकुर्याद्वात्यादिभ्यःप्रयत्नतः ॥ १७ ॥ अभावेतुलसीनांचवैष्णवंपूजयेद्द्विजम् ॥ तस्मात्सन्निहितोविष्णुस्स्वभक्तेष्वेवसर्वदा ॥ १८ ॥

करनेको असमर्थ होय तो दूसरेके दीपकको चैतन्य करदे वा बबूले आदिसों उसकी रक्षा यत्नसों करै ॥ १७ ॥ जो तुलसीपूजन करनेको न मिले तौ वैष्णव ब्राह्मणको पूजन करै काहेसे कि विष्णु अपने भक्तनके सदा निकट रहे हैं ॥ १८ ॥

इन सबनके अभावमें ब्राह्मणको और गौअनको पूजन व्रती करै अथवा व्रतके पूरण होनेके निमित्त पीपल और बडको पूजन करै ॥ १९ ॥ ऋषि बोले, तुमने पीपल और बड कैसे गौ और ब्राह्मणनके समान कीन्हे सबरे वृक्षनमें वे दोनों काहेसे अधिक पूजने योग्य हैं ॥ २० ॥ सूत बोले, पीपलका रूप भगवान् विष्णु है यामें सन्देह नहीं है और रुद्रका रूप बड है तैसेही ब्रह्माका रूप धारण

सर्वाभावेव्रतीकुर्याद्ब्राह्मणानांगवामपि॥सेवामश्वत्थवटयोव्रतपूरणहेतवे ॥ १९॥ ऋषयऊचुः ॥ कथंत्वया श्वत्थवटौ गोब्राह्मणसमौकृतौ ॥ सर्वेभ्यस्तुतरुभ्यस्तौकस्मात्पूज्यतरौस्मृतौ ॥ २० ॥ सूतउवाच ॥ अ श्वत्थरूपीभगवान्विष्णुरेवनसंशयः ॥ रुद्ररूपीवटस्तद्वत्पालाशोब्रह्मरूपधृक् ॥ २१ ॥ ऋषयऊचुः कथंवृक्षत्वमापन्नाब्रह्मविष्णुमहेश्वराः॥एतत्कथयधर्मज्ञसंशयोऽत्रमहान्हिनः ॥ २२ ॥ सूतउवाच ॥ पार्व तीशिवयोर्देवाः सुरतंकुर्वतोःकिल ॥ अग्निर्ब्राह्मणरूपेणगतश्चविघ्नकृत्पुरा ॥ २३ ॥

करनहारो ढाक है ॥ २१ ॥ ऋषि बोले, ब्रह्मा और शिव वे कैसे वृक्षपनको प्राप्त भये हे धर्मज्ञ ! यह कहो यामें निश्चय करिके हमको बडा सन्देह है ॥ २२ ॥ सूत बोले, एक समय शिव और पार्वती भोग करि रहेहैं तब सब देवता और अग्नि ब्राह्मणको रूप धरिके जात भये और विघ्न करत भये ॥ २३ ॥

भोगके सुखमें विघ्न होनेसे क्रोधकरके कांपती भई पार्वती क्रोधित हो देवतानको शाप देत भई ॥ २४ ॥ पार्वती बोली, ये कृमि कीट आदिभी भोगके सुखको जानेहैं ताते वा भोग सुखमें विघ्न करनहारे तुम सब देवता वृक्षनके रूपको प्राप्त होउगे ॥ २५ ॥ सूत बोले, ऐसे वह पार्वती क्रोधित हो देवतानको शाप देत भई ताते निश्चय करिके सब देवतानको समूह वृक्ष होजातभये ॥ २६ ॥

ततश्च पार्वती क्रुद्धा शशाप त्रिदिवौकसः ॥ रतोत्सवसुखभ्रंशात्कंपमाना रुषा तदा ॥ २४॥ पार्वत्युवाच॥ कृमिकीटादयोऽप्येते जानंति सुरते सुखम् ॥ तद्विघ्नकारिणो देवा ह्युद्भिदत्वमवाप्स्यथ ॥२५ ॥ सूत उवाच ॥ एवं सा पार्वती देवाञ्छशाप क्रुद्धमानसा ॥ तस्माद्वृक्षत्वमापन्नास्सर्वे देवगणाः किल ॥ २६ ॥ तस्मादिमौ विष्णुमहेश्वरावुभौ बभूवतुर्बोधिवटौ मुनीश्वराः ॥ बोधिस्त्वगादार्किदिनं विनैवाऽसंस्पृश्यतामार्कजदृष्टियोगात् ॥ २७ ॥ इतिश्रीपद्मपुराणे कार्तिकमाहात्म्ये कृष्णसत्यभामासंवादो अष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८ ॥

हे मुनीश्वर ! ताते ये दोनों विष्णु और महादेव पीपल और बडको रूप होत भये और बोधि जो पीपल है सो शनैश्चरके दिनको छोडिके शनैश्चरकी दृष्टिके योगसों छूनो अयोग्य होत भयो अर्थात् शनैश्चरको पीपल छूनो चाहिये और दिनोंमें नहीं ॥ २७ ॥ इति श्रीमत्पण्डितपरमसुखतनयश्रीपण्डितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिविरचितायां कार्त्तिकमाहात्म्यटीकायां भाषार्थबोधिनीसमाख्यायामष्टाविंशतितमोऽध्यायः ॥ २८ ॥

ऋषि बोले, हे तात ! यह बोधितरु अर्थात् पीपलको वृक्ष काहेसों छूने योग्य न होत भयो और तैसेही यह शनिवारको काहेसों छूने योग्य होतभयो सो कहो ॥ १ ॥ सूतजी बोले, समुद्रके मथन करनेसों देवताननें जो रत्न पाये उनमेंसे जो देवता लक्ष्मी और कौस्तुभमणि विष्णुको देत भये ॥ २ ॥ जब वे विष्णु अपनी भार्याके अर्थ लक्ष्मीको अंगीकार करने लगे तबहीं लक्ष्मी उन चक्रपाणिसों

ऋषयऊचुः ॥ अस्पृश्यत्वंकथंप्राप्तःसूतबोधितरुस्त्वयम् ॥ स्पृश्यत्वंहिकथंयातस्तथायंशनिवासरे ॥ १ ॥
सूतउवाच ॥ समुद्रमथनाद्यानिरत्नान्यापुस्सुरोत्तमाः ॥ श्रियंचकौस्तुभंतेषांविष्णवेप्रददुःसुराः ॥ २ ॥
यावदंगीचकारासौलक्ष्मींभार्यार्थमात्मनः ॥ तावद्विज्ञापयामासलक्ष्मीस्तंचक्रपाणिनम् ॥ ३ ॥ लक्ष्मीरुवाच ॥ असंस्कृत्यकथंज्येष्ठांकनिष्ठापरिणीयते ॥ तस्मान्ममाग्रजामेतामलक्ष्मींमधुसूदन ॥ ४ ॥

प्रार्थना करत भई ॥ ३ ॥ लक्ष्मी बोली, जेठी बहिनका संस्कार अर्थात् विवाह किय विना छोटीको कैसे व्याहते हो ताते हे मधुसूदन ! मेरी बडी बहिनी अलक्ष्मीको व्याह करो ॥ ४ ॥

मेरी वडी बहिनी अलक्ष्मीको व्याह करिके पछि मोहिं ले चलो यह सनातन धर्म है। सूत बोले, या प्रकार लक्ष्मीके वचन सुनि लोकभावन भगवान् ॥ ५ ॥ वडो है तप जिनको ऐसे उद्दालक मुनिको अपने वचनके अनुरोधसों निश्चय उस अलक्ष्मीको देत भये ॥ ६ ॥ स्थूल है मुख जाको और श्वेत हैं दांत जाके जीण शरीरको धारण किये है और फटेसे हैं कुछ लाल हैं नेत्र जाके रूखे हैं शरीर

विवाह्यनयमांपश्चादेषधर्मः सनातनः ॥ सूतउवाच ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वासाविष्णुर्लोकभावनः ॥ ५ ॥
उद्दालकायमुनयेसुदीर्घतपसेतदा॥ आत्मवाक्यानुरोधेनतामलक्ष्मींददौकिल ॥ ६ ॥ स्थूलास्यांशुभ्रद
शनां जरठींबिभ्रतींतनुम् ॥ विततारक्तनयनांरूक्षगात्राशिरोरुहाम् ॥ ७ ॥ समुनिर्विष्णुवाक्यात्तामंगीकृ
त्यस्वमाश्रमम् ॥ वेदध्वानिसमायुक्तमानयामासधर्मवित्॥ ८॥ होमधूमसुगंधाढ्यंवेदघोषनिनादितम् ॥
आश्रमं तंसमालोक्यव्यथितासाब्रवीदिदम् ॥ ९ ॥

और बाल जाके ऐसी अलक्ष्मी है ॥ ७ ॥ ताही वे मुनि विष्णुके वाक्यसों अंगीकार करिके वेदध्वनि युक्त जो अपनो आश्रम है तामें वे धर्मज्ञ उद्दालक मुनि लावत भये ॥ ८ ॥ होमको धूमको सुगंधि करिके युक्त और वेदनके पढनेके हे शब्द जामें ऐसे आश्रमको देखि दुःखित हो यह वचन बोलत भई ॥ ९ ॥

ज्येष्ठा बोली, वेदध्वनिकरिके युक्त यह वास मेरे योग्य नहीं है हे महाराज ! मैं यहां नहीं आऊंगी निश्चय करि मोहिं अन्यत्र ले चलो ॥ १० ॥ उद्दालक बोले, हे कांते ! तू काहेसो नहीं आवे तेरी यही निश्चय है तो तेरे योग्य कौनसा स्थान है सो कथन कर ॥ ११ ॥ ज्येष्ठा बोली, जहां वेदनकी ध्वनि होय है और अभ्यागतनको पूजन होयहै और यज्ञ दान आदि होयहै वहां मैं नहीं वास करौं हौं

ज्येष्ठोवाच ॥ नहिवासोऽनुरूपोऽयंवेदध्वनियुतोमम ॥ नचागमिष्येभोब्रह्मन्नयस्वान्यत्रमांध्रुवम् ॥ १० ॥
उद्दालकउवाच ॥ कथंनायासिकान्तेवैवर्त्ततेसंमतंतव ॥ तवयोग्याचवसतिःकाभवेच्चवदस्वतत् ॥ ११ ॥
ज्येष्ठोवाच ॥ वेदध्वनिर्भवेद्यस्मिन्नतिथीनांचपूजनम् ॥ यज्ञदानादिकंवापिनैवतत्रवसाम्यहम् ॥ १२ ॥
परस्परानुरागेणदांपत्यंयत्रवर्तते ॥ पितृदेवार्चनंयत्रतत्रनैववसाम्यहम् ॥ १३ ॥ उद्यमीनीतिकुशलोधर्मयुक्तःप्रियंवदः ॥ गुरुपूजारतोयत्रतस्मिन्नैववसाम्यहम् ॥ १४ ॥ रात्रौदिवागृहेयस्मिन्दंपत्योःकलहोभवेत् ॥
निराशायांत्यातिथयस्तास्मिन्स्थानेरतिर्मम ॥ १५ ॥

॥ १२ ॥ जहां स्त्री और पुरुष परस्पर प्रीतिसों रहै हैं और पितृ तथा देवतानको पूजन होयहै वहां मैं नहीं वास करौं हौं ॥ १३ ॥ जहां उद्यम करनहारो नीतिमें चतुर और मधुर बोलनहारो गुरुपूजा करनहारो मनुष्य रहैहैं वहां मैं नहीं रहौं हौं ॥ १४ ॥ जा घरमें रात दिन स्त्री और पुरुषनमें कलह होयहै और अभ्यागत निराश होजाते हैं उस स्थानमें मेरी प्रीति है ॥ १५ ॥

जहां वृद्ध मनुष्योंको और सज्जनोंको अपमान होताहै और कठोर भाषण होताहै वहा मैं सदा रहती हों ॥ १६ ॥ दुराचरण करते हैं और पराई द्रव्यको हरलेते हैं और पराई स्त्रियोंसों रत रहै हैं वा स्थानमें मेरी प्रीति है ॥ १७॥ जहां सदा गोवध और मद्यपान होता है और ब्रह्महत्यादि आदि पाप होते है उस स्थानमें मेरी प्रीति है ॥ १८ ॥ सूत बोले, या प्रकार वा अलक्ष्मीके वचन सुनिके

वृद्धसज्जनामित्राणांयत्रस्यादपमाननम् ॥ निष्ठुरंभाषणंयत्रतत्रानित्यंवसाम्यहम् ॥ १६ ॥ दुराचाररता यत्रपरद्रव्यापहारिणः ॥ परदाररताश्चापिवस्मिन्स्थानेरतिर्मम ॥ १७ ॥ गोवधोमद्यपानंचयत्रसंजाय तेऽनिशम् ॥ ब्रह्महत्यादिपापानितस्मिन्स्थानेरतिर्मम ॥ १८ ॥ सूतउवाच ॥ इतितद्वचनंश्रुत्वाविषण्ण वदनोऽभवत् ॥ उद्दालकस्ततोवाक्यंतामलक्ष्मीमुवाचह॥ १९॥उद्दालकउवाच ॥ अश्वत्थवृक्षमूलेऽस्मि न्नलक्ष्मीस्त्वंस्थिराभव ॥ आवासस्थानमालोक्ययावच्चायाम्यहंपुनः ॥ २० ॥ सूतउवाच ॥ इतितां तत्रसंस्थाप्यजगामोद्दालकस्तदा ॥ प्रतीक्षंतीचिरंतत्रयावत्तंनददर्शसा ॥ २१ ॥

मलिनमुख हो ता पीछे उद्दालक उस अलक्ष्मीको बोलतभये ॥ १९ ॥ हे अलक्ष्मी ! जौलों मैं तुम्हारे रहनेको स्थान देखिके फिरि आऊं तौलों तुम या वृक्षके नीचे स्थिर रहै ॥ २० ॥ सूत बोले, ऐसे वाको वहां बैठायके तब उद्दालक चले देत भये वहां बहुत देरता ई उनको मार्ग देखती भई वह जब उनको न देखती भई ॥ २१ ॥

तब पतिके त्यागनेसों दुःखित हो शोकसों रोदन करत भई वाके उस रोदनको लक्ष्मी वैकुण्ठभवनमें सुनत भई ॥ २२ ॥ तब लक्ष्मी उद्विग्न मन होके विष्णुसों प्रार्थना करत भई ॥ लक्ष्मी बोली, हे स्वामी ! मेरी जेठी बहिन भर्ताके छोडनेसों दुःखित है ॥ २३ ॥ तौ हे दयालु ! जो मैं तुम्हारी प्यारी हों तौ तुम वाको धीरज देनेके लिये जाओ सूत बोले, ता पीछे कृपानिधि विष्णु

तदारुरोदकरुणंभर्तुस्त्यागेनदुःखिता ॥ तत्तस्यारुदितंलक्ष्मीर्वैकुंठभवनेऽशृणोत् ॥ २२ ॥ तदाविज्ञापयामासविष्णुमुद्विग्नमानसा ॥ लक्ष्मीरुवाच ॥ स्वामिन्मद्भगिनीज्येष्ठाभर्तुस्त्यागेनदुःखिता ॥ २३ ॥ तामाश्वासयितुंयाहिकृपालोयद्यहंप्रिया ॥ सूतउवाच ॥ लक्ष्म्यासहततोविष्णुस्तत्रागच्छत्कृपानिधिः ॥ २४ ॥ आश्वासयन्नलक्ष्मींतामिदंवचनमब्रवीत् ॥ विष्णुरुवाच ॥ अश्वत्थमूलमाश्रित्यसदाऽलक्ष्मिस्थिराभव ॥ २५ ॥ ममांशसंभवोह्येषआवासस्ते मयाकृतः ॥ प्रत्यब्दंयेऽर्चयिष्यंतितेत्वांज्येष्ठांगृहधर्मिणः ॥ २६ ॥

लक्ष्मीसहित वहां जात भये ॥ २४ ॥ उस अलक्ष्मीको धीरज देते हुए यह वचन बोलत भये ॥ विष्णु बोले, हे अलक्ष्मी ! तुम पीपलके मूलका आश्रय लेके सदा स्थिर रहो ॥ २५ ॥ यह निश्चय मेरे अंशसों उत्पन्न है याते मैंने तुमको यह बसनेके लिये स्थान दियो और प्रतिवर्ष जे तुम्हारो पूजन करैंगे ॥ २६ ॥

उन्होंके यहां तुम्हारी छोटी बहिन अर्थात् लक्ष्मी स्थिर होके रहैगी और स्त्रियों करिके नानाप्रकारकी भेंटैं देके सदा पूजने योग्य हो ॥२७॥ पुष्पगंध आदिसे जे तुम्हारो पूजन करैंगे तिनपर लक्ष्मी प्रसन्न होगी सूत बोले कृष्णको और सत्यभामाको और नारदको और पृथुको संवाद मैंने वर्णन कीनो ॥ २८ ॥ और जो पूछो चाहो सो मैं विस्तारसे कहौं यह उनको वचन सुनतेही ऋषि मन्दहास्य होत

तेष्वेवश्रीःकनिष्ठातेसदातिष्ठत्वनामया ॥ अंगनाभिस्सदापूज्याविविधैर्बलिभिस्तदा ॥२७॥ पुष्पधूपादिभिश्चैवतेषांलक्ष्मीः प्रसीदति ॥ सूतउ०॥ कृष्णसत्योश्चसंवादंनारदस्यपृथोस्तथा ॥२८॥ अन्यत्किंप्रष्टुकामाःस्थवदामिचसुविस्तरम् ॥ इतितद्वचनादेवऋषयःसस्मितास्तदा ॥२९॥ नोचुःपरस्परंकिंचित्तूष्णीमेवावतस्थिरे ॥जग्मुश्चबदरींद्रष्टुंसर्वेवैशांतमानसाः ॥३०॥ यइदंशृणुयाद्वापिश्रावयेद्वानरोत्तमान् ॥ सर्वपापैःप्रमुच्येतविष्णुसायुज्यमाप्नुयात् ॥३१॥ इ०प०का०कृष्णसत्यासंवादेएकोनत्रिंशत्तमोऽध्यायः ॥२९॥

भये ॥२९॥ और आपसमें कुछ न कहत भये चुपचुपातेही बैठे रहे फिर शांतमन हो सबके सब बदरीवनके दर्शनको जातभये ॥३०॥ जो यह कथाको सुनैगो वा श्रेष्ठमनुष्यनको सुनावैगो वह सब पापनसों छूटि जायगो और विष्णुकी सायुज्यको प्राप्त होयगो ॥ ३१ ॥ इति श्रीमत्पंडितकेशवप्रसादशर्मद्विवेदिकृतायांकार्तिक०टीकायांभा० बो० समाख्यायामेकोनत्रिंशोऽध्यायः ॥२९॥ समाप्तोऽयंग्रन्थः॥

इदं पुस्तकं कल्याणनगर्यां श्रीकृष्णदासात्मज-गंगाविष्णुना स्वकीये “लक्ष्मीवेंकटेश्वर” मुद्रणागारे मुद्रयित्वा प्रकाशितम् । शकाब्दाः १८४७, संवत् १९८२ ।

अत्रेयमभ्यर्थना ।

अत्रास्माकं मुद्रणालये ऋग्वेदादयो वेदा उपनिषदो वेदान्तग्रंथा महाभारतादीतिहासाः श्रीमद्भागवतादिमहापुराणोपपुराणानि धर्मशास्त्र--कर्मकाण्ड--व्याकरण--न्याय--योग--सांख्य--मीमांसादिशास्त्रीयग्रंथाः । काव्य--नाटक--चम्पूप्रभृतयो ग्रन्थाः सहस्रनामाद्यनेकस्तोत्रग्रन्थाश्च विविधभाषाग्रन्थाश्च सीसकोत्तममहल्लघ्वक्षरैर्मनोहरं मुद्रिता आसते योग्यमूल्येन विक्रय्याः सन्ति तांश्च ग्राहका यथापुस्तकसूचीपत्रं मूल्यप्रेषणेन प्राप्नुयुः । अधिकमस्मदीयसूचीपुस्तकानां भिन्नभिन्नविषयाणां प्रापणे "श्रीवेङ्कटेश्वरसमाचार-" पत्रिकाप्रापणद्वारा च ज्ञेयमिति शम् ।

खेमराज श्रीकृष्णदास-- "श्रीवेङ्कटेश्वर" स्टीम्--मुद्रणालयाध्यक्ष--मुंबई.

॥ इति पद्मपुराणोक्तं कार्त्तिकमासमाहात्म्यं भाषार्थबोधिनीटीकासमेतम् ॥